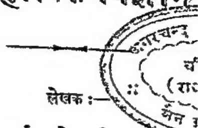
# व्यावहारिक-विज्ञान



लेखक :—

वक्तृत्वकला, अर्जुन, दो साहित्यसेवी, ह

हस्तरेखा, ध्रुव आदिके

रचयिता—

## श्रीयुत कृष्णगोपाल माथुर

'साहित्यरत्न'




प्रकाशिका—

*राजपूताना हिन्दी—साहित्य—सभा*

झालरापाटन शहर (राजपूताना)

---

ार १५००} संवत् १९७७ {मूल्य सादीका १।=)
" सजिल्दका २)



*श्रीमान् सेठ माणिकचन्दजी साहब,*

**ताजीर-उल-मुल्क, एम० आर० ए० एस०,**
**मेम्बर लेजिस्लेटिव कौंसिल, ग्वालियर स्टेट**

# समर्पण ।

झालावाड़के सुप्रतिष्ठित श्रीमान् सेठ विनोदीरामजी बालचन्दजी के फ़र्मके मालिक विद्यानुरागी, दानी, उत्साही श्रीमान् **सेठ माणिकचन्दजी** साहब, ताजीर-उल-मुल्क, एम० आर० ए० एस०, मेम्बर लेजिस्लेटिव-कौंसिल ग्वालियर स्टेटकी सेवामें यह पुस्तक उनकी कृपाके फल स्वरूप—लेखक द्वारा

**सादर समर्पित है ।**

# निवेदन ।

विज्ञानका विषय टेढ़ा है मगर साथही अत्यावश्यक भी है। विज्ञान हमारा जन्मसिद्ध बल है, और आजकलके ज़मानेमें तो बिना विज्ञानके ज्ञाता बने कामही नहीं चल सकता। संसारमें आजकल हम जो कुछ चहलपहल देख रहे हैं, वह विज्ञानहीकी करामात है। हमारे ग्रन्थोंमें पुष्पविमानोंका ज़िक्र है तथा और भी कितनीही बातें भरी पड़ी हैं, मगर उनको प्रत्यक्ष कर दिखाया पाश्चात्य विज्ञानियोंने। इस हालतको देखते हुए अगर अब भी हम विज्ञान की तरफ़से विमुख बने रहें, तो शर्म और हानिकी बात है। अतएव ज़माना कह रहा है कि अब हमको वैज्ञानिक क्षेत्रमें उतरना ही पड़ेगा।

विज्ञानाचार्य सर बोस, सर पी. सी. राय आदि दो चार विज्ञानियोंको छोड़कर अभी हम विज्ञानकी पहली सीढ़ीपर ही पड़े हुए हैं, मगर आवश्यकता है कि हम सब सीढ़ी-ब-सीढ़ी चढ़ते हुए साइन्सके उच्चतम शिखर पर पहुंचें। इसके लिये हमको साधारण ज्ञान प्राप्त करते करते उच्च ज्ञान प्राप्त करना होगा। साधारण ज्ञान प्राप्त करनेके लिये हिन्दीमें प्रायः वैज्ञानिक पुस्तकोंका अभावसा है। यह पुस्तक इन्हीं बातोंको देख कर लिखी गई है।

इसके लिखनेमें मुझे बङ्गला, गुजराती आदि भाषाओंके ग्रंथ, निबन्ध और फुटनोटोंसे सहायता लेनी पड़ी है।

सफलता कहाँतक हुई, यह कहनेका अधिकारी मैं नहीं हूं। विज्ञ पाठक स्वयम् ही इस पर विचार कर लेंगे। इन निबन्धोंमें जो त्रुटियाँ रहगई हों, उन्हें पाठक महाशय मुझको बतानेकी कृपा करें। मैं, अगले संस्करणमें उनके सुधारनेकी कोशिश करूंगा।

मैं राजपूताना हिन्दी-साहित्य-सभाके सुयोग्य मंत्री श्रीमान् सेठ लाल चन्दजी साहब सेठीका विशेष आभारी हूं,जिन्होंने प्रेस आदिकी कई झंझटें उठाकर इस पुस्तकको शीघ्रही सचित्र प्रकाशित करनेकी कृपा की और बड़े प्रेमके साथ मेरा उत्साह बढ़ाया। अपने कारोबारके कामोंसे समय निकाल कर; स्वास्थ्य अच्छा न रहने पर भी आप हिन्दीकी सेवाके लिये हिन्दी सेवियोंकी खातिरके लिये हमेशा तैयार रहते हैं। ईश्वरसे प्रार्थना है कि आपको उत्तरोत्तर वैभवशाली और सकुटुम्ब चिरायु करे। और आपसे खूब हिन्दीकी सेवा हो।

विनीत—

झालरापाटनसिटी (राजपुताना) कार्तिक पूर्णिमा, सं० १९९७ — कृष्णगोपाल-माथुर

# प्राक्कथन



र्तमानकाल वैज्ञानिक युगके नामसे प्रख्यात है। चारों ओर विज्ञानका विकाश दिखाई पड़ता है। मनुष्यने प्रकृतिकी सेवा करते करते उसपर अपना अधिकार जमा लिया है। जो भौतिक शक्तियां मनुष्यकी घातक समझी जाती थीं वही आज मनुष्यकी अनुचरी बन रही हैं। बेतारके तारने देश और कालकी सीमाओंको पार कर दिया है। लोग मंगलादि ग्रहोंसे भी संकेत विनिमय करनेका साहस कर रहे हैं। वायुयान आजकल मानवी बुद्धिकी विजयकीर्ति आकाश तक में फैला रहे हैं। सच कहा है "Knowledge is Power" ज्ञान हमारा बल है। ज्ञानहीके बलसे मनुष्य जैसे छोटेसे प्राणीने संसारको अपने वशमें कर रक्खा है।

इस वैज्ञानिकयुगमें विज्ञानके बिना हमारा काम नहीं चल सकता। इस समय जितना ज़बरदस्त वैज्ञानिक साहित्य हमारे पास हो उतनाही अच्छा है। पर खेदकी बात है कि हिन्दी भाषा में वैज्ञानिक साहित्यकी बहुत कमी है। यहांतक कि केवल हिन्दी जाननेवाले वर्त्तमान कालीन पश्चिमी वैज्ञानिकोंके अनुभवका लाभ उठानेसे भी वञ्चित रहते हैं। परन्तु हर्ष है कि अब इस जागृतिके समयमें हिन्दी भाषामें भी वैज्ञानिक साहित्य बनता जा रहा है।

प्रस्तुत पुस्तक वैज्ञानिक साहित्यमें अच्छा स्थान पायगी। यद्यपि इसमें सभी विज्ञान व्यावहारिक हैं, तथापि कुछ बातें हमारे जीवनसे भी विशेष सम्बन्ध रखती हैं। इस पुस्तकमें विशेष कर उन्हीं बातोंका वर्णन है जो हमारे रातदिनके उपयोग में आ सकती हैं। यह बड़े हर्ष की बात है कि इसमें सेवाधर्म संबन्धी विज्ञान भी बतलाया गया है; रोगीके पथ्यादिका अच्छा वर्णन है। इन बातोंसे भौतिक विज्ञानमें भी धर्मका भाव आ जाता है। जिस विज्ञानके द्वारा हमें परोपकार करनेमें सहायता मिले, वह विज्ञान धन्य है। हमारी शक्तिका उपयोग परोपकारमें होना ही चाहिये। जो विज्ञान दूसरोंके लिये अमृत और संजीवन बूटीका काम करे—वही हमारा सच्चा—विज्ञान है। और उसी विज्ञानको धन्य है।

इस पुस्तकमें श्रीयुत बा० कृष्णगोपालजी माथुरने ऐसे उपयोगी विज्ञानका वर्णन कर मनुष्य जातिको आभारी किया है। इस पुस्तकमें जीवन विज्ञानके सिद्धान्तों पर भी अच्छी झलक डाली है। अजीवसे जीवकी उत्पत्तिकी संभावना भले प्रकार सिद्ध की है। जो लोग संसारका कारण किसी चेतन शक्तिसे नहीं मानते, वह इन युक्तियोंको ध्यानसे पढ़ें—इनके पढ़नेसे उनका नेत्रोन्मीलन हो जावेगा। आशा है, माथुरजीकी पुस्तक हिन्दी जनतामें वैज्ञानिक सिद्धान्तोंका यथार्थ ज्ञान फैलानेमें बहुत योग देगी।

छत्रपुर। (बुंदेलखंड)।
कार्तिक कृ० १३ सं० १९९३ } *गुलाबराय एम. ए., एल-एल.बी.*

# विषयसूची

# चित्रसूची ।



# व्यावहारिक-विज्ञान।

## पहला अध्याय।




### फलोंकी रक्षा।




नुसंधानसे यह बात मालूम हो गई है, कि पृथ्वीके सारे देशोंमें जितने प्रकारके फल उत्पन्न होते हैं, प्रायः उन सबका नमूना भारतवर्षमें पाया जाता है। बल्कि भारतवर्षमें आम एक ऐसा फल है, जो बहुतसे देशोंमें नहीं पाया जाता। किन्तु फलोंकी रक्षा करनेका हमारे देशमें बड़ा भारी अभाव है। अमेरिकावालोंने इस विषयमें कमाल कर दिखाया है; वे एक ही फलकी, वैज्ञानिक रीतिसे कई क़िस्में पैदा कर सकते हैं। पचास वर्ष पहले वहां एक भी फल-रक्षाका कारख़ाना ( Cannary ) नहीं था; किन्तु अब केवल यूनाइटेड स्टेटमें ही २० हज़ार फल-रक्षाके कारख़ाने हैं और इनमें ४२ लाखके लगभग मनुष्य काम करते हैं। इन मज़दूरोंको प्रतिदिन अपनी कुल जमामेंसे दो डालर अर्थात् ६) रुपये कारखानेमें चन्दा देनेपर भी फ़ी सैकड़े ८० रुपये बच जाते हैं।

*फल रक्षाका संक्षिप्त इतिहास।*

अठारहवीं शताब्दीके अन्तमें फरासीसी गवर्नमेंटने घोषणा

की थी,—"कि जो कोई व्यक्ति जल-सैन्य (Marines) के वास्ते खाद्य-रक्षा ( Preserve ) का उत्कृष्ट उपाय निकाल सकेगा, उसको बारह हज़ार रुपये पुरस्कार दिये जायंगे।" १७६५ ई० में एपार्ट (Appert) नामके एक व्यक्तिने इस विषयमें पहिला उपाय निकाला। उसने अनुभव किया, कि जगतमें जितनी वस्तुएं पचकर नष्ट हो जाती हैं, इसका एकमात्र कारण किण्व या खमीर (Ferment) है जो प्रायः कीटाणुओं द्वारा बनता है। यदि किसी उपायसे इन कीटाणुओंको, (जैसे गरम करनेसे) नष्ट करके पदार्थोंको वायुशून्य-स्थानमें रख दें, तो वह पदार्थ नष्ट न होगा। उसने अपने इस निर्द्धारित कार्यको प्रमाणित करके फरासीसी गवर्नमेंटसे १८१० ई० में पूर्वोक्त पुरस्कार प्राप्त किया; और इसी वर्ष फरासीसी गवर्नमेंटकी सहायता और अनुमोदनसे एक पुस्तक प्रकाशित की। आजकल तो यूरोपमें फल-रक्षाकी प्रणाली इतनी उन्नत हो गई है कि यह पुस्तक इतिहासकी साक्षी देनेके सिवा और किसी काममें नहीं आती। एपार्ट (Appert) ने कांचकी बोतलमें किसी चीज़को भरके रक्षा करनेका उपाय निकाला था; किन्तु इसी वर्ष (१८१० ई०) इंगलैंडमें पिटर डूराए (Peter Durant) नामक एक और व्यक्तिने टीनके डिब्बों चीज़ भरकर रक्षा करनेकी विधि निकाली। इससे व्यवसाय लिए कई सुभीते हुए। सन् १८१५ ई० में थामस केन्से (Thomas Kenselt) नामका एक व्यक्ति, इंगलैंडसे यह का सीखकर न्यूयार्कमें रहनेके लिए चला आया; और न्यूयार्क ही

उसने यह व्यवसाय धीरे धीरे १८५० ई० तक चलाया। पर इस समयतक केवल मांस-मछलियों ही की रक्षा की जाती थी,—फल—रक्षाकी ओर विशेष ध्यान नहीं दिया गया था। सन् १८५१ ई० के आरम्भसे रक्षा करनेके व्यवसायमें क्रमशः उन्नति होने लगी। सबसे पहले फल और शाकभाजी ( Vegetable ) का रक्षण करना आरम्भ हुआ। किन्तु धीरे धीरे इसकी इतनी उन्नति हुई कि आजकल अमेरिकामें रक्षा करनेका व्यवसाय—एक प्रधान व्यवसाय हो गया है।

### रक्षाका मूल सिद्धान्त।

पपार्टका यह सिद्धान्त रक्षाका मूलतत्त्व (Principle) माना गया है, 'कि जगत्के सारे पदार्थ जो पचकर नष्ट हो जाते हैं, इसका एकमात्र कारण यह है, कि उनमें किण्व या खमीर (Ferment) उत्पादक कीटाणु जो दूर्बीनके बिना दिखाई नहीं देते, प्रवेश कर उन्हें पचा डालते हैं। यदि किसी तरह उत्तापके द्वारा इन कीटाणुओंको नष्ट करके पदार्थों को वायु शून्य स्थानमें रख दें, तो फिर वे नष्ट नहीं हो सकते।' मांस, मछली, दूध, फल, तरकारी (Vegetable) आदिकी रक्षाका यही मूल सिद्धान्त है।

### फल-रक्षाकी विधि।

फलकी रक्षा ( Fruit canning ) खास तौरपर तीन प्रकारसे की जाती है (१) फलको सुखा कर ( Drying ), (२) फलको बोतल या टीनके डिब्बोंमें भरकर ( Canning ),

(३) फलको मुरब्बा या आचार ( Jam and jelly ) की तरह बोतल वा टीनके डिब्बोंमें भरकर। आज मैं इस लेखके द्वारा केवल दूसरी प्रणाली ही का वर्णन प्रेमी पाठकोंको सुनाऊंगा। क्योंकि, पहली और तीसरी प्रणालीकी अपेक्षा इसमें यह विशेषता है, कि बहुत दिनों तक फलके स्वाद, गन्ध, रंग और आकृति प्रायः ताज़ा फलके समान ही बने रहते हैं।

रक्षाके उपयुक्त फल।

ज़्यादा कच्चे, ज़्यादा पके, दाग़ लगे, सड़े हुए ऐसे फल रक्षाके उपयोगी नहीं हैं। टीनके डिब्बे वा बोतलमें ऐसा कोई गुप्त गुण नहीं है, जो बुरी चीज़को अच्छी कर सके। अच्छी चीज़को अच्छी रखना ही रक्षाका मुख्य काम है। फलोंमें जब रंगत आने लगे, ऐसी अवस्थामें उन्हें पेड़से तोड़कर उसी दिन डिब्बेमें बन्द ( Can ) कर देना चाहिये। हां व्यवसायमें तो कई बार ऐसा नहीं हो सकता; तो भी ऐसा बन्दोबस्त कर लेना सदा लाभदायक होगा। कुछ दिनों तक अमेरिकामें, जहां तहां मिलने वाले फलोंकी रक्षा करनेके कारण यह व्यवसाय मन्दा पड़ गया था। किन्तु अब वहां इस विषयमें बड़ी सावधानी रखी जाती है। जो लोग अपनी गृहस्थीके लिये ही फलोंकी रक्षा करना चाहें, वे तो अनायास ही पेडसे अच्छे और ताज़ा फल तोड़कर रक्षा कर सकते हैं; पर शहरमें रहने वालोंके लिए ताज़ा फल मिलना कभी कभी कठिन हो जाता है। इसलिए, यदि ताज़े फल न मिल सकें, तो उनमें पूर्वोक्त दोष तो कदापि नहीं होने चाहियें।

वास्तवमें, सिझानेसे जिन फलोंके स्वाद, गन्ध, और रङ्ग आदि विशेष नहीं बदलते, केवल वेही फल रक्षाके विशेष उपयुक्त हैं। हां, इतना अवश्य है, कि ज़्यादा सिझानेसे फलोंके स्वाद, गन्ध, रंग और आकृति आदि बदल जाते हैं; पर इसके लिए पहले ही परीक्षा करके देख लेना नितान्त आवश्यक है।

*फल रक्षाके उपयुक्त पात्र।*

फल रक्षाकी दूसरी रीति (Canning) के लिए दो प्रकारके पात्र उपयुक्त हैं। एक तो, कांचकी बोतलें; दूसरे, टीनके डिब्बे। व्यवसायके वास्ते फलोंकी रक्षा करनेवालोंके लिए टीनके डिब्बे ही विशेष उपयुक्त हैं। क्योंकि, बोतलें महंगी मिलती हैं; और कई जगह भेजनेमें उनके टूट जानेका भी डर रहता है। किन्तु, जो लोग केवल अपनी गृहस्थीके लिए फलोंकी रक्षा करना चाहें, उनको बोतलोंका ही प्रयोग करना चाहिये; क्योंकि घरपर टीनके डिब्बोंका मुंह झालने आदिमें बड़ी दिक्कत पड़ती है। २०-२५ बोतलें यदि इकट्ठी ख़रीद ली जायं, तो प्रति वर्ष रबड़ बदल बदल कर उनमें फलोंकी रक्षा की जा सकती है, परन्तु उनको टूटने न देनेके लिए विशेष ध्यान रखना चाहिये।

*व्यवसायके लिए टीनके डिब्बोंमें भरकर फलोंकी रक्षा।*

पहले फलोंका छिलका अलग करना चाहिये, फिर उनको साफ़ और ठंडे जलमें अच्छी तरह धोना चाहिये। फल यदि बड़ा हो, तो उसके दो भाग करके भीतरकी गुठली (Pit)

निकाल डालना चाहिये, क्योंकि फलको सिझाते समय उसकी गुठलीमें से एक प्रकारका तिक्त रस निकलकर फलके स्वादको नष्ट कर देता है। इसका प्रत्यक्ष प्रमाण यही है, कि यदि आप सिझे हुए आमको खायँ, तो उसकी गुठलीके पासका अंश आपको कुछ कडुआ लगेगा। इसलिए साधारण तौरपर गुठलीको निकाल डालना ही अच्छा है, इससे बड़े फल डिब्बोंमें आसानीके साथ भरे जा सकेंगे। इसके बाद कच्चे, पक्के सब फलोंको टीनके डिब्बोंमें भरकर प्रायः मुँहतक उनमें शरबत या चाशनी (Syrup) भर देना चाहिए। शरबतके बदले यदि केवल जल ही भर दिया जाय, तो भी फलोंकी रक्षामें हानि नहीं पहुंचती ; किन्तु फलका स्वाद कुछ बिगड़ जाता है ; इसलिए शरबतका ही व्यवहार करना उचित है। जलके साथ चीनी मिलाकर शरबत ( Syrup ) तैयार कर लेना चाहिए। शक्करका परिमाण अपने अपने स्वादके ऊपर निर्भर है। जितने परिमाणसे फलका स्वाद अच्छा बना रहे, उतनी ही चीनी देनी चाहिए। ज़्यादा चीनी देनेसे, ज़्यादा मीठा होकर फलोंका असली स्वाद बिगड़ जाता है ; इसलिए दो तीन बार परीक्षा करके चीनीका परिमाण ठीक कर लेना चाहिए।

फल और शरबत भर देनेके बाद टीनके डिब्बोंके मुँहपर ढक्कन लगाकर उन्हें झाल देना चाहिये। इस ढक्कनके बीचमें एक छोटासा छेद—जिसमें एक मोटी सुई घुस सके,—रखना चाहिये। फिर डिब्बोंको गरम जलके कड़ाहमें, छेद ऊपर रखकर डुबा देना

चाहिए। छेद अत्यन्त छोटा होनेके कारण बाहरका जल भीतर और भीतरका शरबत बाहर नहीं आ जा सकेंगे। इसी प्रकार छोटे डिब्बोंको ४।५ मिनट और बड़ोंको ७।८ मिनट तक डुबाए रखनेसे उनके भीतरकी वायु उत्ताप पाकर छेदके द्वारा बाहर निकल जायगी। इसके बाद गरम जलसे निकालकर उसी समय उनके छेदोंके टांके बन्द कर देना चाहिये। परन्तु इस समय देर करना ठीक नहीं है; क्योंकि अत्यन्त गरम दशामें डिब्बोंके भीतरकी खाली जगह जलीय भाप ( Vapour ) से भरी रहती है और उसमें वायु बिलकुल नहीं रहती, देर करनेसे भाप ठण्डी हो जाती है और उसके स्थानमें वायु प्रवेश कर जाती है। यह वायु बादमें फलोंको ख़राब कर देती है। वास्तवमें इस वायुको निकाल देनेके लिए ही यह क्रिया की गई थी। इसलिए छेद झाल देनेमें जितनी जल्दी हो सके, करनी चाहिये।

छेद बन्द कर देनेके बाद डिब्बोंको फिर खोलते हुए जलके कड़ाहमें डुबोकर उनके फलोंको सिझाना चाहिए।* यह क्रिया फलोंके भीतरवाले उपरोक्त कीटाणुओंको मार डालनेके लिए की जाती है। कितने बार कितनी उत्ताप देनेसे फलके कीटाणु मर जाते हैं,—यह बात ठीक ठीक नहीं कही जा सकती; क्योंकि जुदे जुदे प्रकारके फलोंमें जुदे जुदे प्रकारके कीटाणु होते हैं।

---

* इस समय इस बातका ख्याल रहे कि अधिक उत्ताप लगनेसे भाप कहीं डिब्बेको न तोड़ दे। इसलिये जहांतक हो सके पानी मामूली खौलता हुआ होना चाहिये।

परन्तु औसत् अन्दाज़से यह कहा जा सकता है, कि २५।३० मिनट तक खौलते हुए जल ( १०० डिग्री ) के उत्तापमें सिझानेसे प्रायः सब फलोंके कीटाणु मर जाते हैं। पर, यह सिझाना फलोंकी अवस्थाके ऊपर भी निर्भर है। जैसे कच्चे फल, पक्के फलकी अपेक्षा ज़्यादे देरतक ; और खूब पके फल और भी थोड़ी देरतक— सिझाने चाहियें ; नहीं तो फलकी आकृति, स्वाद, गन्ध, रङ्ग आदि सब नष्ट हो जाते हैं। डिब्बोंमें भरते समय फलोंका श्रेणी विभाग कर लेना चाहिये; क्योंकि अलग अलग प्रकारके फलोंको अलग अलग समयकी दरकार होती है। कच्चे पक्के फल यदि इकट्ठे डिब्बोंमे भर दिये जायँ, तो कच्चे फलके नियमानुसार सीझते सीझते ही पका फल सीझकर गल जायगा इसलिए फलोंका श्रेणी विभागकर लेना नितान्त आवश्यक है। खौलते हुए जलमें २५ से ३० मिनटतक सिझा कर यदि देखा जाय, कि फलोंकी आकृति, स्वाद, गन्ध और रंगका परिवर्त्तन हो गया है, तो इससे भी थोड़ी देरतक सिझाना चाहिये। और यदि देखा जाय, कि २५।३० मिनिटके उत्तापसे फलोंके स्वाद, गन्ध और रंग आदिमें कुछ भी परिवर्त्तन नहीं हुआ—बल्कि पहिलेकी अपेक्षा और अच्छा हो गया है* तो इससे भी ज़्यादा देरतक सिझाना चाहिए। यह सब बातें केवल परीक्षाके ऊपर निर्भर हैं। अमेरिकामें पीच नामक एक प्रकारका फल साधारणतः

* सिझाने पर बहुतसे फलोंके स्वाद, गन्ध और रंग आदि अच्छे हो जाते हैं।

२५ से ३० मिनिटतक सिझाया जाता है। यहांके कारखानेके लोग व्यवसायके वास्ते ज़्यादा तथा कम सीझे हुए सब प्रकारके फल रखते हैं; और बेचते समय अलग अलग प्रकारके फलोंको अलग अलग क़ीमत पर बेचते हैं।

निर्दिष्ट समयमें फलोंके सीझ जानेपर डिब्बोंको गरम जलसे निकाल कर उसी समय ठंडे जलके कड़ाहमें डुबो देना चाहिए; क्योंकि यदि तुरन्त ही डिब्बे ठंडे न किये जायँ, तो उनके भीतर जो उत्तापके द्वारा सिझानेका काम चलता रहता है, वह बहुत देरतक चलता रहेगा और उससे फल ज़्यादा सीझकर बिलकुल ख़राब हो जायँगे। इस प्रकार ५।७ मिनिट तक डुबाए रखनेसे डिब्बे ठंडे हो जाते हैं। फिर उनको ठंडे जलसे निकाल कर, जिधरकी तरफ़का मुँह झाला गया हो, उधरकी तरफ़से नीचा करके खड़ा कर देना चाहिए। बादको जब उनपर लेबिल लगाने हों, तो उस समय विशेष दृष्टिसे देख लेना चाहिये, कि उनके किसी स्थानसे भीतरका शरबत ( Syrup ) तो थोड़ा बहुत नहीं चू रहा है। यदि किसी डिब्बेमें कुछ सन्देह हो, तो उसे उसी समय दुरुस्त करनेके लिए अलग कर देना चाहिए। इन डिब्बोंमें से फल निकालने हों, तो इनके मुँहको काटकर निकाल लेना चाहिए, और फिर उसे पूर्वोक्त नियमानुसार दुरुस्त कर देना चाहिये; पर इस समय इनके फलोंको ज़्यादा सिझानेकी ज़रूरत नहीं है। अमेरिकामें ये सारे फल पाइ ( Pie ) नामक पुएके लिए व्यवहार किये जाते हैं। लेबिल लगानेके बाद डिब्बों-

को लकड़ीकी सन्दूकोंमें भर देना चाहिये । प्रत्येक सन्दूकमें दो दर्जन अर्थात् २४ डिब्बे भर देते हैं ।

इस प्रकारकी रक्षाके मुख्य मुख्य काम ये हैं :—

(१) फलका छिलका अलग करना और गुठली निकालना (Peeling) ।

(२) श्रेणी विभाग करना (Sorting) ।

(३) डिब्बोंमें भरना ( Canningor filling ) ।

(४) डिब्बोंमें शक्करका जल भरना (Syruping) ।

(५) हवा बाहर निकालनेके लिये खौलते हुए जलके कड़ाहमें डुबाना (Airtighting) ।

(६) ढक्कन लगाना (Capping) ।

(७) छोटा छेद बन्द करना (Soldering) ।

(८) सिझाना (Cooking)

(९) ठंडे जलके कड़ाहमें डुबाना (Cooling) ।

(१०) झले हुए मुंहको नीचा रखकर खड़े करना ।

(११) लेबिल लगाना (Labelling) ।

(१२) लकड़ीकी सन्दूकोंमें बन्द करना (Casing) ।

*घरके लिये बोतलमें भरकर फलोंकी रक्षा ।*

यह बात पहलेही कही जा चुकी है, कि घरपर फलोंकी रक्षा बोतलमें ही भरकर करना ठीक है । बोतलमें भरकर फलोंकी रक्षा दो प्रकारसे हो सकती है । एक तो, डिब्बेनुमा बोतलमें भरकर गरम जलकी देगचीमें फलोंको सिझाना ; दूसरे, अलग पात्रमें



फलोंको बोतलमें भरना।

(पृष्ठ ११)

फलोंको सिझाकर बोतलमें भरना। पहिले नियमकी अपेक्षा दूसरा नियम ही अत्यन्त सुविधाजनक है। अमेरिकाके घर घरमें जो फलोंकी रक्षा की जाती है, उनमें प्रायः दूसरा नियम ही अधिकतर बर्त्ता जाता है। यह नियम कठिन नहीं है, इसे हमारे यहांकी रसोई-कार्यमें निपुण-स्त्रियाँ आसानीके साथ कर सकती हैं। हाँ, पहले पहल उनको कुछ कठिनाई मालूम होगी, परन्तु अभ्यास हो जानेपर वे देखेंगी, कि भात राँधना और आमकी रक्षा करना—दोनों ही समान बुद्धिके काम हैं।

पहिले अच्छे अच्छे फलोंके छिलके अलग करके उनकी गुठली निकाल डालना चाहिये (यदि आम हों, तो उसकी गुठलीके ऊपरका अंश काट लेना चाहिये)। फिर उनको साफ़ जलसे धोना चाहिये। धोनेके बाद सिझानेके पहले तक उनको साफ़ ठंडे जलमें भींजे रखना चाहिये; क्योंकि इससे फलोंका रंग नहीं बिगड़ता। इसके बाद, एक पात्रमें तीन प्याले जलके साथ दो प्याला चीनी मिलाकर चूल्हेपर रखना चाहिये* जब जल खौलने लगे, तब उसमें ठंडे जलके भींजे हुए—फल डालकर ढक्कनसे पात्रका मुंह ढक देना चाहिये। इस प्रकार १५।२० मिनिटमें जब फल खूब सीझ जायँ, तब चूल्हेपर रखे रखे ही गरम बोतलोंमें (जिसका वर्णन आगे चलकर किया जायगा) पहले खौलती हुई चाशनी (Syrup) भरकर, फिर एक चमचेके द्वारा सीझे हुए

* यदि कोई ज्यादा मीठा चाहे तो शक्करका परिमाण बढ़ानेके लिये परीक्षा करके देखले।

फलोंको भरना चाहिये। बादको उस पात्रकी बची हुई गरम चाशनीको बोतलोंमें मुँह तक भरकर रबड़के साथ—यदि बड़ी बोतल हो, तो ढकन और छोटी हो, तो स्कू अच्छी तरहसे ज़कड़कर लगा देने चाहियें। इसके बाद गरम जलमें भींजे हुए एक अंगोछेसे बोतलका गला आदि पोंछकर उसे खड़ी कर देना चाहिये। उस समय यदि देखा जाय, कि भीतरसे कुछ चाशनी बोतलके मुँह द्वारा बाहर निकल रही है, तो जानना चाहिये, कि परिश्रम वृथा गया; और यदि देखा जाय, कि कुछ भी चाशनी बाहर नहीं निकलती है, तो आगेके दो साल तक फलोंके ज़रा भी न बिगड़नेके लिये निश्चिन्त हो जाना चाहिये। खड़ी हुई बोतलके मुँहसे यदि चाशनी निकले, तो उसी समय उसका मुँह खोलकर, भीतरकी चाशनी और फलोंकी गरम दशामें ही, उपरोक्त पात्रकी बची हुई कुछ गरम चाशनी उसमें भर देनी चाहिये; और फिर उसका मुँह खूब मज़बूतीके साथ लगाकर उसे खड़ी कर देनी चाहिये। इसके बाद दो तीन बार ऐसी ही परीक्षा करके निश्चिन्त हो जाना चाहिये।

ठण्डी बोतलमें गरम चाशनी भरना ठीक नहीं है; क्योंकि ऐसा करनेसे बोतलके टूट जानेका पूरा डर रहता है। इसलिये, चाशनी और फल भरनेके पहिले बोतलको अच्छी तरह गरम कर लेना चाहिये। इसकी तरकीब यह है, कि गरम जलकी एक अलग कढ़ाईमें बोतलको डुबा देना चाहिये; और बीच बीचमें उसको एक चमचेसे उलट पुलट करते रहना चाहिये,

—जिससे गरमी बोतलके सब स्थानोंमें बराबर लगती रहे ; क्योंकि एक स्थानमें ज़्यादा और एक स्थानमें कम गरमी लगनेसे भी बोतलके टूट जानेकी संभावना है। बोतलके साथ ही साथ उसका ढक्कन और रबड़ भी गरम कर लेने चाहियें। इस प्रकार बोतल गरम करनेसे दो काम होंगें ; एक तो बोतलमें यदि कीटाणु (Germs) होंगे, तो वे मर जायँगे ; और दूसरे, बोतल टूटनेसे बचेगी। फल सिझानेका काम समाप्त करके जब उनको बोतलमें भरना शुरू किया जाय, तभी बोतलको गरम जलसे निकालना चाहिये ; और उसी समय उसमें पूर्वोक्त नियमानुसार चाशनी या फल भर देने चाहियें। इसके बाद रबड़ और ढक्कन गरम जलसे निकाल कर बोतलके मुँहपर लगा देने चाहियें। खुली हुई खिड़की या दरवाज़ेके निकट, जहाँ वायु आती जाती हो ऐसे स्थानोंमें फल भरनेका काम नहीं करना चाहिये ; क्योंकि एकाएक ठण्डी हवाके लगनेसे बोतलके टूट जानेका डर है। ख़ास बात तो यह है कि बोतलको टूटनेसे बचानेके लिये, चाशनी और बोतलको प्रायः समान गरम रखना चाहिये। गरम जलमें भींजे हुए एक अंगोछेकी तीन चार तह करके उसको एक चौकी पर बिछाना चाहिये ; फिर उसके ऊपर बोतल रखकर फल भरनेका काम शुरू करना चाहिये। यह काम पूरा हो जानेपर बोतलको ठण्डी न होने तक एक स्थानमें खड़ी कर देना चाहिये। इसके बाद जब बोतल ठण्डी हो जाय, तब उसको भूरे (Brown) रंगके काग़ज़में लपेट कर प्रकाश न पहुँच सकनेवाले स्थानमें रख

देना चाहिये। रक्षित फलसे भरे हुए टीनके डिब्बे तो जहाँ तहाँ रक्खे जा सकते हैं; किन्तु बोतल नहीं रखी जा सकती। अमेरिकाके घरोंमें तहख़ाने (Cellar) होते हैं, जहाँ वे लोग इन सारी बोतलोंको रखते हैं। इससे उन बोतलोंमें प्रकाश नहीं लग सकता। भूरे रंगका काग़ज़ जो बोतलके ऊपर लपेटा जाता है, वह केवल—बोतलको प्रकाश न लगने देनेके लिये ही है।* यहाँ तीन प्रकारकी तीन बोतलें व्यवहार की जाती हैं। जिनमेंसे १ और ३ नम्बर अर्थात् लैटनिंग और इकोनोमी (Lightning and Economy) नामकी बोतलें ही अधिक काममें लाई जाती हैं। इकोनोमी (Economy) बोतलमें अलग रबरकी जरूरत नहीं पड़ती। उनके ढकनोंमें ऐसा सिमेंट लगा रहता है, कि वही रबरका काम देता है।

अमेरिकामें यह कारखाने छः मास तक खुले रहते हैं, और छः मास तक बन्द रहते हैं, इसका कारण यह है, कि वहां छः मास तक ज़्यादा फल उत्पन्न नहीं होते। अमेरिकावालोंका ख़याल है, कि 'भारतवर्षमें प्रचुर परिमाणसे आम उत्पन्न होनेके कारण कई हज़ार फल रक्षाके कारख़ाने (Cannary) आसानीके साथ चल सकते हैं और इस व्यवसायसे भारतवर्ष मालामाल हो सकता है!'

---

* प्रकाशसे फल बिगड़ जाते हैं। भारतवर्षमें लहसुन आदि कई प्रकारके फल प्रकाश लगते ही मुरझा जाते हैं।

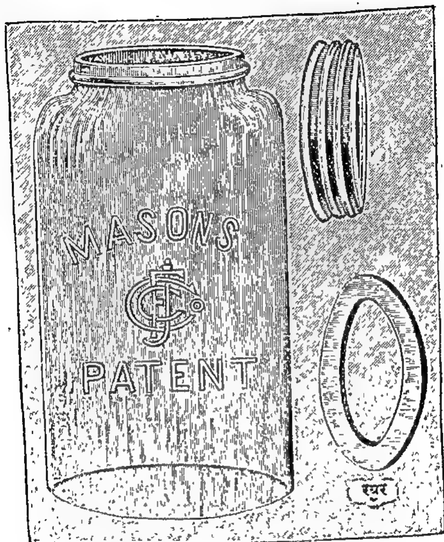


लाइटनिङ्ग बोतल ।



इकोनोमी बोतल ।

(पृष्ठ १४)




इस बोतलके ढक्कनमें अलग रबर लगाया जाता है।

(पृष्ठ १४)

# दूसरा अध्याय ।

## जीवका जन्म ।



जीवसे जीवकी उत्पत्ति होती है, पर निर्जीव वस्तुसे जीवकी उत्पत्ति हो सकती है या नहीं ? इस प्रश्नको लेकर प्रायः चार सौ वर्षोंसे वैज्ञानिकोंमें खूब आलोचना होती आ रही है। प्रति वर्ष इस विषयके नये नये तथ्य प्रकट होते हैं और उनपर विचार होता रहता है।

एक संस्कृत कहावत है,—"नासौ मुनिर्यस्य मतं न भिन्नम्" हमारे विज्ञानी लोग ऋषि न होने पर भी अपने मतमें ऋषिजनोचित यथेष्ट विचित्रता रखते हैं। अस्तु, कुछ भी हो, परन्तु जब प्रश्न उठा कि जीव क्या केवल जीवसे ही बनता है ? तब विज्ञानियोंके एक दलने तो 'हां' कर दी, और कुछ विज्ञानी 'ना' कहने लगे। इस प्रकार इस प्रश्नपर विज्ञानियोंके दो दल हो गये।

जब विज्ञानके पहले युगमें ये 'ना' करनेवाला दल खूब पुष्ट था। इस दलके विज्ञानी उच्च कंठसे कहते थे कि, प्राणीके जन्मके लिये सब स्थानोंमें माता पिताकी आवश्यकता नहीं होती, हमारे सामने नियत निर्जीव पदार्थसे अपने आप जीवका जन्म होता है। इसका उदाहरण मांगनेपर वे लोग कहते थे कि, मृत जीवका शरीर कुछ दिनोंतक रख दो, कुछ दिनोंके बाद देखोगे कि

उसमें छोटे बड़े नाना प्रकारके कीड़े उत्पन्न हो गये हैं। पर, इन सब कीड़ोंको मृत जीवके वंशधर कभी नहीं कहे जा सकते। ये गले शरीरसे अपने आप उत्पन्न होते हैं, इसलिये इनकी उत्पत्ति गले शरीरसे अपने आप होना अवश्य मानना पड़ेगा।

जब ये दल आपसे आप जीवकी उत्पत्ति मानता था, तो इसका नाम स्वतोजन्मवादी पड़ा। सत्रहवीं शताब्दीके पहिले भागमें, इसमें हेलमण्ट नामका एक प्रसिद्ध विज्ञानी हुआ। इसने अपनी विलक्षण बुद्धिसे बड़ी प्रसिद्धि पाई। इसकी अमरकीर्त्ति आज भी इसकी कई पुस्तकोंमें लिपिबद्ध है। स्वतोजन्मका उदाहरण देते हुए यह विज्ञानी कहता था कि एक पात्रमें थोड़ासा धान वा गेहूं रखकर एक मैले कपड़ेसे उस पात्रका मुँह बांध दिया जाय, तो इक्कीस दिनके बाद देखोगे कि, वस्त्रकी दुर्गन्धमयी भाफ़ने धानके साथ मिलकर उसमें बड़ी बड़ी इल्लियाँ उत्पन्न कर दी हैं। इस विज्ञानीने दुर्गन्धकोही स्वतोजन्मका मूल कारण माना था। इसका विश्वास था कि जलीय भूमिके नीचेकी दुर्गन्धमय भाफ़ ही जोंक और नाना प्रकारके जन्तुओंको उत्पन्न करती है।

जिस समय हेलमण्ट सरीखे वैज्ञानिकोंने तर्कजाल बिछाकर विज्ञान जगतपर अपना अधिकार जमाया था, उस समय विज्ञानकी कोई बात सत्य नहीं मानी जाती थी, और न कोई हेलमंटके सिद्धान्तके विरुद्ध खड़ा हुआ था। हाँ, दो एक विज्ञानी स्वतोजन्मके विरोधी थे; पर हेल्मंट सरीखे प्रमुख विज्ञानीके उच्च कोलाहलमें उनकी आवाज़ किसीने नहीं सुन पाई।

स्वतोजन्म वादियोंका यह प्राधान्य कबसे चला आता था यह बात बताना बड़ा कठिन काम है। परन्तु सत्रहवीं शताब्दीके आखिरी समयमें विख्यात इटालियन विज्ञानी मिस्टर रेडी साहब इस मतवादके विरुद्ध खड़े हुए ; और यह निश्चित हो गया है कि इनके खड़े होनेसे स्वतोजन्म वादियोंका अधःपतन हो गया।

रेडी साहब, एक मांसका टुकड़ा और एक बारीक कपड़ा हाथमें लेकर वैज्ञानिक-समाजमें उपस्थित हुए, और इन्होंने कह दिया कि, मैं केवल इन्हीं दो चीज़ोंसे स्वतोजन्म वादियोंके सिद्धान्तमें भ्रम स्थापित करूँगा। इसके बाद मांसके टुकड़ेको एक पात्रमें रखकर उस बारीक कपड़ेसे पात्रका मुँह ढक दिया गया। मांस गल गया ; पर उसमें कीड़े उत्पन्न नहीं हुए।

यह सहज परीक्षा करके वैज्ञानिकोंने समझ लिया कि, गले मांससे कीड़े अपने आप उत्पन्न नहीं होते। नाना प्रकारकी मक्खियाँ बाहरसे आकर मांसके ऊपर अण्डे देती हैं, तब उससे कीड़े उत्पन्न होते हैं। यह परीक्षा देखकर स्वतोजन्मवादी निर्वाक् हो गये।

हम जिस समयकी बात कह रहे हैं, उस समय अनुवीक्षण यंत्रका आविष्कार नहीं हुआ था। बादको जब इस यंत्रका आविष्कार हो गया और रेडी साहबकी मृत्यु हो गई, उसके बहुत दिनों बाद इस वस्त्रावृत पात्रके गले मांसकी अनुवीक्षण यंत्रसे परीक्षा की गई थी। इस परीक्षासे देखा गया कि मक्खि-योंका आना जाना रोक देनेसे मासमें बड़े कीड़े उत्पन्न नहीं हो सकते, पर उसमें छोटे छोटे अनुवीक्षण यंत्रसे दीखनेवाले कीड़ों-



२

का अभाव नहीं रहता । इस वातमें स्वतोजन्मवादियोंको फिर एक सुयोग मिल गया । वे लोग दल वांधकर कहने लगे कि बाहरके कीटादिसे मांसमें कभी कीड़े उत्पन्न नहीं होते, यदि ऐसा होता तो वस्त्रसे पात्रका मुँह वन्द रखनेपर भी हज़ारों छोटे छोटे कीड़े मांसमें क्यों पैदा हो जाते । किन्तु रेडीके शिष्योंने इसका यथोचित उत्तर शीघ्र ही दिया और स्वतोजन्मवादियोंकी ज़बान बन्द कर दी । इन लोगोंने मांसके टुकड़ेको कुछ देरके लिये गरम जलसे भरे पात्रमें रक्खा और उसी दशामें उसका मुँह गले धातु व काँचसे खूब मज़बूतीके साथ वन्द कर दिया । बादको जब परीक्षा की गई तो मालूम हुआ कि मांसमें छोटे बड़े किसी प्रकारके कीड़े उत्पन्न नहीं हुए । इस परीक्षासे साफ़ तौरपर सिद्ध हो गया था कि गले मांसके कीड़े अपने आप उत्पन्न हुए जीव नहीं हैं ।

जिस समय रेडीके शिष्य इस प्रकारकी परीक्षाओंसे स्वतोजन्मवादियोंका मूलोच्छेद कर रहे थे, उस समय सजीव पदार्थके पचनेके सम्बन्धमें एक मतवाद प्रचलित था । प्रसिद्ध विज्ञानी मि० बुफन साहब इस मतवादके प्रतिष्ठाता थे । इनका कहना था कि, सजीव और निर्जीव पदार्थके उपादानके मूलमें एक बड़ा अन्तर है । हम जिसको सजीव पदार्थ कहते हैं, वह प्रत्येक ही कुछ छोटे छोटे जीवाणु द्वारा बना है । निर्जीव वस्तुकी बनावटमें इन जीवाणुओंकी आवश्यकता नहीं होती । सजीव वस्तुके शरीरमें ये जीवाणु जत्था बांधकर रहते हैं । इसीलिये उस समय हम इनके अस्तित्व-लक्षण नहीं देख पाते । जीव जब

मर जाता है और उसकी गठन सामग्री अर्थात् यह जीवाणु शरीरसे अलग होने लगते हैं तब उनका कार्य दिखाई देता है। बुफन साहबका मत है कि यह बिखरे हुए जीवाणु ही गले मांसमेंके छोटे छोटे कीड़े हैं, जो अनुवीक्षण यंत्रके बिना दिखाई नहीं देते। इस बातमें किसी प्रकारका सन्देह नहीं है। परन्तु लोगोंको इसमें विश्वास नहीं हुआ। उन्होंने सोचा कि रेडीके शिष्योंकी परीक्षामें जब बन्द मुंहके पात्रका मांस गल जानेपर भी उसमें कीड़े उत्पन्न नहीं हुए तब बुफन साहबका यह मतवाद कैसे मान लिया जाय। अस्तु, इस मतवादके माननेमें घोर अविश्वास आ खड़ा हुआ।

जगद्विख्यात् विज्ञानी मि० लिबिग साहबका नाम तो पाठकोंने अवश्य सुना होगा। इन्होंने कई पदार्थोंके पचने और कन्दने (Fermentation) के बारेमें पहिले बहुत गवेषणा की थी। गवेषणाके फलसे स्थिर हुआ था कि वायुकी आक्सीजन भाफ़ उद्भिद व प्राणीके मृत शरीरके स्पर्शमें आ जानेसे, आक्सीजनके सब अणु जीवदेहके अणुओंको तोड़ने लगते हैं और इससे जीवदेह विश्लिष्ट होनेपर एमोनिया और अंगारेकी भाफ़ आदि तैयार होते हैं।

खुली हवामें कोई चीज़ रक्खी जाय, तो वह वहीं पचने लगती है—यह बात हम जानते हैं। परन्तु यह बात ठीक नहीं है कि, सब जैव पदार्थोंको ही वायुके स्पर्शमें रखनेसे वे पचने लगते हैं। चीनी या श्वेतसार आदि पदार्थोंको वायुमें बहुत देरतक

खुले तौर पर रख दिये जायँ, तो वे विल्कुल नहीं बिगड़ते और असली हालतमें रह सकते हैं। परन्तु उन्हींमें यदि पचन वीज (yeast) मिला दिये जायँ, तो वे पचने लगते हैं। इस विषय को प्रत्यक्ष करके लिबिग साहबने स्थिर कर दिया कि, चीनी और श्वेतसार आदि जैव पदार्थ, प्राणी देहके उत्पन्न हुए पदार्थसे विल्कुल अलग हैं। उनका कहना था कि, यही चीनी और श्वेतसार आदि पदार्थोंको जब हम पचन बीजोंसे युक्त कर देते हैं, तब उसी बीजके अणु इन पदार्थोंके अणुओंको तोड़ मरोड़ कर इनका रूपान्तर कर डालते हैं और इसीसे हम दूध या खांड को दही या मद्यमें बदले हुए देखते हैं।

जब रेडी साहबके शिष्य स्वतोजन्म सिद्धान्तके विरुद्ध खड़े होकर उसके मूलोच्छेदकी व्यवस्था कर रहे थे, तब लिबिग साहबका पूर्वोक्त सिद्धान्त खूब फैल जानेसे, इन लोगोंका सब आयोजन व्यर्थ होने लगा था। इस सुयोगसे स्वतोजन्मवादि योंने अपना दल खूब पुष्ट कर लिया और नये सिद्धान्तका अवलम्बन करके ये लोग निर्जीव पदार्थसे सजीवकी उत्पत्ति होनेकी बातको फिरसे नई करके प्रचार करने लगे।

परन्तु स्वतोजन्मवादियोंका यह जयोल्लास अधिक समयतक स्थायी नहीं रहा। फ्रान्सके सुप्रसिद्ध पण्डित मिस्टर पास्टर साहबने नाना प्रकारके कीटाणु और जीवाणु (yeast) के अद्भुत कार्यकी बातें प्रचारित कीं, जिससे इस दलका फिर नये सिरेसे अधःपतन हो गया। पास्टर साहब लिबिगके सिद्धान्तका प्रति-

वाद करके कहने लगे कि दूध और ,चीनीका दही और मद्यमें परिवर्तित होना वा मृतजीवकी देहके पचनेका काम आक्सिजनका नहीं है। आकाशकी वायुमें नाना प्रकारके छोटे छोटे, जीवाणु सर्वदा मिले रह कर घूमा करते हैं; यही जीवाणु जब मृत-जीवके शरीरमें आश्रय लेते हैं, तब साधारण जीवकी तरह ये अपना वंश बढ़ाकर मृत शरीरको गला डालते हैं। इसी प्रकार दही और मद्यकी उत्पत्ति भी जीवाणुओंका ही काम है। दूधका दधि बीज और चीनी आदिके किण्व, इन्हीं जीवाणुओंके सिवाय और कुछ नहीं हैं। इन्हीं जीवाणुके कुछ जीवाणु दूध व खांडमें आश्रय लेकर सारी वस्तुको आच्छन्न कर डालते हैं और वे ही उस वस्तुमें रसायनका परिवर्तन कर देते हैं। पास्टर साहबने कौशलपूर्वक वायुमेंके सब जीवाणुओंको नष्ट करके उस वायुमें मांस आदि पचनशील पदार्थोंको रखा था। इससे मांसमें अणुमात्र विकार भी दिखाई नहीं दिया।

जिन विषयोंका अवलम्बन करके प्राचीन दलवाले स्वतो-जन्मका उदाहरण देते थे, उनका पास्टर साहबने इन परीक्षाओंसे एक एक करके काट कर दिया और इनमें कई प्रकारके भ्रम उत्पन्न कर दिये। इससे स्पष्ट समझ लिया गया था कि, वे उदाहरण किसी प्रकार भी स्वतोजन्मके उदाहरण नहीं हैं। स्त्री पुरुषके संयोगसे वा अपनी देहको खंडित करके साधारण जीव जिस प्रकार सन्तान पैदा करता है, उसी प्रकार सब स्थानोंमें उनकी वंश वृद्धि होती है।

पाठकोंने मि० बेस्टियन और पुचेट्का नाम अवश्य सुना होगा। ये दोनों महाशय गत शताब्दीमें बड़े भारी विज्ञानी सिद्ध हो चुके हैं। पास्टर साहबके आविष्कारका समाचार फैलने पर इन लोगोंने नाना प्रकारके विषयोंको लेकर उसमें कई भूलें दिखानेकी चेष्टा की थी। इसी समय विख्यात विज्ञानी मि० टिनडेल साहबने पास्टर साहबके साथ योग दिया और इनकी इकट्ठी चेष्टा से बेस्टियन आदिकी सब युक्तियाँ खण्डित हो गई थीं। इसके बाद स्वतोजन्मवादियोंका अधःपतन चरम सीमातक पहुँच गया, जिससे अभीतक उसके उद्धारकी कोई आशा दिखाई नहीं देती।

कुछ वर्षों पहिले यह समाचार फैला था कि बार्क नामके एक अंग्रेज़ विज्ञानीने स्वतोजन्मको प्रत्यक्ष किया है। यह समाचार कितने ही वैज्ञानिक समाजोंमें पहुँचा। बार्क साहबकी परीक्षाका मूल वृत्तान्त जाननेके लिये सारे जीवतत्वज्ञ अधरा उठे। अन्तमें जाना गया कि मांसके टुकड़ेमें रेडियम धातुका चूर्ण लगा देनेसे दो दिनमें उस निर्जीव टुकड़ेमें बहुतसे छोटे २ पदार्थोंका जन्म हो गया और वे ही पदार्थ धीरे धीरे बड़े होकर अपनेको साधारण जीवाणुकी तरह दो भागोंमें विभक्त होते देखे गये। किन्तु इस प्रकारके विभाग होनेके बाद फिर उनका पुनर्विभाग नहीं देखा गया; अधिक तो यथा, धीरे धीरे वे सब एक प्रकारके दानामय पदार्थमें रूपांतरित हो गये। बार्क साहबने इस विषयको प्रत्यक्ष करके स्वतोजन्मके सम्भव होनेका प्रचार करना आरम्भ किया। उनका मत था कि इन पदार्थोंकी, किसी

प्रकारके जीवाणु और रेडियमके प्रभावसे ही उत्पत्ति होती है, इसके बिना इनकी उत्पत्ति होना सम्भव नहीं है।

युवक विज्ञानी मि० बार्क साहब इस आविष्कारके द्वारा जो सन्मान पानेके लिये लालायित थे, वह उनके भाग्यमें नहीं था। सर विलियम रैमज़े सरीखे विख्यात विज्ञानी और रासायनिककी कठोर अग्नि परीक्षासे जब देखा गया कि बार्क साहबके जीवाणुओंमें जीवनके कोई लक्षण नहीं हैं और वे जीवाणुकी तरह अपना वंश बढ़ानेमें भी समर्थ नहीं हैं, तब सभी लोग बार्क साहब के सिद्धान्तको भ्रमपूर्ण समझने लगे, और उन लोगोंने इस सिद्धान्तको जाली ठहराया।

अब पाठक पूछ सकते हैं कि, तो क्या स्वतोजन्म सचमुच ही असम्भव है या नहीं? इस प्रश्नका उत्तर पूर्वोक्त आलोचनासे देते हुए कहा जा सकता है कि वर्त्तमान अवस्थामें सचमुच ही इस पृथ्वीपर स्वतोजन्म असम्भव है। प्रतिदिन हमारे चारों तरफ़ जो हजारों जीवोंकी उत्पत्ति होती है, उनमेंसे प्रत्येककी परीक्षा की जाय, तो मालूम होगा कि एक स्त्री-पुरुषके साधारण उपायसे उनका जन्म हुआ है। परन्तु इससे यह नहीं समझ लेना चाहिये कि, पृथ्वीपर कभी भी स्वतोजन्म नहीं चलेगा। इस बातको साहस पूर्वक कोई कह भी नहीं सकता है। परन्तु वर्त्तमान समयमें तो स्वतोजन्म नहीं चल रहा है। यह बात नि.संकोच होकर कही जा सकती है।

---

# तीसरा अध्याय।

## जीवका जन्म-समय

यह जल स्थलमय पृथ्वी कितने दिन पहले जीवावासके उपयोगी हुई, यह बात स्थिर करनेके लिये गतशताब्दी के वैज्ञानिकोंने बहुत गवेषणा की थी। प्राचीन वैज्ञानिकोंने कई नक्षत्रलोकोंमें अग्निभुक् और शिलामय जीवोंकी कल्पना की है; पर अधिक तो क्या यह कल्पना कोरी कल्पना ही है। इस प्रकारके जीव किसी समय पृथ्वीपर थे या नहीं, इसकी आलोचना हम यहाँ नहीं करेंगे। यहाँ तो हम, जिनका शरीर उस नाइट्रोजन घटित जीवसामग्री ( Protoplasm ) से बना है और जो वायु या जलमेंके आक्सिजनको संग्रह करके जीवित रहते हैं, उन्हींको जीव मानेंगे। लोकान्तर या ग्रहान्तरमें कोई अद्भुत जीव है या नहीं और है तो उनके किस वंशधरने किस समयमें हमारी पृथ्वीपर आवास बनाया, यह हमारी आलोचनाका विषय नहीं है।

हम पहिले ही देखते हैं कि पृथ्वीके जीवोंको बचानेके लिये उनकी आवास भूमिकी अवस्था जीवन-रक्षाके अनुकूल होनी चाहिये। यदि ऐसा न हो, तो कोई जीव पृथ्वी पर नहीं टिक सकता। जीवके चारों तरफ़ यदि बर्फ़की तरह शीतलता हो, तो

साधारण उद्भिजकी भाँति वह अंगारक भाप ग्रहण करके पुष्ट नहीं हो सकता। इसलिये ऐसी अवस्था जीवावासके प्रतिकूल होती है। उष्णताकी मात्रा पचास डिग्रीसे ऊपर हो जानेपर उद्भिजको मृत प्रायः होते देखा जाता है, इसलिये इस अवस्थाको भी हम कभी जीवावासके उपयोगी नहीं कह सकते। पहिले उद्भिज और पीछे प्राणी है; क्योंकि उद्भिजसे ही प्राणीकी उत्पत्ति है और उद्भिजके अस्तित्वसे ही प्राणीका अस्तित्व है। इस-लिये उष्णताकी इन दो सीमाओंके बाहर यदि उद्भिजकी सृष्टि असम्भव है, तो पहिले प्राणीका भी उसमें टिका रहना अस-म्भव होगा।

अब प्रश्न बहुत ही सहज हो गया है। अब हमको इसका विचार करना है कि, ताप विकीर्ण करते करते अन्तमें हमारी पृथ्वीका कुछ अंश किस समयमें उष्णताकी इन दो सीमाओंके बीचमें हुआ था। इसके सिवा, रौद्रवृष्टि और रातदिनके परि-माण आदिके ऊपर भी जब जीवके जीवन मृत्युका विषय निर्भर किया जाता है, तब यह भी स्थिर करना आवश्यक है कि पृथ्वी की यह प्राकृतिक अवस्था किस समयमें ठीक अबकी तरह थी।

जीवराज्यके प्रतिष्ठाकालके निर्णयके लिये ज्योतिषियोंकी शरणमें जाना वृथा है। पर तब भी इस बारेमें तो ज्योतिषियोंका मतामत लेना पड़ता है कि रातदिनके भेद और सौरताप प्रकाशके परिमाणादि द्वारा जीवका स्वास्थ्य नियमित है या नहीं।

ज्योतिषियोंसे पहिले हमको यही पूछना है कि, इस समय

रातदिनका जो हम सुन्दर विभाग देखते हैं, वह पृथ्वीके जन्मकालसे ही चला आ रहा है या क्या? इस प्रश्नके उत्तरमें ज्योतिषी कहते हैं कि, रातदिनका विभाग ज्योतिष-शास्त्रके हिसाबमें एक बिलकुल नया विषय है। अधिक दिनोंकी बात नहीं है, सत्ताईस सौ वर्षके पहिले बाबीलेनके ज्योतिषी जिस हिसाबसे ग्रहणादिकी गणना कर गये हैं, वह गणना अब उस हिसाबसे नहीं चल सकती। उस प्राचीन हिसाबकी परीक्षासे देखा जाता है कि उस समय पृथ्वीका आवर्त्तन वेग (Rotation) स्पष्ट अधिक था, अर्थात् उस समयके रातदिन छोटे छोटे थे। सुप्रसिद्ध ज्योतिषी मि० एडेम्स साहबने गणना करके दिखाया है कि अब भी पृथ्वीका आवर्त्तन वेग प्रति शताब्दीमें बाईस सेकण्ड कम होता आ रहा है। यह परिमाण है तो बहुत थोड़ा; पर कितनी ही शताब्दियोंमें यही परिमाण तिलका ताल हो जावेगा। इसलिये निश्चित बात है कि बहुत अतीतकालमें पृथ्वी अत्यन्त प्रबल वेगसे आवर्त्तन करके उस समयके रातदिनको बहुत छोटा कर डालेगी।

यह तो हो गया। अब इसकी आलोचना की जाती है कि आवर्त्तनवेगने क्रमशः मन्थर होकर रातदिनका अबकी तरह विभाग किस समयमें किया। किसी कोमल गोल वस्तुको लट्टूकी तरह फिराया जाय, तो उसके ऊपर और नीचेके अंश केन्द्रोपसारणी शक्ति (Centrifugal force) से गोलाईके बीचोंबीच जमा होकर उसको चपटी कर देते हैं। इसी चपटी गोलाई की

भाँति हमारी पृथ्वीका अविकल आकार हो गया है। पृथ्वी जब कोमल अवस्थामें थी, तब उसकी दैनिक आवर्त्तन गतिसे उत्तर और दक्षिण मेरुके पास वाले स्थानोंकी बहुत सी शिला मृत्तिका प्रदेशोंमें आकर जमा होती थी। इसके बाद इसी अवस्थामें जमाव होते जानेसे, पृथ्वीकी उत्तर और दक्षिण दिशायें पहिलेकी तरह दबी हुई रह गई। इस दबावके परिमाणका हिसाब लगानेसे मालूम होता है कि, पृथ्वीकी उत्तर और दक्षिण दिशाओंका व्यास, पूर्व और पश्चिमके व्यासकी अपेक्षा कुल २७ मील कम है। सुविख्यात लार्ड केल्विन साहबने गणना की है कि दस करोड़ वर्ष पहिले पृथ्वीने जमाव बाँधना आरम्भ कर दिया था। इसके पहिले यदि जमाव बँधता तो उस समयके प्रबल आवर्त्तन-वेगसे पृथ्वीकी उत्तर और दक्षिण दिशायें और भी दब जातीं। इसलिये देखा जाता है कि दस करोड़ वर्ष पहिले पृथ्वी किसी प्रकारके जीवकी आवास भूमि नहीं थी।

लार्ड केल्विन यही गणना करके शान्त नहीं हुए, बल्कि उन्होंने एक यह भी हिसाब लगाया कि ताप विकीर्ण करते करते पृथ्वीका पृष्ठ भाग कितने समयमें शीतल होकर वर्त्तमान अवस्थामें आया। आश्चर्यका विषय है कि इस गणनाफलके साथ पूर्वोक्त गणनाफलकी एकता देखी गई। यह हिसाब कोई कठिन नहीं है, बहुत सहज है। यदि एक सुरंग खोदकर उसके भूगर्भका उत्ताप मापा जाय, तो मालूम होगा कि सुरंगका उत्ताप प्रति पचास या साठ फीटमें एक एक डिग्री बढ़ता जाता है।

सहजहीमें अनुमान किया जा सकता है कि पृथ्वीके ऊपरकी सतह ( पर्त ) भीतरसे जो ताप खींचती है, वह उसमें संचित नहीं रहती। परम्परासे सतहोंमें इस तापका एक निरन्तर फैलाव चला आ रहा है। हमारी पृथ्वी सालमें जो ताप फैलाती है, उसका एक हिसाब लार्ड केलविनने लगाया था। इस हिसावमें स्थिर किया गया था कि बहुत गरम और गली अवस्थासे आधुनिक अवस्थामें आनेमें पृथ्वीने कितना समय बिताया है।

जो हो, दोनों गणनाका एक ही फल होते देखकर लार्ड केलविन बड़े विस्मित हुए और उन्होंने यह बात सबको समझा दी कि, दस करोड़ वर्ष पहिले पृथ्वी जीवावासके सर्वथा अनुपयोगी थी। अब प्रश्न किया जा सकता है कि दस करोड़ वर्ष पहिले पृथ्वीमें जीवका वास नहीं था सही ; पर किस समयसे इसमें जीवकी उत्पत्ति आरम्भ हुई, इसका क्या अनुमान नहीं लगाया जा सकता ? लार्ड केलविनने शीत, ताप और जलथलके क्रमिक समावेश पर लक्ष्य रखकर कह दिया था कि, जीवराज्यकी प्रतिष्ठा दो करोड़ वर्षके पहिले कभी नहीं हुई। दस करोड़ वर्ष पहिले सृष्टिकी अभिव्यक्ति आरम्भ हुई थी, और उसकी पूर्ण परिणति होते और भूपृष्ठके सर्वांश जीवावासोपयोगी होते २ उसके बाद आठ करोड़ वर्ष कट गये। यह निश्चयात्मक बात है, इसमें किसी प्रकारका संदेह नहीं है।

लार्ड केलविनके ये सिद्धान्त भूतत्व विशारदोंके इच्छानुसार नहीं हुए। इसलिये इन्होंने जीव राज्यके प्रतिष्ठाका समय निर्द्धा-

रित करनेको एक नई प्रथासे गवेषणा करना आरंभ किया। पाठक जानते होंगे कि भूगर्भकी परीक्षा करनेसे नाना प्रकारके सजे सतहोंमें एकके बाद एक प्राचीन और आधुनिक कई जीवों के ढाँचे देखे जाते हैं। इससे सहजहीमें अनुमान किया जा सकता है कि उन सतहोंके उत्पत्ति-समयमें पृथ्वी पर जीवका अस्तित्व था। पहिले तो भूतत्व-विशारदोंने यह निर्द्धारित करनेके लिये चेष्टा की कि, यह जीवके ढाँचोंसे मिली हुई सतहें कितने दिनोंमें संचित हुई हैं। इस परीक्षासे उन्होंने सिद्धान्त स्थिर किया कि, ये एक लाख फीट सतह जमनेमें जितने वर्ष लगते हैं उतने समयमें जीवका जन्म हो गया था। इस प्रकार जीवके जन्मकालको स्थिर करके भूतत्व-विशारदोंने दिखाया है कि ढाँचे वाले नीचेके सतहोंमें जितने पत्थर मिट्टी हैं उनके स्थानमें स्थान विशेषको बननेमें सात करोड़से सत्तर करोड़ वर्ष लगे हैं। इस लिए देखा जाता है कि, भूतत्वके मतमें सत्तर करोड़ वर्ष पहिले भी हमारी पृथ्वीमें जीवका अस्तित्व था।

इस सिद्धान्तके ऊपर खड़े रहकर भूतत्व-विशारद लार्ड केल-विनकी गणनाका घोर प्रतिवाद करते हैं। पिछले कुछ वर्ष तक इन दोनों दलोंमें अविराम कलह चलता रहा, पर किसीने पराभव स्वीकार नहीं किया। गणनाकी प्रणाली अभ्रान्त होनेपर भी जो स्वीकृत तत्व (Data) लेकर इन दोनों दलोंने गणना की, उसमें बहुत सा भ्रम दिखाई देता है। लार्ड केलविनने प्राचीनके ज्योतिषियोंके हिसाबकी परीक्षासे जान लिया था कि पृथ्वीका

आवर्त्तनवेग कम होता जा रहा है। पर, पृथ्वी और चन्द्रमाके बीचमें किसके वेगने कम होकर प्राचीन और आधुनिक ज्योतिषियोंके हिसाबमें अन्तर डाला है। यह बात लार्ड केलविन स्पष्टरूपसे नहीं दिखा सके थे। इसके बाद उन्होंने पृथ्वीका वर्त्तमान् आकार और उसके जमाव बाँधनेके समयका आकार बराबर ठहराया; पर इसमें भी लोगोंने आपत्ति चलाई। परन्तु कोई विज्ञानी साहस पूर्वक यह बात नहीं कह सका कि, जमाव हो जानेके बाद पृथ्वीके आकारमें कुछ परिवर्त्तन नहीं हुआ। यह बात सत्य है कि, भूपृष्ठसे केन्द्रकी तरफ़ उतरनेसे उष्णताकी वृद्धि होती है, पर भूपृष्ठके सब अंशोंमें यह वृद्धि एक ही मात्रामें बढ़ती है या नहीं इसका प्रमाण आज भी परीक्षासे सिद्ध नहीं हुआ है। इसके सिवाय, रेडियम नामके जो एक धातुका आविष्कार हुआ है, उसे यदि भूगर्भमें अधिक परिमाणमें रखा जाय, तो केलविनकी गणनामें भूल होती है। इस लिये गहरी वृद्धिके साथ प्रत्येक पचास फुटमें एक डिग्री उष्णताकी वृद्धि मान कर लार्ड केलविनने जो गणना की है वह निस्सन्देह अभ्रांत कही जा सकती है। वैसे तो भूतत्व-विशारदोंकी गणनामें भी इस प्रकारके बहुतसे दोष दिखाई देते हैं। इस लिये यह ठीक ठीक बताना असम्भव है कि, जीवके जन्मकालके सम्बन्धमें इन दोनों मतवादोंमें कौनसा मतवाद सत्य है।

इस प्रकारकी सैकड़ों गणनायें जीवतत्वज्ञोंने की हैं, पर कोई भी जीवके जन्मका समय निर्द्धारित नहीं कर सका। किसी

किस जीवतत्वज्ञने तो प्रण कर लिया था, कि हम जीवके जन्मका समय अवश्य ही निश्चित करेंगे, पर वे खाली अनुमान ही लगा लगा कर रह गये ; और अब भी यह नहीं कहा जा सकता कि इस तर्क वितर्क की समाप्ति कब होगी।



# चौथा अध्याय ।

## आकाश-यान !

विज्ञान और अनुभवी लोगोंकी कल्पना सच्ची हो जाती है। मि० जानसन् साहबने "रासेलस्" ग्रन्थमें जो कल्पना की थी, वह अधिकांशमें सत्य उतरी सी जान पड़ती है। इसी प्रकार "८० दिनमें भू-प्रदक्षिणा" (Round the earth in 80 days) नामक ग्रन्थमें मि० भार्नेने जो 'क्लीयर आव् दि क्लाउड्स' नामके यानकी कल्पना की, वह भी इस समय कार्यमें परिणत हुई सी दीखती है। इन सब बातोंसे मालूम होता है कि, श्रीकृष्णको द्वारकासे इन्द्रप्रस्थमें लानेवाले आकाश-यानकी कवि-कल्पना अमूलक नहीं है। सबसे पहले जिस विज्ञान विद्याका परिचय भारतवासी, मानवजातिको प्रदान कर गये हैं, केवल उसीको साधनेके लिये इस समय पाश्चात्य देशवासी चेष्टा कर रहे हैं। अस्तु,

मनुष्योंको, आकाशमें उड़नेकी आज ही इच्छा नहीं हुई, बल्कि बहुत दिनोंसे वे गगनचरोंकी तरह उड़ना चाहते हैं। पश्चिमी देशके पेटेंट आफ़िसकी प्रत्येक वर्षकी विवरणी पढ़नेसे मालूम होता है कि, बहुत दिनोंसे इस विषयके यंत्रादि तैयार करने और उड़नेकी कल बनानेका प्रयत्न चला आ रहा है प्रत्येक आविष्कार-

कर्त्ताने अपने २ आविष्कारके सम्बन्धमें, अपनी बनाई हुई कलोंके प्रत्येक अंशका ऐसे विश्वास और विशद रूपसे वर्णन किया है कि जिसके पढ़नेसे मालूम होता है, मानो इनके ये सारे यंत्र विशेष उपयोगी और सर्वाङ्गपूर्ण निर्दोष हैं। पर, कार्यक्षेत्रमें जब इनकी परीक्षा होती है, तो उनके प्रत्येक अंशमें दोष ही दोष दीख पड़ते हैं। दुःखके साथ कहना पड़ता है कि, ऐसे सैकड़ों प्रकार के विचित्र यंत्र तैयार हुए और लुप्त हो गये; साथ ही इस काम-में लगे हुए सैकड़ों प्रतिभाशाली वैज्ञानिक भी समाप्त हो गये। परन्तु इन विज्ञानियोंके अनुसन्धान और कष्ट सहनेकी बात आज भी जब हमें याद आती है, तो हम स्तम्भित हो जाते हैं।

सबसे पहले सन् १६६६ ई० में मि० कुइम्बीने एक उड़नेवाले यंत्रका आविष्कार किया। इसके दोनों तरफ़ दो पंख, नीचेकी तरफ़ एक पंख और सब प्रकारके जोड़ या बन्धन आदिके कल पुर्ज़े इस प्रकार जुड़े हुए थे कि, इसमें बैठनेवाले मनुष्यका शरीर ज़रा भी हिलनेसे इसका कोई न कोई अंश सुचारु रूपसे कार्य कर सकता था। परन्तु कार्य क्षेत्रमें जब इसकी परीक्षा की गयी, तो यह अपने उद्देश्य-साधनमें भली भांति समर्थ न हो सका। यह देखकर कुइम्बी निरुत्साह नहीं हुए, उन्होंने अपना प्रयत्न बराबर जारी रक्खा; और पांच ही वर्षके बाद एक नया यंत्र तैयार कर डाला। यह यन्त्र ऐसे कौशलसे बनाया गया कि, जैसे मनुष्य जलमें तैरते समय हाथ पांव हिलाया करते हैं, उसी प्रकार हिलानेसे प्रत्येक मनुष्य इसमें बैठकर आकाशमें

उड़ सके। पर खेदका विषय है कि, कार्य क्षेत्रमें इससे भी कुछ फल प्राप्त नहीं हुआ।

इसके बाद यह पता नहीं लगता कि, कुइम्बी निराश होकर स्वर्गवासी हो गये, या उन्होंने आशान्वित हृदयसे फिर कोई अच्छा उड़नेवाला यंत्र तैयार किया। पेटेंट आफ़िसकी विवरणीमें इस विषयका कुछ भी ज़िक्र नहीं है।

सन् १६६६ ई० में, डेविड थेयर नामके एक सज्जनने कुछ उड़ने और ढलकने वाली गाड़ी, एक नाव और रस्सीसे बँधे आश्चर्यजनक यान तैयार किये। इन यंत्रोंके सम्बन्धमें मि० डेविड थेयरकी धारणा थी कि, इनके द्वारा जल, थल और आकाशमें प्रत्येक मनुष्य इच्छानुसार भ्रमण कर सकेगा। परन्तु परीक्षाके समय यह भी बिलकुल निष्फल हुए।

इसके कुछ दिनों बाद अफ़वाह उड़ी कि, प्रोफ़ेसर लांगलेने ठीक सिगरेटके आकारका एक आकाश इंजिन तैयार किया है। अफवाह ही नहीं, बलिक उसी समय इसके प्रत्येक अंशका विशद वर्णन भी प्रकाशित हो गया। लोग सोचने लग गये कि, इसबार लोग अवश्य ही गगनचारी हो सकेंगे। परन्तु इसी समय एक दिन अध्यापक महाशयने एक सभामें साफ़ कह दिया कि, मनुष्योंका आकाशमें, इच्छानुसार विचरना संभव है या नहीं, इसके सम्बन्धमें मैं केवल गवेषणा और परीक्षा ही कर रहा हूं। पर, तौ भी अभीतक किसी कलका आविष्कार नहीं कर सका हूं। जो हो, गवेषणा और परीक्षासे यह विश्वास तो उनके मनमें

अवश्य हो गया था कि, आज नहीं तो कल कोई मनुष्य उड़नेकी कलका आविष्कार कर ही देगा। परन्तु इस बातको भी वे नहीं भूले थे कि, यह काम बहुत शीघ्र नहीं हो सकेगा, और जो लोग ऐसा विचार रहे हैं, उनके ख़यालात झूठे हैं।

सन् १६७० ई० में पूर्वी प्रदेशके फ्रान्सिस-लाने एक आकाशयानकी बात कल्पितकी और अपनी बनाई हुई पुस्तकमें उन्होंने इस बातकी आलोचना भी कर दी। उनकी धारणा थी कि, यदि बारीकीके साथ ऐसे धातुके गोले बनाये जायँ कि जिनके आवरणका भार भीतरकी वायुके गुरुत्वकी अपेक्षा लघुतर हो और उन सबको एक नौकाके नीचे लगाकर नौका उड़ाई जाय, तो आकाश विहार संभव हो सकता है। परन्तु इस विषय की परीक्षा करनेमें किसीका साहस नहीं हुआ। इससे इनकी कल्पना योंही रह गई। बादको केवेंडिशने जब सिद्ध किया कि, निकलनेवाली भाफ़ (Hydrogen-gas) वायुकी अपेक्षा हलकी है, तब डा० ब्लाकने स्थिर किया कि, किसी चीज़के बने पात्रमें यह भाफ़ यत्नके साथ भर दी जाय, तो आपसे आप वह वायुमें ऊंची उठेगी, सन् १७८२ ई० में मि० केवलोने इस विषयकी परीक्षा की; पर इसमें वे साबुनके बुलबुलेके सिवा और किसी भारी चीज़को न उड़ा सके। इसके बाद कागज़के छिद्रहीन सम्पुटको भाफ़से भरनेके लिये बहुत सी परीक्षाएँ की गईं; पर फल कुछ भी नहीं हुआ। कागज़के छोटे छेदोंमेंसे चलाई हुई रस्सीके छोरके द्वारा यह भाफ़ निकलने लगी। सन् १७८३ की ५ वीं जूनको साधा-

रण तौर पर यह परीक्षा की गई कि, तापसे वायु भरकर आकाश यान बनाना संभव है या नहीं ? इसके लिये बहुतसे काग़ज़ मिला कर ११ फीट चौड़ा एक बेलन तैयार किया। उसका कुल वजन ५०० पौंड, अर्थात् ६। मनके लगभग था। और उसके ३२००० घन फ़ीट गैस रक्खी हुई थी। इसके नीचे जब उत्ताप दिया गया, तो ये आकाशयान ऊपरको उठने लगा, काग़ज़ोंकी मिलावट धीरे धीरे फैल कर गोलाकार बन गई और तेज़ चालसे ऊंची उठ कर दस मिनटमें ही डेढ़ मील ऊंची चली गई। इस प्रकार वायु और तापसे उड़ाये जानेवाले व्योमयानोंको मांट-गोलफियर ( Montgolfier ) कहते हैं। इसी वर्ष पेरिस नगरोंमें रबरके बने हुए कितने ही आकाश-यान प्रकट हुए इन सबमें एक भेड़, एक मुर्ग़ी, और एक हंस बिठाकर उड़ाये गये, तो वे सब बहुत ऊंचे उड़ते हुए कुशल पूर्वक नीचे उतर आये। मनुष्योंमें सबसे पहले, मि० पिलेटर-डे-रोज़ियर और उनके सहचर मारक्रीस परेंडेसने खुले बेलून द्वारा आकाशमें विचरण किया। पर इनको अधिक ऊंचे उड़नेका साहस नहीं हुआ। ये लोग केवल ३००० फीट ऊंचे मार्ग पर २५ मिनटमें प्रायः ६ मील तक भ्रमण कर सके। इसी वर्ष मि० चार्लेसने २६ फीट बराबर आकार वाले एक भाफ़ भरे बेलूनमें ट्यूलीरियस राज महलसे बैठकर प्रायः दो मील ऊंचे आकाशमें भ्रमण किया।

सन् १७६४ ई० की १६ वीं जनवरीको १२६ फीट ऊंचे और १०२ फीट व्यासके आकारवाले वायुपूर्ण आकाशयानमें ७ व्यक्ति

सवार हुए। इसके बाद १८०४ में गेलुसक् और वायट विज्ञानियोंने नाना भाँति की परीक्षा करनेके लिये, कितने ही पशु, पक्षी, पतङ्ग, कुछ यंत्र और दूसरी सामग्री आदि चीज़ोंको साथ लेकर बेलून-विहार किया। इसी वर्ष १३ वीं आगस्तको १० बजे दिनके ये लोग एक बार फिर आकाशयानमें सवार हुए और बादलोंके समूहको पार करते हुए प्रायः १३०५० फीट ऊंचे चले गये। वहाँ ३॥ घण्टे तक उन्होंने खूब भ्रमण करके कई विषयोंकी परीक्षा की; और पेरिससे २२ कोसकी दूरी पर एक मेरीमिल गाँवमें ये लोग उतर आये। इसी वर्ष १५ वीं सितम्बर को अकेले गेलुसक्ने फिर आकाशमें भ्रमण किया और प्रायः २ कोस तक ऊंचे उड़ते हुए चले गये। इसबार इन्होंने परीक्षा करते हुए ऊपर की वायुके गुण दोष जान लिये। ऊपर की वायु इनको इतनी शीतल जान पड़ी कि, इनके दोनों हाथ बेक़ाबू होने लगे; और वह इतनी हलकी मालूम हुई कि, इन्हें श्वास लेनेमें भी विशेष कष्ट होने लगा। इसके सिवा, वह वायु अत्यन्त रुखी होनेके कारण, इनको रोटी गलेके नीचे तक उतारना कठिन हो गया। तब इन्होंने खूब परीक्षा करके देखा कि, पृथ्वीके पासकी वायुमें आक्सिजन और नाइट्रोज़नके जितने भाग हैं, ठीक उतने ही ऊपरकी वायुमें भी हैं—अर्थात् सब स्थानोंकी वायुकी प्रकृति एक ही है।

इसके बाद नेपल्सके राज-ज्योतिषी मि० चोरो ब्रियस्ची और सिगनर पेल्ट्रेनीने बहुत ऊंचे आकाशमें उड़नेकी चेष्टा की;

पर वायुहीन स्थानमें पहुँचते ही उनका व्योमयान फट गया। इससे इन्होंने बड़े ही कष्टके साथ अपनी रक्षा कर पायी।

इस समयके समुन्नत विज्ञानका मत है कि, जलकी भाफ़से साधारण कोयलेकी भाफ़ आकाश-यानके लिये अधिक लाभदायक है। इसमें खर्च भी थोड़ा होता है और इसके सहज ही में निकल आनेके कारण बहुत देरतक ऊंचे आकाशमें भ्रमण करना भी संभव होता है। बहुत देरतक आकाशमें उड़नेके लिये चलनेवाली रस्सी (Guide-rope) विशेष लाभदायक है; और समुद्र आदि पार करनेके लिये, व्योमयानके साथ तांबेके बने भाले लगे रहने चाहियें।

सन् १८३६ ई० में ग्रान् नामके एक व्यक्तिने लगातार २२६ बार व्योमयानके द्वारा गगन मण्डलमें भ्रमण किया। इसी वर्ष ७ नवम्बरको ३॥ बजे दिनके वे अपने नौकरोंको साथ लेकर लण्डनसे उड़े और पूर्वी दक्षिणके बीचमें अपनी इच्छानुसार नीचे मार्गपर भ्रमण करते रहे। इन्होंने ८ बजकर ४८ मिनटपर इंगलैंडको छोड़ा था। इंगलैंडसे चलकर ये लोग समुद्रके ऊपर होते हुए सन्ध्या समय फ्रांस देशके ऊपर जा पहुँचे और फिर सारी रात निस्तब्ध आकाशमें भ्रमण करते रहे। परन्तु ठीक आधी रातमें इनको बहुत ही शीत सहनी पड़ी, यहांतक कि, इनके जल, तेल और कहवा आदि जमकर कठिन हो गये। रात बीतनेपर इन्होंने एकबार ऊंचे चढ़कर सूर्य भगवानकी शोभा देखी और फिर नीचे उतरकर घोर अन्धकारमें विहार किया।

इसी प्रकार इन्होंने एक दिनमें भास्कर भगवान्‌को तीनवार उदय और दोवार अस्त होते देखा। इस तरह ये २२० कोस आकाशमें भ्रमण करके दूसरे दिन प्रातःकाल जर्मनीके अन्तर्गत नासोविल-वर्ग स्थानमें कुशलपूर्वक उतर आये।

सन् १७९० ई० में, फ्रान्सके राज्य-विप्लवके समय, आस्ट्रिया-की सेना और फ्रांसके जोडार्न सेनापतिमें जो घोर युद्ध हुआ था, उसमें कर्नेल कुतेल एक युद्ध-कर्मचारीको साथ लेकर एक दिनमें दोवार १३०० फीटतक ऊंचे उड़े और आकाशसे इन्होंने शत्रु-सेनाका सारा हाल देखकर जोडार्नको इशारेसे बता दिया। जोडार्नने उसीके अनुसार काम करके युद्धमें विजय प्राप्त की। पहली वार तो शत्रु सेनाने इनकी ये करतूतें नहीं जान पाई; पर दूसरी वार देखकर इनको तोपोंके गोलोंसे मारनेकी चेष्टा की। परन्तु सौभाग्यका विषय है कि, गोला किसीसे भी उतनी दूर तक नहीं पहुँचा और ये बालबाल बच गये।

इसी प्रकार सन् १८१० ई० में फ्रेञ्चोंके साथ प्रुशियोंका जो युद्ध हुआ था, उसमें भी कई वार व्योम-यानसे काम लिया जाता था।

जबसे आकाशमें उड़नेकी चेष्टा की जा रही है, तभीसे आकाश-यानको अपनी इच्छानुसार चलानेकी भी लोग चेष्टा करते आ रहे हैं। यह चेष्टा कभी बन्द नहीं हुई। सन् १८६१ ई० में, अमेरिकाके सान् फ्रांसिस्को नगरमें रहनेवाले एक वणिक् सम्प्रदायने भाफका विमान तैयार किया और उसे वे अपनी

इच्छानुसार चारों तरफ़ चलाने लगे। यह यान, भाफ़की नावकी तरह भाफ़के बलसे चलता था और पतवारके द्वारा चलानेपर चारों तरफ़ चलने लग जाता था।

वर्त्तमान समयके आकाशयानकी तैयारीके विषयमें परीक्षकोंके दो दल दिखाई देते हैं। एक दलके परीक्षक तो बेलून वा बेलूनके समान, वायुसे हलका और भाफ़ पूर्ण यान बनाना अच्छा समझते हैं, इस दलमें सेंटू डुमेएट ज़ेप्लिन और रोज़ प्रधान मुखिया हैं। दूसरे दलके परीक्षक बेलून आदि यंत्रकी इस क्रिया पर विश्वास नहीं करते। वे भाफ़की शक्तिवाला और चील, बाज, आदि पक्षियोंकी तरह वायुमें निर्भय उड़नेवाले यंत्रका बनाना अच्छा समझते हैं। इस दलमें तीन विज्ञानी मुख्य नेता हैं। उनके नाम ये हैं :—

(१) सर हिरेम मेक्सिम।

(२) प्रोफ़ेसर एस० पी० लांगले।

(३) मि० लारेन्स हार्गनेव।

इन महानुभावोंके कार्यकलाप और विरुद्धताका बहुत लम्बा चौड़ा वर्णन है। वह यहाँ देना उचित नहीं जान पड़ता। आकाशयानकी बातोंपर ध्यान देनेसे यही कहना पड़ता है कि, उद्योगी पुरुष जो न कर लें, वही थोड़ा है।



## पांचवां अध्याय ।

### भूख और उसका परिमाण

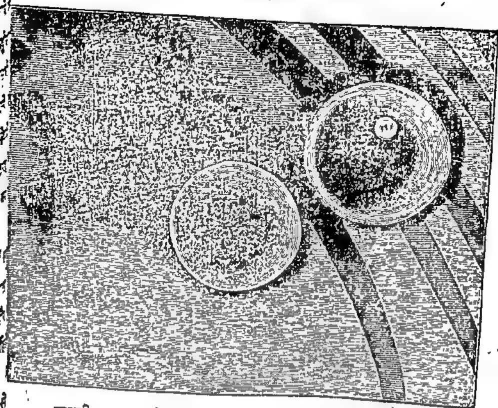


मेरिकाके डाक्टर मिस्टर कार्लसन साहबने हाल हीमें एक पुस्तक लिखी है। पुस्तकका नाम है— 'The Control of Hunger in Health' पुस्तकका प्रकाशक है शिकागो विश्वविद्यालय। इस पुस्तकमें डाक्टर साहबने क्षुधाके प्रकार और परिमाणका निर्णय किया है और उसकी प्रक्रिया बतलाई है। उन्होंने दिखाया है कि देह-यंत्रमें अहारका अभाव होनेसे पाकस्थलीमें तरंगे उठती हैं और वे फैलना व सिकुड़ना आरम्भ करती हैं। इसका जो हमें अनुभव होता है, उसीको हम क्षुधा कहते हैं। डाक्टर कार्लसनने मनुष्य तथा पशु पक्षियोंकी कई अवस्थाओंकी अच्छी तरह जांच की है। आपने मनुष्यकी आरोग्य अवस्थामें, रोगके समय, जागृत अवस्थामें, सोते समय, अहारके बाद और उपवासके बाद, छोटे छोटे बालकों और विविध प्रकारके पशु पक्षियोंकी पाकस्थलीको देखा है और उसके सिकुड़ने तथा फैलनेकी तरंगें नापकर क्षुधाके परिमाणकी फेहरिस्त बनाई है। इसके सिवा आपने एक फूलनेवाली रबरकी नलीको पाकस्थलीमें पहुँचाकर क्षुधाके कम्पनका निर्णय किया

उसकी कण्ठनाली रुँध गई। वह किसी चीज़को खाकर नि
नहीं सकता था ; इसलिये उसके पेटमें एक छेद करके पौन इ
का रबरका एक मोटा नल उसकी पाकस्थलीमें पहुँचाया ग
और उसके द्वारा एक ही बारमें सब खाद्य पदार्थ उसकी
स्थलीमें पहुँचानेकी व्यवस्था की गई। दैवयोगसे ~
कार्लसन्को यह मनुष्य मिला। इन्होंने उसके पेटके छेदमें बि
लीका प्रकाश लगाकर उसकी पाकस्थलीको अच्छी तरह देख
इस परीक्षाके फलसे उन्होंने जिन २ तत्वोंका निर्णय कर पा
उनका वर्णन इस प्रकार है।

पाकस्थली खाद्य शून्य होते ही पहिले धीरे २ उसमें सङ्कु
आरम्भ होता है, और फिर उसका वेग क्रमशः बढ़ता जाता
प्रत्येक सङ्कुचनकी तरङ्गें ३० सेकण्ड तक ठहरती हैं और इ
परिमाणमें ३० मिनटसे ४५ मिनट तक चलती हैं। पहिले
प्रत्येक संकुचन रह २ कर स्वतंत्र रूपसे ठहरता जाता है।
प्रकार एक संकुचनके बाद दूसरे सङ्कुचनके बीचमें २ से
मिनटका अन्तर रहता है। धीरे धीरे ये संकुचन पास प
होते २ एकदम लिप्त होकर एक हो जाते हैं। समर्थ अवस्
बलवान लोगोंकी पाकस्थलीका संकुचन अन्तमें ऐसा प्रबल
एक होता है कि कई मिनट तक पाकस्थलीमें सङ्कुचनकी "ध
धंकार" सी चलती रहती है। कभी २ बच्चोंकी भूखमें भी ऐ
हो जाता है, जिससे बच्चे घबरा उठते हैं।

पाकस्थलीका यह जो सङ्कुचन है, यह ही क्षुधाकी ज्वाला



खाली पाकस्थलीकी तरंगोंका खेल और उनके सिकुड़ने या फैलनेका अनुभव। बस, यही क्षुधा है।

( एक्स-रे से लिया हुआ दूषित पाकस्थली का फोटो। )

( पृष्ठ ४४ )

और जबतक यह सङ्कुचन चलता रहता है, वही क्षुधाका समय है। जब सङ्कुचन ठहर जाता है, तो उसे ठहर जानेको ही हम भूख बुझ जाना कहते हैं। स्वस्थ अवस्थावाले लोगोंको आध घंटेसे अढ़ाई घंटेके बाद भूख मालूम होती है अर्थात् पाकस्थलीमें संकुचन होता है। पर, बच्चोंको तुरन्त ही भूख मालूम होने लगती है।

डाक्टर कार्लसनने पाकस्थलीमें बनावटी संकुचन चलाकर दिखाया है कि, परीक्षित व्यक्ति जब चाहे, तभी उसको भूख लग सकती है। अतएव क्षुधा पाकस्थलीके संकुचनके सिवा और कुछ नहीं है।

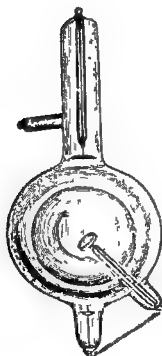
इसके अतिरिक्त डाक्टर कार्लसनने क्षुधा ( Hunger ) और लालसा (Appetite) को पृथक् करके उनकी संज्ञा बतलाई है। उनका कहना है कि लालसा बहुत कुछ मनका विषय है। अतीत-कालमें स्वादिष्ट पदार्थोंके खानेका जो आनन्द हमारी स्मृतियोंमें मुद्रित है, उसके पुनर्वार भोगनेकी इच्छा ही लालसा है। जब चटनी आदि पदार्थ उसी अनुभविक स्मृतिको जागृत करते हैं तब लोग विचारते हैं कि क्षुधा जाग रही। डाक्टर कार्लसनने परीक्षा करके दिखाया है कि चटनी (appetiger) आदि पदार्थ खानेसे, उस समय पाकस्थलीमें जैसा संकुचन चल रहा हो वह वैसाका वैसा स्थगित हो जाता है और आगे नहीं बढ़ने पाता। परन्तु इसको भूख बुझ जाना नहीं कह सकते ; बल्कि इससे एक अनुभव या स्मरण (Sensation) ऐसा जागृत होता है कि जिस

बिजली उत्पन्न करनेका उपाय हम नहीं जानते। यह वस्तु तो स्वयं प्रस्तुत है, इसको किसी प्रकार गति-सम्पन्न करनेसे हम इसका कार्य देख सकते हैं। इसलिये देखा जाता है कि, जब सालफ्यूरिक एसिड्में तांवा और जस्तका पत्र डुबाया जाय, तो बिजली तैयार नहीं होती—केवल स्वाभाविक बिजलीको ही सचल करना पड़ता है।

आज तीस वर्षसे मेक्सवेलके शिष्य बिजलीके इस मतवादका प्रचार करते आ रहे थे। परन्तु बिजली चीज़ है क्या, यह बात इस सम्प्रदायके पाससे साफ़ तौरपर नहीं जानी जाती थी। लोग केवल अनुमानके ज़ोरसे कहते थे कि, शायद जड़के किसी विशेष आकार या धर्मको ही हम बिजलीके रूपमें देखते हैं।

अबतक तो वैज्ञानिकगण मेक्सवेलके सिद्धान्तमें ही आन्दोलन करते आते थे; पर हालमें जो एक नये मतवादकी बात सुनी जाती है, उसकी सत्यतामें उनको और भी घोर सन्देह उत्पन्न हुआ है। इन नये सिद्धान्तियोंका मत है कि, बिजली जड़का विशेष आकार वा धर्मविकाश नहीं है, बल्कि बिजली ही अवस्था विशेषमें पड़कर जड़की उत्पत्ति करती है।

इस नूतन सिद्धान्तको भलीभांति समझना हो, तो पहले धनात्मक और ऋणात्मक बिजली क्या है-यह बात जानना आवश्यक है। धनात्मक बिजलीके विषयमें ये सिद्धान्ती कहते हैं कि,—इस वस्तुके सामान्य २ दोष तो आज भी नहीं जाने जाते, पर इसमें कोई सन्देह नहीं है कि, यह सर्वव्यापी ईथरके छोटे २



एक्स-रेज ।

अंशोंका ही विशेष गुण है। इन अंशोंका आयतन साधारण परमाणु (Atoms) की अपेक्षा बड़ा नहीं है; परन्तु जिस प्रकार परमाणुओंका गुरुत्व देखा जाता है, वैसे धनात्मक बिजलीका गुरुत्व आज भी नहीं पहचाना जाता। प्रोफ़ेसर टामसन्, रेदरफोर्ड, और सर एलीवरलज् आदि बड़े २ आधुनिक विज्ञानी भी इस विषयमें और कुछ भी आविष्कार नहीं कर सके।

ऋणात्मक बिजलीके बहुतसे तथ्य थोड़े दिनोंमें ही जान लिये गये। यह बिजली बहुत छोटे २ जड़-कणोंके आकारमें अवस्थित है। वैज्ञानिक लोग इनको इलेक्ट्रन (Electron) के नामसे पुकारते हैं। वायुशून्य पात्रके दोनों किनारोंपर तार लगाकर बिजली चलाई जाय, तो प्रवाहके साथ इलेक्ट्रन बहुत तेज़ीसे दौड़ते दिखाई देंगे। और यदि यह प्रवाह किसी प्रकार रोक दिया जाय, तो प्रवाहमेंके करोड़ों छोटे २ इलेक्ट्रनोंके धक्केसे रोकनेवाली वस्तु गरम हो जावेगी; और अन्तमें उससे एक प्रकारका प्रकाश भी निकलता दिखाई देगा। रंट्जेन-रश्मि अथवा एक्स-रेज़ (X-Rays) को तो पाठक शायद जानते होंगे। परीक्षासे देखा गया है कि, प्लेटिनम् आदि भारी पदार्थोंके द्वारा इलेक्ट्रनका प्रवाह रोकनेसे, इस रश्मि (किरण) की उत्पत्ति होती हैं। लाखों इलेक्ट्रन जब तेज़ीसे आकर धक्का देते हैं तब प्लेटनिम्के अणु चंचल होकर पासके ईथर—कणोंको कँपा देते हैं। इस कम्पनसे जो प्रकाश उत्पन्न होता है, उसीको 'रंट्जेन रश्मि' कहते हैं।*

* इस रश्मिको जर्मनीके पदार्थ तत्त्व विल्हिल्म् कनराड् रट्जेनने निकाला था।

पहले कहा जा चुका है कि, इलेक्ट्रनका आयतन बहुत छोटा होता है। एक परमाणु जो बहुत ही छोटे स्थानको रोकता है, उसमें करोड़ों इलेक्ट्रन अनायास चलाये फिराये जा सकते हैं। इसलिये इन छोटे २ कणोंका प्रवाह किसी पदार्थसे नहीं रुकता। आलम्यूनियम आदि हलकी धातुके फल इलेक्ट्रनके प्रवाह-मार्गमें रख दिये जायँ, तो जैसे चलनीके छेदोंसे आटा बाहर निकलता है, वैसे अधिकांश इलेक्ट्रन सहज ही में बाहर निकल जावेंगे।

जिस प्रकार लोहेके पास चुम्बक रख देनेसे लोहा अपने आप चुम्बकके पास आ जाता है, इसी प्रकारका एक गुण इलेक्ट्रनके प्रवाहमें, हालहीमें देखा गया है। वायुहीन नलके भीतरवाले इलेक्ट्रन--प्रवाहके पास चुम्बकका एक टुकड़ा रख दो,--प्रवाहका मार्ग टेढ़ा होकर चुम्बकके पास आ जावेगा। चुम्बककी कितनी शक्तिसे प्रवाहका मार्ग कितना टेढ़ा हो जाता है—इसका हिसाब करके केम्ब्रिज-विश्वविद्यालयके अध्यापकोंने इलेक्ट्रन—सम्बन्धी

---

सन् १८९२ ई० में इन्होंने एक वायुशून्य काचका नल तैयार किया और नलके दोनों सिरे "S" के आकारके बनाये। फिर आपने परीक्षागारमें आप उसके भीतर बिजलीका प्रकाश उत्पन्न करने लगे। इस समय घरके एक ओर कितनी ही पुस्तकें रक्खी हुई थीं। उनमेंसे एक पुस्तकके नीचे आलोकचित्रका एक प्लेट और उसीके बीचमें एक चाभी थी। थोड़ी देरके बाद उस प्लेटकी सहायतासे प्रकाशका चित्र उठाते हुए आपने देखा कि, प्लेटके ऊपर चाबीकी रेखा स्पष्ट अंकित हो गई है। ऐसा होनेका कारण स्थिर न करके, आपने फिर उसी तरह परीक्षा की, परन्तु फल नहीं हुआ। तब आपने मालूम कर लिया कि, एक गुप्त प्रकाशकी चमकने उस गरम नलसे प्रकाशित होकर, मैले कागजके पन्नेमें प्रविष्ट होते हुए चाबीका चित्र प्लेट पर अंकित कर दिया है, परन्तु वे रश्मि रेखाएँ केवल मैले पदार्थोंका ही भेदनेमें समर्थ नहीं हैं, बल्कि सूर्य किरणकी भांति रासायनिक गुणोंसे भी है



रेडियमके एक परमाणुसे हजारों इलेक्ट्रोनोंका निकलना।

रेडियम एक धातु है और मूल पदार्थ है, इसलिये प्रचलित सिद्धान्तके मतसे इसका रूपान्तर नहीं होता। मगर इसमें से भी इलेक्ट्रन बराबर निकलते रहते हैं और निकलकर, अपना जमाव बांधकर हेलियम Helium नामक एक दूसरे ही धातुकी उत्पत्ति करते हैं।

आदि लाना हो, तो मज़दूर जिस प्रकार खड़ा रहकर एकके कंधेसे दूसरेके कंधे पर बोझ चलाता जाता है, उसी प्रकार धातुके श्रेणीबद्ध अणु भी बिजली चलाते रहते हैं।

तरल-पदार्थमें बिजली चलानेका काम कुछ स्वतन्त्र प्रकारका है। धातु पदार्थोंके अणुओंमें जैसे इलेक्ट्रन, बिजली ढालकर छुट्टी पा जाते हैं, वैसा तरल-पदार्थमें नहीं होता। तरल-पदार्थके इन्हीं दो अंशोंमें बेटरीके तार लगा दिये जायँ, तो तारके एक सिरेसे इलेक्ट्रनका प्रवाह बाहर निकलकर दूसरे सिरेकी तरफ़ दौड़ेगा ; और साथ ही इलेक्ट्रन, उस तरल पदार्थके कुछ २ अणुओंको भी साथ ले जायँगे। जिस प्रकार भारहीन घोड़ा खूब दौड़कर चल सकता है और भारवाले घोड़ेकी चाल आपसे आप धीमी हो जाती है, इसी प्रकार धातु वा वायुहीन स्थानके वेगकी तुलनामें तरल-पदार्थके भीतरकी बिजलीका वेग बहुत कम हो जाता है।

केम्ब्रिजके विज्ञानियोंने और एक विशेष गुणका आविष्कार

---

गुण है और इसी कारण इसने टूटी हुई हड्डी, शरीरमें घुसी हुई गोली, शरीरके भीतरका फोड़ा आदि ज्योंके त्यों दिखा कर शल्य-विद्याकी बड़ी भारी सहायता की है। इसके सिवा इसमें यह खास गुण है कि, यदि शरीरके उपर ये प्रकाश डाला जाय, तो शरीरके भीतरकी सब हड्डिया ऐसी प्रत्यक्ष दिखाई देने लगती हैं, मानों उनपर चर्म मांसादि है ही नहीं। परन्तु अधिक देर तक यदि इसकी क्रिया होती रहे, तो शरीरके उस स्थानमें घाव पड जाता है। इस घाव करनेवाली शक्तिकी सहायतासे कितने ही विशेष रोग मिटानेकी चेष्टा हो रही है और आशा की जाती है कि शीघ्र ही इससे कई विशेष रोग मिटानेका काम लिया जाने लगेगा। इस नवाविष्कारके बदलेमें रंट्जेनको नोबल्-पुरस्कार मिला।

किया है। इन्होंने देखा है कि, इलेक्ट्रनका प्रवाह एकाएक चलाया जाय या किसी पदार्थसे इनकी चाल रोक दी जाय, तो पासकी ईथर आलोड़ित होकर एक प्रकारकी छोटी तरंग उत्पन्न करती है। बस, तरंगकी यह उत्पत्ति ही प्रकाश आदि किरणोंका मूल कारण है। ईथर तरंगसे जो प्रकाश उत्पन्न होता है, उसे हम बहुत दिनोंसे जानते आ रहे हैं; पर किस प्रकार वह ईथर तरंगोंको उत्पन्न करता है, यह बात हम नहीं जानते थे। अब बड़े २ विज्ञानी लोग अनुमान करते हैं कि, इलेक्ट्रनकी चालके आकस्मिक परिवर्त्तनसे ईथरमें जो तरङ्ग पैदा होती है, वही शायद प्रकाशकी उत्पत्तिका एकमात्र कारण है।

रसायन-शास्त्रमें मौलिक जड़-पदार्थोंकी खोज करनेसे, हाइड्रोजन, लोहा, तांबा, आदि कई मूल जड़ोंका उल्लेख देखा जाता है। विज्ञानका मत है कि, इन पदार्थोंमेंसे कुछ मूल पदार्थोंके संयोगसे जगत्की सब वस्तुयें तैयार होती हैं। इस प्राचीन सिद्धान्तका अबतक तो कोई प्रतिद्वन्द्वी नहीं था; पर इलेक्ट्रनके आविष्कारसे इसकी सत्यतापर बहुतोंको सन्देह उत्पन्न हो गया है। इस समयके कितने ही प्रसिद्ध विज्ञानी कहते हैं कि, इलेक्ट्रन ही एक मौलिक जड़ है, इसके सिवा और कोई मौलिक जड़-पदार्थ नहीं है।



# सातवाँ अध्याय ।

## बिजली उत्पन्न करनेवाले यंत्र ।



जलीका हाल पाठकोंने ऊपरके लेखमें पढ़ लिया। अब बिजली उत्पन्न करनेवाले कुछ साधारण यंत्रों पर विचार किया जाता है। सबके पहले यूरोप आदि देशोंके विद्वानोंको बिजली उत्पादक नियम अचानक मालूम हुए। सन् १७६० ई० में इटालीके प्रसिद्ध विद्वान मि० गेलवनीको एक अद्भुत बातका पता लगा। बात यह थी कि उसकी मेज़पर, जिस पर बिजलीकी कल रक्खी थी—एक मेंडककी दो टांगें उसकी एक हड्डीके सहारे किसी कामके लिए रक्खी थीं। इत्तिफ़ाक़ ऐसा हुआ कि गेलवनीके सहायकने दोनों टांगोंको एक छुरीसे छू लिया। छूते ही दोनों टांगें फड़फड़ाईं और कोई एक क्षणभर तक फड़फड़ाती रहीं। *

* अमेरिकामें "राकफेलर इन्स्टिट्यूट" नामका एक बड़ा भारी गवेषणालय है। इसके प्रोफेसर हैं—डा० केरेल। आपका नाम विज्ञानके रसिक पुरुषोंमें तो बहुत दिनोंसे प्रसिद्ध था परन्तु सन् १९१२ ई० में जब विज्ञान विषयका आपको पुरस्कार मिला, तभीसे सारी दुनियाकी दृष्टि आपकी तरफ विशेष खिच गई। सब आश्चर्यके साथ पूछने लगे कि केरेलने ऐसा क्या काम किया, जिसके बदलेमें इनको सवा लाख रुपयेका नोबल-पुरस्कार मिला। अस्तु।

डा० केरेलने वह काम कर दिखाया, जो दो सौ वर्ष पहिले जादूका काम समझा जाता था। आपने प्रयोगोंसे सिद्ध कर दिया कि एक प्राणीका अवयव दूसरे प्राणीमें

जब गेलवनीने यह देखा, तो समझा कि यह क्रिया जानवरी बिजलीके कारण हुई है, क्योंकि गेलवनी जानवरी बिजलीमें विश्वास रखता था। इसके बाद गेलवनीने मेंढ़ककी टांगोंपर अनेक धातुओंको छूछू कर परीक्षा की और जब जब दो भिन्न २ धातुओंसे टांगें छूई गईं तभी उसमें फड़फड़ाहट दिखाई दी।

इसके पश्चात् इटाली देशका एक विद्वान जिसका नाम 'वोल्टा' था, बिजली उत्पन्न करनेवाले सरल यन्त्रोंकी खोजमें लगा। पहले तो वह जानवरी बिजलीमें विश्वास नहीं रखता था, इसीलिये उसका मत गेलवनीके मतसे विपरीत था। एकबार उसने एक सीसा और एक चांदीका टुकड़ा अपनी जीभके ऊपर और नीचे यों ही अकस्मात् रख लिया और उनको पकड़े रहा। ज्योंही उन टुकड़ोंके बाहरी सिरे आपसमें मिल गये त्योंही

---

शरीरमें सरलतासे बिठाया जा सकता है। यह बात सिद्ध करनेके पहले आपने बहुतसे प्रयोग जीवती नसोंपर करके देखे। मुर्गी, कुत्ता, बिल्ली और मेंढकके शरीरमेंसे जीवती नसें निकालकर आपने परीक्षा की और सूक्ष्म दर्शक यन्त्रके कांचपर उन नसोंको रख कर प्रत्येकके ऊपर रक्तमें रहनेवाले 'नाड़ी पोषक' प्रवाही पदार्थकी बूंदें डालीं। इस प्रकार यन्त्रसे जब आप परीक्षा कर चुके, तो नसोंकी स्थितिका अभ्यास करना शुरू किया। इन कांचके टुकड़ोंको आपने अण्डे सेवनेके काममें आनेवाली पेटीमें थोड़ी गरमी देकर, रखदिये। इससे वे थोड़ी ही देरमें, शरीरमें रहनेवाली नसें जैसा काम करती हैं—ठीक वैसा ही काम करने लगीं। धीरे धीरे वहां कई नसोंमेंसे पहलेकी अपेक्षा बहुत सी मोटी मोटी नसें पैदा होने लगीं, और जैसे सब प्राणियोंके शरीरमें नसें काम किया करती हैं, वैसा ही काम होने लगा। जिस प्रकार शरीरमें उत्पत्ति और पुनरुत्पत्ति द्वारा चेतन शक्ति टिकी हुई है, वैसी ही क्रिया इस यंत्रके कांच पर होने लगी। एक कांचके ऊपर एक हड्डीका पतला टुकड़ा दूसरी हड्डी बनाने लगा; दूसरेके ऊपर एक कलेजेकी नस, अपने स्वरूपकी दूसरी नस बनाने लगी, यहां दूसरे गुर्देको बनाने लगा और एक छोटीसी हृदयकी नस, वैसी ही दूसरी

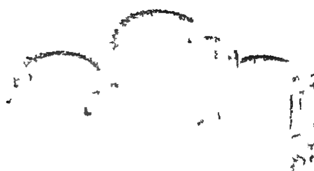
वोल्टाजीको एक अजीव स्वाद आया। उस विद्वानके दिलमें यह बात खटकी और उसने अनेक धातुओंके टुकड़ोंको इसी तरह जीभपर लगाया, परन्तु जब जब दो भिन्न धातुओंके टुकड़े आपसमें लगे और उनके बाहिरी किनारोंमें स्पर्श हुआ तब तब अजीब स्वाद निकला। विद्वान वोल्टाने सोचा कि दो विजातीय धातुओंके केवल स्पर्शसे ही बिजली बनती है और मेरे तजुर्बेमें जीभ और गेलवनीके तजुर्बेमें मेंढ़ककी टांगोंने केवल विद्युत्वाहक वस्तुका काम दिया। गेलवनीकी जानवरी बिजली कोई चीज़ नहीं है।

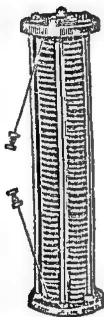
वोल्टाने इसी सम्बन्धमें अनेक परीक्षायें कीं और हरएक तजुर्बेमें बिजलीकी तादादको मापा। इस तरह उसने मालूम किया कि जस्ता और तांबा इन दोनों धातुओंके मिलानेसे अच्छी बिजली पैदा होती है। तांबेपर धन और जस्तेपर ऋण बिजली

---

बढ़ानेमें भी तोड़ परिश्रम करने लगी। इनमें भी जिन जिन प्राणियोंके शरीरसे ये नसें निकाली गई थीं, उनकी अवस्थाके ऊपर नसोंके बढ़नेका आधार था, जैसे अवस्था छोटी हो, तो बढ़नेका वेग ज़ियादा और बड़ी हो तो कम। इसी हिसाबसे एक गर्भावस्थामेंसे निकाला हुआ मुर्गीका बच्चा तुरन्त बढ़ गया। इन सारी बातोंके प्रयोगमें डा० केरेलके सिद्धान्तोंका विश्वास दिलानेवाला, शरीरके बाहरके धड़कता हुआ हृदय ही था।

मुर्गीके बच्चे के हृदयके दो छोटे टुकड़ोंको आपने एक काचके ऊपर रक्खे और फिर उनपर रक्तकी कुछ बूंदें डालीं। बूंदोंसे पोषण होकर दोनों टुकड़े बराबर धड़कने लगे और सामान्य हृदयकी अपेक्षा अधिक तेज़ीसे धड़कने लगे। दोनोंमेंसे छोटा टुकड़ा एक मिनटमें १२० बार और बड़ा ९० बार धड़कने लगा। दृश्य वास्तवमें देखने योग्य था। शरीरमें तो धड़कनेका उपयोग होता ही है, पर बाहर इन दोनों हृदयोंका अकारण धड़कता रहना वास्तवमें आश्चर्यकी बात थी। तीन दिनतक ये बराबर धड़कते रहे और इनमें कुछ फेरफार नहीं हुआ। चौथे दिन इनका वेग कुछ कम होने लगा, बड़ेकी ४० और छोटेकी ९० बार धड़कन होने लगी।



वोल्टाका विद्युत्घट श्रेणी।

( पृष्ठ ५१ )

बनती है। वोल्टाने धातुओंको इस श्रेणीमें रक्खा (जस्ता, सीसा, रांग, लोहा, तांबा, चांदी, सोना) कि कोई धातु अपने आगेवाली धातुके छूनेपर 'ऋणविद्युत्निश्चित' हो जाती है और दूरकी धातुओंके मिलानेसे प्रबल बिजली बनती है।

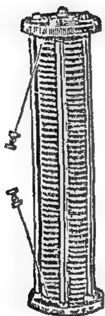
वोल्टाने सोचा कि यदि कई तहें तांबे और जस्तेकी लगाई जावें तो और भी प्रबल बिजली बनेगी। इसी विचारपर उसने कई तहें इस तरह जमाईं कि नीचे तांबा फिर जस्ता, फिर तांबा फिर जस्ता, परन्तु हरएक युगलको एक नमकके घोलसे भींगे हुए काग़ज़से अलग रक्खा और तब अन्तमें दोनों तहोंको स्पर्श करने पर एक तेज़ चिनगारी मालूम हुई। यह यन्त्र वोल्टाकी "विद्युत्-घटश्रेणी" (Volta's pile) के नामसे प्रसिद्ध हुआ।

पानीसे भींगे हुए काग़ज़के पट्ठे दो चार रोज़में सूख जाते

---

इसके बाद आपने दोनोंको धोकर साफ़ किया और ताज़ी नई खुराक दी, इससे घंटे डेढ़ बाद दोनों नये अवतारमें परिणत हो गये। आध घंटेके भीतर दोनों फिर धड़क उठे, बड़ा एक मिनटमें १२० बार और छोटा १६० बार धड़कने लगा और इस चहल-क़दमें दोनोंका आकार भी बढ़ने लगा। बढ़ते बढ़ते दोनोंके बीचका अन्तर कम होने लगा और अन्तमें दोनों बराबर होकर धड़कने लगे, इस प्रकार डा० महाशयने अपनी इच्छानुसार उनको १०२ दिनतक ज़िन्दा रखकर अन्तमें दूसरा जन्म लेनेको भेज दिया। इस सिद्धान्तको प्रकट करनेके लिये आपने एक आश्चर्यजनक खिलौना भी बनाया है।

आपने एक बिल्लीके शरीरमेंसे आवश्यकतानुसार अवयव निकालकर उनको एक कांचके बड़े बरतनमें दवाके साथ भर दिया। इसी प्रकार हृदय, फेफड़ा, कलेजा, गुर्दा, झोजरी और आंतें सब बराबर भर दिये, थोड़ी देरके बाद यह नया शरीर काम करने लगा। फेफड़ेमें नालो द्वारा वायु पहुंचने ही इसने क्रिया शुरू की और हृदय धड़क कर नसोंमें रक्त पहुंचाने लगा। झोजरी और आंतडे पाचन क्रियामें लग गये और गुरदा भी अपना काम करने लगा। यूरोप और अमेरिकाके बड़े बड़े शस्त्रवि-



वोल्टाको विद्युद्घट श्रेणी।

डेनियलघट ।

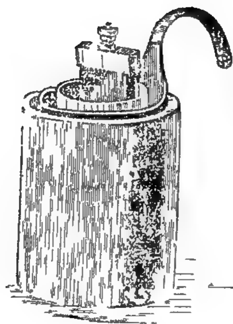
(१) डेनियलघट—एक तांबेका प्याला होता है जिसमें एक रिसनेवाला मिट्टीका प्याला रहता है। मिट्टीके प्यालेमें जस्तका डण्डा रक्खा जाता है। तांबेके प्यालेमें नीले थोथेका घोल और मिट्टीके प्यालेमें गन्धकका हलका तेज़ाब भरा जाता है। इस घटमें बिजलीकी धारा एकसी बहती है। मामूली कामको यह घट अच्छा है।

(२) बुनसनघट—इसमें एक चीनीका प्याला होता है जिसमें जस्तेकी चद्दर पड़ी रहती है और उसी प्यालेमें रिसनेवाला मिट्टीका बरतन रहता है, जिसमें कारबनका डण्डा रक्खा जाता है। मिट्टीके प्यालेमें शोरेका तेज़ाब और चीनीके प्यालेमें गन्धकका तेज़ाब भरा जाता है।

---

एक तो अधिक परिमाणमें काम आनेवाली सस्ती दवाई, और दूसरा ज़ख्मकी अणुमें अणु पहुंचानेवाला यन्त्र। इन दोनोंकि खर्चके लिये पहले बहुतसा आगापीछा हुआ। अन्तम राकफेलर कार्यालयने इसका सारा भार अपने ऊपर लेकर इस कामको आगे बढाया। पहले हेनरी डिकेकी नामक अङ्गरेज बड़े विज्ञानी हो चुके हैं। इन्होंने प्राय २०० के ऊपर प्रयोगोंसे Hyperchlorite of soda & Boric Acid के मिश्रणसे मीठे जैसा एक पदार्थ निकाला। डा० कैरेल इस पदार्थसे काम लेने लगे, और इससे उनको अपने काममें बड़ी सहायता मिली।

डा० कैरेलके निकाले हुए यन्त्रसे ज़ख्मीका ज़ख्म इस प्रकार अच्छा किया जाता है। पहले तो ज़ख्मके ऊपर पारदर्शक धातुका पत्तर रखकर उसके किनारे किनारे पेंसिल फेर कर उसका चित्र लिया जाता है। इस चित्रसे ज़ख्मकी लम्बाई और [illegible]का नाप मालूम हो जाता है। इस प्रकार मालूम किया हुआ नाप, ज़ख्मीकी [illegible] और पहले [illegible] हुआ सुधार इन तीनों बातोंसे ज़ख्मीके आराम होनेका [illegible] है। इस कामको डा० कैरेलके एक सहायक मित्र



डेनियलघट।

डेनियलघट।

(१) डेनियलघट—एक तांबेका प्याला होता है जिसमें एक रिसनेवाला मिट्टीका प्याला रहता है। मिट्टीके प्यालेमें जस्तका डण्डा रक्खा जाता है। तांबेके प्यालेमें नीले थोथेका घोल और मिट्टीके प्यालेमें गन्धकका हलका तेज़ाब भरा जाता है। इस घटमें बिजलीकी धारा एकसी बहती है। मामूली कामको यह घट अच्छा है।

(२) बुनसनघट—इसमें एक चीनीका प्याला होता है जिसमें जस्तेकी चद्दर पड़ी रहती है और उसी प्यालेमें रिसनेवाला मिट्टीका बरतन रहता है, जिसमें कारबनका डण्डा रक्खा जाता है। मिट्टीके प्यालेमें शोरेका तेज़ाब और चीनीके प्यालेमें गन्धकका तेज़ाब भरा जाता है।

---

एक तो अधिक परिमाणमें काम आनेवाली सस्ती दवाई, और दूसरा ज़ख़्मके अणुमें अणु पहुंचानेवाला यन्त्र। इन दोनोंकी खर्चके लिये पहले बहुतसा आगापीछा हुआ। अन्तमें राकफेलर कार्यालयने इसका सारा भार अपने ऊपर लेकर इस कामको आगे बढ़ाया। पहले हेनरी डिडेकी नामके अङ्गरेज बड़े विज्ञानी हो चुके हैं। इन्होंने प्रायः २०० से ऊपर प्रयोगोंसे Hyperchlorite of soda & Boric Acid के मिश्रणसे मीठे जैसा एक पदार्थ निकाला। डा० केरेल इस पदार्थसे काम लेने लगे, और इससे उनको अपने काममें बड़ी सहायता मिली।

डा० केरेलके निकाले हुए यन्त्रसे ज़ख़्मीका ज़ख़्म इस प्रकार अच्छा किया जाता है। पहले तो ज़ख़्मके ऊपर पारदर्शक धातुका पत्तर रखकर उसके किनारे किनारे पर पेन्सिल फेर कर उसका चित्र लिया जाता है। इस चित्रसे ज़ख़्मकी लम्बाई और चौड़ाईका माप मालूम हो जाता है। इस प्रकार मालूम किया हुआ माप, ज़ख़्मीकी अवस्था और पहले ज़ख़्ममें हुआ सुधार इन तीनों बातोंसे ज़ख़्मीके आराम होनेका दिन निश्चय कर दिया जाता है। इस कामको डा० केरेलके एक सहायक मित्र

(३) ग्रोवघट—इसमें और बुनसनघटमें केवल इतना ही भेद है कि बजाय कार्बनके प्लाटीनमकी चद्दर इस्तेमाल की जाती है।

(४) बाई क्रोमेट घट—एक काचकी बोतलमें पोटास-बाई-क्रोमेटका घोल भरा जाता है जिसमें कार्बन और जस्तके पतले डंडे एक चौखटेमें जड़े हुए रहते हैं।

(५) लकलांशी घट—एक बोतलमें नौसादरका घोल भरा रहता है, जिसमें एक जस्तका डण्डा पड़ा रहता है और एक मिट्टीका प्याला मैंगनीज़ डाई आक्साईड और कारबन आदि मसालोंसे भरा हुआ भी इसीमें पड़ा रहता है।

सूखे घटमें केवल पांच मसाले इस्तेमाल किये जाते हैं। मैंगनीज़डाई आक्साईड, ज़िङ्कक्लोराइड, नौसादर, जस्ता और कारबन। एक काग़ज़के चोंगेमें मैंगनीज़डाई, आक्साईड और थोड़ासा जिङ्कक्लोराइडकी लेई भरकर कारबनका डण्डा खड़ा-कर दिया जाता है, और जस्तेके चोंगेमें नौसादर और जिङ्क-क्लोराइडकी लेई भरकर काग़ज़के चोंगेको रख देते हैं और

---

[illegible]

सबको काग़ज़से मढ़कर बन्द कर देते हैं। केवल ज़रा सा जस्तेका सिर और ज़रासा कारबनका सिरा निकला रहता है। इन सिरोंमें तार झले रहते हैं।

वोल्टाकी विद्युत्‌घट श्रेणी जब तैयार हो गई और विद्वानोंने जस्ते और तांबेके तारोंके मिलान पर चिनगारी देखी, तो उन लोगोंने अनुमान किया कि विद्युत्‌घटसे पैदा की हुई बिजली और लीडनजारकी बिजली एक ही पदार्थ है, परन्तु केवल एक समानताकी होना इस बातकी काफ़ी दलील नहीं हो सकती थी। इसलिये विद्वान् लोग उन सब कामोंको जो लीडनजारकी बिजलीसे हो सकते थे, घटकी बिजलीसे करनेकी कोशिशमें लगे।

यह जाननेके लिए कि घटकी बिजली पानीमें होकर बह सकती है या नहीं, विद्वान् निकलसनने लगभग १७९३ ई० में वोल्टाकी घट श्रेणीके सिरोंसे दो तार एक पानीके प्यालेमें डाल दिये। थोड़ी ही देरमें पानीमेंसे बुलबुले निकलने लगे। इन बुलबुलोंकी गैसको निकलसनने एक बरतनमें भरा और परीक्षासे जाना कि यह हाईड्रोज़न है जिसको आक्सीजनमें जलानेसे पानी बन जाता है। इस तरकीबने यह बात सिद्ध कर दी कि पानी, बिजलीसे दो वायुओंमें फट जाता है। यही बात लीडनजारसे भी हासिल हो चुकी थी इसलिए विद्वान लोगोंने यह नतीजा निकाला कि लीडनजारकी बिजली और घरकी बिजली वास्तवमें एक ही पदार्थ हैं। बादमें और कई परीक्षायें हुईं जिन्होंने इस बातकी सचाईको बहुत दृढ़ कर दिया।

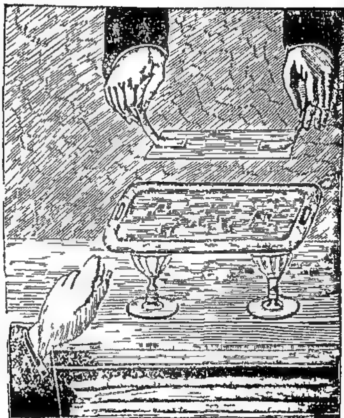
अब, वोल्टाके निकाले हुए और भी दो यंत्रोंका वर्णन सुन लीजिये।

ये यन्त्र ऐसे सरल और चमत्कारी हैं कि, बालक भी इनसे बिजली उत्पन्न कर सकता है।

*पहला यन्त्र।*

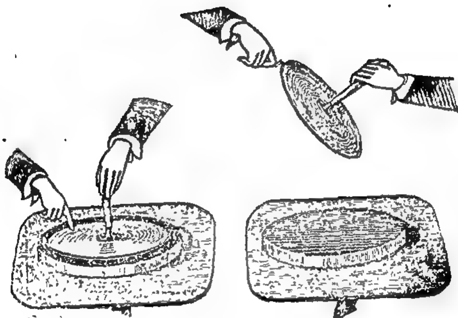
लोहेके पतरेकी एक मामूली रंगी हुई पान रखनेकी रकाबी जो लगभग एक या डेढ़ फुट लंबी हो ले कर, उस पर समा सकनेवाला एक मोटे काग़ज़का टुकड़ा काटिये। टुकड़ेके दोनों ओर एक एक पट्टी काग़ज़की चिपकाइये, कि जिन्हें पकड़ कर काग़ज़का टुकड़ा ऊंचा किया जा सके। इसके बाद, कार्य आरंभ करते समय रकाबीको काचके दो प्यालों पर रखिये। काच इसलिये बताया गया है कि, वह बिजलीका अवाहक ( Non-conductor ) है।

पहले उस मोटे काग़ज़के हाथेवाले टुकड़ेको दिया या आगके सामने रखकर ख़ूब गरम कर लीजिये और फिर अच्छी तरह साफ़ और सीधा करके उसे लकड़ीकी मेज़ पर रखिये। पश्चात् उस पर मज़बूत और कपड़े साफ़ करनेवाला ब्रुश ख़ूब ज़ोरसे सपाटेके साथ घिसिये। थोड़ी देरतक घिसनेके बाद उस काग़ज़को रकाबी पर रखिये; और अङ्गुठेके पास वाली अङ्गुलीको मोड़कर उसके सिरेसे रकाबीका स्पर्श कीजिये और उस हाथ वाले काग़ज़को उंचा कर लीजिये। तुरन्त आपकी मोड़ी हुई



वाल्टाका पहला विद्युज्जनक यन्त्र।

(पृष्ठ ६२)



वोल्टाका दूसरा विद्युज्जनक यंत्र ।

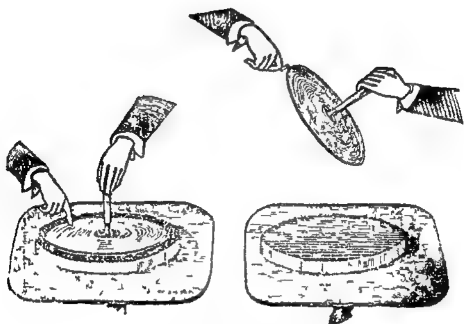
(पृष्ठ ६३)

अंगुलीके सामने बिजलीकी चिनगारी निकलेगी।* इसी प्रकार कागज़को फिर रकाबी पर रख कर मोड़ी हुई अंगुलीको पास ले आयंगे, और कागज़को ऊंचा कर लेंगे, तो उसी तरह बिजली की चिनगारी निकलेगी। इसी तरह पांच छै बार आसानीके साथ हो सकता है।

दूसरा यन्त्र।

लकड़ीके एक गोलेको एक तरफसे कुछ गहरा और साफ करके उसमें कलई कीजिये। फिर उसमें एक इंच मोटा और बारह इंच ब्यास वाला रालका एक गोल चक्र रखिये। इनके सिवा, नीचेसे कलई किया हुआ और कांचके विश्लेपक (Insulator) हाथावाला लकड़ीका एक दूसरा हलका वा छोटासा चक्र बनाकर अलग रखिये। कार्य आरंभ करते समय, इन सारी चीज़ोंको पहले अच्छी तरह गरम करके, उस रालके चक्र को बिल्लीके चमड़ेसे खूब सपाटेके साथ रगड़िये। बस, इसीसे उसमें एक प्रकारकी बिजली उत्पन्न हो जायगी, जिसे विज्ञानी लोग ऋण विद्युत् (Negative Electricity) कहते हैं। इसके बाद, उस कांचके हाथवाले लकड़ीके चक्रको रालके चक्र पर रखिये। इससे रालकी ऋण विद्युत् लकड़ीके चक्रकी धन विद्युत् (Positive Electricity) को नीचे खींचेगी और उसे दबाती हुई ऊंची उठाकर बाहर निकाल देगी। इसलिये यदि

* एक आदमी कागजको ऊंचा करले और दूसरा, मोड़ी हुई अंगुलीके सिरेसे रकाबीके सिरेको छूए।



वोल्टाका दूसरा विद्युज्जनक यंत्र ।

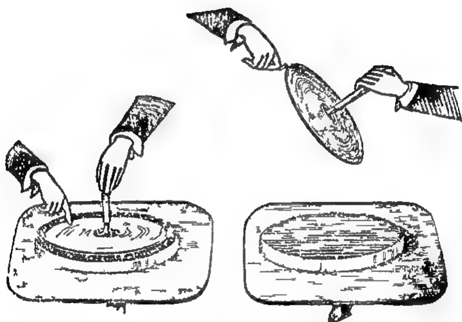
(पृष्ठ ६३)

अंगुलीके सामने बिजलीकी चिनगारी निकलेगी।* इसी प्रकार काग़ज़को फिर रकाबी पर रख कर मोड़ी हुई अंगुलीको पास ले जायंगे, और काग़ज़को ऊंचा कर लेंगे, तो उसी तरह बिजली की चिनगारी निकलेगी। इसी तरह पांच छै बार आसानीके साथ हो सकता है।

## दूसरा यन्त्र।

लकड़ीके एक गोलेको एक तरफसे कुछ गहरा और साफ करके उसमें कलई कीजिये। फिर उसमें एक इंच मोटा और बारह इंच व्यास वाला रालका एक गोल चक्र रखिये। इनके सिवा, नीचेसे कलई किया हुआ और काचके विश्लेषक (Insulator) हाथावाला लकड़ीका एक दूसरा हलका वा छोटासा चक्र बनाकर अलग रखिये। कार्य आरंभ करते समय, इन सारी चीज़ोंको पहले अच्छी तरह गरम करके, उस रालके चक्र को बिल्लीके चमड़ेसे खूब सपाटेके साथ रगड़िये। बस, इसीसे उसमें एक प्रकारकी बिजली उत्पन्न हो जायगी, जिसे विज्ञानी लोग ऋण विद्युत् (Negative Electricity) कहते हैं। इसके बाद, उस काचके हाथवाले लकड़ीके चक्रको रालके चक्र पर रखिये। इससे रालकी ऋण विद्युत् लकड़ीके चक्रकी धन विद्युत् (Positive Electricity) को नीचे खींचेगी और उसे दबाती हुई ऊंची उठाकर बाहर निकाल देगी। इसलिये यदि

* एक आदमी कागजको ऊंचा करले और दूसरा, मोड़ी हुई अंगुलीके सिरेसे रकाबीके सिरेको छुए।



वोल्टाका दूसरा विद्युज्जनक यन्त्र।

अंगुलीके सामने बिजलीकी चिनगारी निकलेगी।* इसी प्रकार कागज़को फिर रकावी पर रख कर मोड़ी हुई अंगुलीको पास ले जायगे, और कागज़को ऊंचा कर लेंगे, तो उसी तरह बिजली की चिनगारी निकलेगी। इसी तरह पाच छै बार आसानीके साथ हो सकता है।

दूसरा यन्त्र।

लकडीके एक गोलेको एक तरफसे कुछ गहरा और साफ करके उसमें कलई कीजिये। फिर उसमें एक इंच मोटा और बारह इंच व्यास वाला रालका एक गोल चक्र रखिये। इनके सिवा, नीचेसे कलई किया हुआ और काचके विश्लेपक ( Insulator ) हाथावाला लकडीका एक दूसरा हलका या छोटासा चक्र बनाकर अलग रखिये। कार्य आरम्भ करते समय, इन सारी चीजोंको पहले अच्छी तरह गरम करके, उस रालके चक्र को बिल्लीके चमडेसे खूब सपाटेके साथ रगड़िये। बस, इसीसे उसमें एक प्रकारकी बिजली उत्पन्न हो जायगी, जिसे विज्ञानी लोग ऋण विद्युत् (Negative Electricity) कहते हैं। इसके बाद, उस काचके हाथवाले लकडीके चक्रको रालके चक्र पर रखिये। इससे रालकी ऋण विद्युत् लकडीके चक्रकी घन विद्युत् ( Positive Electricity ) को नीचे खींचेगी और उसे दबाती हुई ऊंची उठाकर बाहर निकाल देगी। इसलिये यदि

* एक आदमी कागजको ऊंचा करले और दूसरा, मोड़ी हुई अंगुलीके सिरसे रकाबीके सिरेको छुए।

काचके हाथवाले चक्रको ऊंचा उठाकर उसके ऊपरी हिस्सेके किनारेके पास अंगुली रक्खी जाय, तो तुरन्त उसमेंसे बिजली की चिनगारी निकलती है। इसी प्रकार दुबारा इस चक्रको लालके चक्र पर रक्खा जाय और फिर उठाकर अंगूठेके पास वाली मोड़ी हुई अंगुली इसके किनारेसे लगाई जाय, तो उसी तरह बिजलीकी चिनगारी दिखाई देगी। इसी भांति तीन चार बार आसानीके साथ हो सकता है। इसमें काम आनेवाले इन सारे उपकरणोंको "बिजली उत्पन्न करनेवाला यन्त्र" कहते हैं, और अंगरेज़ीमें यह इलेक्ट्रोफ़ोरस ( Electrophorus ) कह लाता है।

इन यन्त्रोंमें काम आने वाली चीज़ें इतनी सहज और सस्ती हैं कि वे चाहे जहां मिल सकती हैं। यदि ऐसे यन्त्रोंके द्वारा पाठशालाके विद्यार्थियोंको शिक्षा दी जाया करे, तो उनका वैज्ञानिक ज्ञान बहुत शीघ्र उन्नति कर सकता है। क्योंकि बड़े बड़े कीमती और कठिन यन्त्रों द्वारा दिया जानेवाला ज्ञान उनके हृदयमें कठिनतासे प्रवेश कर पाता है। दूसरे, एक साधारण मनुष्य, वैसे कीमती यन्त्रोंके स्वप्नमें भी दर्शन नहीं कर सकता, और यदि दूसरोंके पास देख कर उनसे कुछ ज्ञान प्राप्त करनेकी इच्छा करता है, तो वह प्रायः निष्फल ही होती है। ऐसी दशामें सोचनेकी बात है कि, इस प्रकारके सहज यन्त्रों द्वारा दी जानेवाली शिक्षाएं हमारे देशके बालकोंका कितना हित करेंगी!

---

# आठवाँ अध्याय ।

## आकृतिके साथ प्रकृतिका सम्बन्ध ।



देशिक गुरुओंसे सुन २ कर हमारा ऐसा विश्वास हो गया था, कि हमारे पूर्वजोंने दर्शन-शास्त्रकी चर्चा करनेपर भी विज्ञानकी विशेष आलोचना नहीं की ; और साधारण शिल्प व ज्योतिष-शास्त्र उन्होंने विदेशसे संग्रह किया था। परन्तु वास्तवमें यह बात नहीं है। ग्रहगणों आदिमें गणित ज्योतिषका प्रमाण होनेपर भी हम उनके फलित ज्योतिष पर भ्रम करते थे और हाथ पावोंकी रेखा, बाहुका दीर्घपन, शरीरके तिल इत्यादिके साथ मनुष्यके बल, सुख, दुःख, दरिद्रता, ऐश्वर्य, मूर्खता और पण्डिताई आदिका क्या गूढ़ संबन्ध है—इन बातोंपर हमारा शिक्षित-समाज पूर्णतया विश्वास नहीं करता था। किन्तु, इस समय जब पाश्चात्य-जगत्में इन सब विषयोंकी आलोचना करके इन्हें एक विज्ञान-सङ्गत-शास्त्रमें परिणत करनेकी चेष्टा हो रही है, तो हमें भी विश्वासके साथ इस विषयकी आलोचना करना ही चाहिये।

प्रकृतिका कार्य अपरिवर्तनीय और अवश्यम्भावी है। अग्निकी दाह-शक्ति, जलका शीतलपन और सूर्य चन्द्रादिके उदय या अस्तका कभी व्यतिक्रम नहीं हो सकता। बस, इसी निश्चयके

ऊपर विज्ञानकी भित्ति स्थापित है। दीर्घ कालतक बहुतसे लोगों पर परीक्षा करके जो फल मिलता है, वह विज्ञानके सम्बन्धमें एकाएक पूर्ण सत्य न होनेपर भी, मिथ्या कभी नहीं हो सकता। आज हम इस लेखमें डाक्टरनी ब्लेकफोर्ड ( Dr. Katherine M H. Blackford. ) महाशयाका परीक्षा-फल वर्णन करनेकी चेष्टा करते हैं। आशा है कि हमारे प्रेमी पाठकोंको यह रुचिकर होगा।

ब्लेकफोर्डने गत १६ वर्षतक १२ हज़ार मनुष्योंपर बारम्बार परीक्षा करके जो २ फल प्राप्त किये हैं, वे सब विस्तार पूर्वक उन्होंने लिखे हैं। मार्किन (युक्तराज्य), कनाडा और मेक्सिको देशोंमें बहुत दिनोंतक परीक्षा कर लेनेके पश्चात् उन्होंने १६ वैदेशिक राज्योंमें भ्रमण किया। बहुतसे राज्योंमें वे परामर्श देनेके लिये बुलाई गयी और बहुतसे आफ़िसोंमें उन्होंने परामर्श दिया। उनके परामर्शसे हज़ारों पदाभिलाषी स्त्री, पुरुष उपयुक्त पदोंपर नियुक्त किये गये। यहां तक कि इन सब देशोंके कारखानों वा आफ़िसोंमें काम करनेके लिये ६-१० हज़ार मनुष्य इन्हींके परामर्शसे भर्ती किये गये थे। इन्होंने पदाभिलाषियोंकी प्रकृतिका, आकृति और परिच्छदादि बाहरी लक्षणोंसे परीक्षापूर्वक निर्णय करके जो मनुष्य जिस पदके योग्य था उसे वही पद दिया, और आगेके लिये इस विषयका एक नूतन शास्त्र तैयार कर डाला। उनका मत है, कि प्रत्येक व्यक्तिके चरित्रके प्रधान

अपने प्रकृत लक्षण नहीं छिपा सकता और वास्तवमें हमारे स्वभाव, चरित्र, प्रवृत्ति आदि कभी छिपी रहनेकी चीज़ें नहीं हैं। हमारे चलने फिरने और भाव-भङ्गी तथा मुखकी आकृति आदिसे विद्वान् हमें पहचान ही लेते हैं।

*पदाभिलाषियोंकी निर्वाचन-प्रणाली ।*

नियोग—परिदर्शक, (Employment–Supervisor) अपने पासके आफिसोंमें सहकारियोंके साथ, उपस्थित पदाभिलाषियों और अनुपस्थित व्यक्तियोंके निवेदन पत्रोंकी परीक्षा करते हैं। इसी समय उन्हें प्रकृतिके बहुतसे लक्षण मालूम हो जाते हैं। भिन्न भिन्न शक्ति, बुद्धि, श्रमशीलता, मिताचार, निर्बुद्धता, अपव्यय, चरित्र-हीनता आदि बहुतसे विषयोंका थोड़ा बहुत ज्ञान वे उसी समय प्राप्त कर लेते हैं। इसके सिवाय, जैसे कोई स्वाधीन व्यवसायसे हानि उठा कर मजबूरन नौकरी करने आया है, कोई अपने जीवनमें इसका पहला ही स्वाद लेगा, कोई सब तरहसे निराश होकर अपने परिवारके वास्ते रोटी कपड़ा प्राप्त करनेको आया है, कोई अपनी खुशीसे ही नौकरी करना पसन्द करता है —इत्यादि २ बातोंका परिणाम, वे प्रत्येक मनुष्यके मुखका मनोभाव देखकर उसी समय निकाल लेते हैं।

प्रत्येक पदाभिलाषीको परीक्षा-गृहमें प्रवेश करते ही परिदर्शक या उनके सहकारियोंके सामने बैठना पड़ता है; उसी समय वे उसके लक्षणोंसे जान लेते हैं, कि यह नौकरीके योग्य है या नहीं, यह कोई विशेष कार्य कर सकेगा या नहीं। इस विषयमें स्लेक-

ऊपर विज्ञानकी भित्ति स्थापित है। दीर्घ कालतक बहुतसे लोगों पर परीक्षा करके जो फल मिलता है, वह विज्ञानके सम्बन्धमें एकाएक पूर्ण सत्य न होनेपर भी, मिथ्या कभी नहीं हो सकता। आज हम इस लेखमें डाकृरनी ब्लेकफोर्ड ( DR. Katherine M. H. Blackford. ) महाशयाका परीक्षा-फल वर्णन करनेकी चेष्टा करते हैं। आशा है कि हमारे प्रेमी पाठकोंको यह रुचिकर होगा।

ब्लेकफोर्डने गत १६ वर्षतक १२ हज़ार मनुष्योंपर बारम्बार परीक्षा करके जो २ फल प्राप्त किये हैं, वे सब विस्तार पूर्वक उन्होंने लिखे हैं। मार्किन (युक्तराज्य), कनाड़ा और मेक्सिको देशोंमें बहुत दिनोंतक परीक्षा कर लेनेके पश्चात् उन्होंने १६ वैदेशिक राज्योंमें भ्रमण किया। बहुतसे राज्योंमें वे परामर्श देनेके लिये बुलाई गयी और बहुतसे आफ़िसोंमें उन्होंने परामर्श दिया। उनके परामर्शसे हज़ारों पदाभिलाषी स्त्री, पुरुष उपयुक्त पदोंपर नियुक्त किये गये। यहां तक कि इन सब देशोंके कारखानों वा आफ़िसोंमें काम करनेके लिये ६-१० हज़ार मनुष्य इन्हींके परामर्शसे भर्ती किये गये थे। इन्होंने पदाभिलाषियोंकी प्रकृतिका, आकृति और परिच्छदादि बाहरी लक्षणोंसे परीक्षा-पूर्वक निर्णय करके जो मनुष्य जिस पदके योग्य था उसे वही पद दिया, और आगेके लिये इस विषयका एक नूतन शास्त्र तैयार कर डाला। उनका मत है, कि प्रत्येक व्यक्तिके चरित्रके प्रधान प्रधान लक्षण बाहरसे ही प्रकट होते रहते हैं। कोई भी व्यक्ति

अपने प्रकृत लक्षण नहीं छिपा सकता और वास्तवमें हमारे स्वभाव, चरित्र, प्रवृत्ति आदि कभी छिपी रहनेकी चीज़ें नहीं हैं। हमारे चलने फिरने और भाव-भङ्गी तथा मुखकी आकृति आदिसे विद्वान् हमें पहचान ही लेते हैं।

*पदाभिलाषियोंकी निर्वाचन-प्रणाली ।*

नियोग—परिदर्शक, (Employment-Supervisor) अपने पासके आफ़िसोंमें सहकारियोंके साथ, उपस्थित पदाभिलाषियों और अनुपस्थित व्यक्तियोंके निवेदन पत्रोंकी परीक्षा करते हैं। इसी समय उन्हें प्रकृतिके बहुतसे लक्षण मालूम हो जाते हैं। भिन्न भिन्न शक्ति, बुद्धि, श्रमशीलता, मिताचार, निर्बुद्धता, अपव्यय, चरित्र-हीनता आदि बहुतसे विषयोंका थोड़ा बहुत ज्ञान वे उसी समय प्राप्त कर लेते हैं। इसके सिवाय, जैसे कोई स्वाधीन व्यवसायसे हानि उठा कर मजबूरन नौकरी करने आया है, कोई अपने जीवनमें इसका पहला ही स्वाद लेगा, कोई सब तरहसे निराश होकर अपने परिवारके वास्ते रोटी कपड़ा प्राप्त करनेको आया है, कोई अपनी ख़ुशीसे ही नौकरी करना पसन्द करता है —इत्यादि २ बातोंका परिणाम, वे प्रत्येक मनुष्यके मुखका मनोभाव देखकर उसी समय निकाल लेते हैं।

प्रत्येक पदाभिलाषीको परीक्षा-गृहमें प्रवेश करते ही परिदर्शक या उनके सहकारियोंके सामने बैठना पड़ता है ; उसी समय वे उसके लक्षणोंसे जान लेते हैं, कि यह नौकरीके योग्य है या नहीं, यह कोई विशेष कार्य कर सकेगा या नहीं। इस विषयमें

योंसे परिदर्शकगण स्थिर कर लेते हैं, कि अमुक व्यक्ति अपने स्वभाव और शिक्षाके प्रभावसे अमुक कार्यके उपयुक्त है।

### श्रेणी—विभाग।

डा० ब्लेकफोर्ड और उनके शिष्यगण आगन्तुक पदाभिलापियोंके निम्नलिखित ६ गुणोंकी तरफ़ विशेष लक्ष्य रखते हैं; जैसे—धरण (Stature), क़द या डील डौल (Size), चहरा (Form), वर्ण (Colour), गठन (Structure), मिक़दार (Proportion), सङ्गति (Consistency), आकृति (Expression) और अनुभव (Experience).

कितने ही लोग ऐसे हैं, कि जिनका मुख देखनेमें हलकी धरणका मालूम होता है, और कितने ही ऐसे हैं, जिनका मुख मोटी धरणका दीखता है।

जिन लोगोंका मुख हलकी धरणका होता है वे अभिमानी होते हैं, उनकी मति शीघ्र ही उत्पन्न हो जाती है और वे पलभर में प्रश्नका उत्तर दे डालते हैं। ऐसे आकृति विशिष्ट-व्यक्ति सौन्दर्यप्रिय हुआ करते हैं। ये डरपोक, अप्रिय, निष्ठुर आदि दुर्गुणोंसे युक्त मनुष्योंके बीचमें आनन्दके साथ काम नहीं कर सकते। भद्दे और मोटे काम करना ये लोग पसन्द नहीं करते, ये तो रेशम और साटनके काम करनेमें चतुर हुआ करते हैं, और मणि माणिक्य, सोना चांदी आदिके कोमल शिल्पको भी ये लोग ख़ूब पसन्द करते हैं।

मोटी धरणके मनुष्योंका मुख देखनेमें 'भोंथा' मालूम होता

है। इनके बाल, चर्म, आकृति, हाथ पांव आदि अंग प्रत्यंग, और पोशाक परिच्छद, कथावार्त्ता आदि सभी बातें मोटी धरणकी हुआ करती हैं। ये लोग अभिमानी नहीं होते और कोयलेकी खान, कारखानें आदिमें मैले कुचैलेसे न घबरा कर आनन्दके साथ काम कर सकते हैं। इस प्रकारके लोग ही बड़े २ हथौड़े बड़े २ लोहेके खंभे, स्टीमर और जहाज़के बड़े २ यन्त्रोंको उत्साह और दृढ़ताके साथ काममें लाते हैं। देहकी गठन देख कर सारे शरीरका बल अनुमान किया जा सकता है। सुदीर्घ सिक्ख पहलवानकी देहमें जितना बल रह सकता है उतना हृष्ट पुष्ट ब्राह्मणकी देहमें होना असम्भव है।

कितने ही लोग स्वभावतः कृश होते हैं, और कितने ही मोटे। किसी २ की दीर्घ नाकका अगला हिस्सा कुछ बाहर निकला सा होता है, और चिबुक वा कपाल मानो पीछे हटे हुएसे होते हैं। ऐसे सकोण मुख (Angular) का नाम ब्लेकफोर्ड महाशयाने मृदङ्ग मुख (Convex face) रक्खा है। और जिनका मुख गोलाकार वा चपटा सा होता है, या जिनका कपाल ऊंचा और चिबुक आगेकी तरफ़ निकली हुई हो—नासिका बैठी हो, आंखें बैठी हों—ऐसे मुखोंका नाम बन्दर या डमरू मुख (Concave face) रक्खा है।

मृदङ्ग ... और सब विषयोंमें तत्पर होता है। ...नकी प्रकृतिके विरुद्ध ...ने आना समझ



मृदङ्ग और डमरू मुख

( पृष्ठ ७१ )

है। इनके चाल, धर्म, आकृति, हाथ पांव आदि अंग प्रत्यंग, और पोशाक परिच्छद, कथावार्त्ता आदि सभी बातें मोटी धरणकी हुआ करती हैं। ये लोग अभिमानी नहीं होते और कोयलेकी खान, कारखानें आदिमें मैले कुचैलेसे न घबरा कर आनन्दके साथ काम कर सकते हैं। इस प्रकारके लोग ही बड़े २ हथौड़े बड़े २ लोहेके खंभे, स्टीमर और जहाज़के बड़े २ यन्त्रोंको उत्साह और दृढ़ताके साथ काममें लाते हैं। देहकी गठन देख कर सारे शरीरका बल अनुमान किया जा सकता है। सुदीर्घ सिक्ख पहलवानकी देहमें जितना बल रह सकता है उतना हृष्ट पुष्ट ब्राह्मणकी देहमें होना असम्भव है।

कितने ही लोग स्वभावतः कृश होते हैं, और कितने ही मोटे। किसी २ की दीर्घ नाकका अगला हिस्सा कुछ बाहर निकला सा होता है, और चिबुक या कपाल मानो पीछे हटे हुएसे होते हैं। ऐसे सकोण मुख (Angular) का नाम ब्लेकफोर्ड महाशयाने मृदङ्ग मुख (Convex face) रक्खा है। और जिनका मुख गोलाकार या चपटा सा होता है, या जिनका कपाल ऊंचा और चिबुक आगेकी तरफ़ निकली हुई हो—नासिका बैठी हो, आंखें बैठी हों—ऐसे मुखोंका नाम चन्द्र या डमरू मुख (Concave face) रक्खा है।

मृदङ्ग मुखवाला व्यक्ति झगड़ालू, चंचल और सब विषयोंमें तत्पर होता है। देर और सुस्ती होना इसकी प्रकृतिके विरुद्ध है। यह स्वार्थी होता है, अपने विषयको सोलहो आना समझ



मृदङ्ग और डमरु मुख

( पृष्ठ ७१ )





## सन्दिग्ध स्वभावका नमूना ।

१—पहली ठोड़ी एक बुद्धिमान मनुष्यकी है। जो किसीके लिये कुछ करनेके पहिले एकबार अपना मतलब अच्छी तरह देख लेता है, ऐसे लोग अच्छे होते हैं किन्तु सच्चे मित्र नहीं हो सकते। २—दूसरी ठोड़ीवाला मनुष्य सहज-





## भयानकताका नमूना ।

१—पहली ठोड़ीसे क्रोधी और गुण्डे-पनेका परिचय मिलता है। २—दूसरी साहित्यकला रसिक और अस्थिरमति लोगोंकी है। ३-तीसरी वाला मनुष्य लोगोंके साथ मिलजुल कर चलनेमें होशियार होता है; पर उसमें





## सीधेपनका नमूना ।

१—पहली ठोड़ी खूबसूरत है लेकिन रम-णियों जैसी है। २-दूसरी मामूली स्वभावके लोगोंकी है, इन लोगोंमें सतता, समता और विश्वस्तता है, मगर ये लोग बहुत करके झग-ड़ालू होते हैं। ३-तीसरी ठोड़ीवाला मनुष्य

लेता है, और उसमें दूसरेकी असुविधा होने पर भी दृष्टि-पात नहीं करता। इस प्रकारके सारे लोग फलाफलका अच्छा बुरा विचार न करके काम कर बैठते हैं। ये लोग एक न एक काम लेनेमें हमेशा व्यस्त रहते हैं। इनके कामवाले लोग कार्यकुशल, (Practical men), कवित्व शक्ति ,विहीन, नीरस प्रकृतिके, सूक्ष्म बुद्धि और चतुर होते हैं।

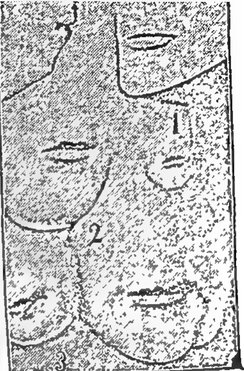
निर्बलेन्द्रिय लोग सरल प्रकृतिके होते हैं, मनकी बात मन हीमें छिपी रखना, ये लोग अच्छा नहीं समझते। इन लोगोंसे बुरे शब्द कह दिये जायं, तो भी ये अप्रसन्न नहीं होते; पर तीव्र —बुद्धि न होनेके कारण ये अपने काममें प्रायः भूल जाते हैं,— इसीलिए वाणिज्य-व्यवसायमें ये लोग अच्छी उन्नति नहीं कर सकते, इनके "धन-स्थानमें शनि" देखे जाते हैं। इस प्रकारके लोग कलहप्रिय होते हैं, और हमेशा अशान्त रहते हैं। इन लोगोंमे जो गुण हैं वे भी इनका मिज़ाज चिड़चिड़ा होनेके कारण, काममें नहीं आते। हर समय मनुष्य एकसे अधिक प्रकृति पाते रहनेके कारण ही सब दोष एक व्यक्तिमें मौजूद नहीं रहते,—यह बात हमेशा मनमें रखना चाहिये।

जिन मनुष्योंके मुख जितने सूक्ष्म (Angular) होंगे, उनके गुण भी पूर्वोक्त व्यक्तियोंकी अपेक्षा उतने ही अल्प होंगे। उमरू या चन्द्र मुखवाले लोग अधिकतर हाज़िर-जवाब होते हैं, इनकी बात विश्वासके योग्य होती है, किसी कार्यमें अग्रसर होनेके पहले ये खूब आगा पीछा सोच लेते हैं,—एकाएक किसी

कामको नहीं कर बैठते ! इनकी वाचालता प्रकृतिके विरुद्ध होती है, ये धीरे धीरे थोड़ी बातें करते हैं; पर वे बातें दार्शनिक और काल्पनिक मालूम होती हैं। इन लोगोंकी प्रकृति नम्र और मधुर, मिज़ाज ठण्डा, चरित्र सच्चा, स्वभाव बड़ा कोमल और शान्तिप्रिय होता है। मृदंग मुखवाले लोगोंकी तरह इनके सुन्दर चेहरे, आंख व मुखसे यद्यपि कोई बुद्धिका भाव नहीं झलकता है, तथापि इनकी उत्तर देनेकी शक्ति बड़ी प्रबल हुआ करती है।

ब्लेकफोर्ड महाशयाका विश्वास है, कि वर्ण (रंग) के साथ शारीरिक और मानसिक कितने ही गुणोंका सम्बन्ध है। रक्त-हीन, क्षुद्र नेत्र और श्वेत रंगवाले मनुष्य जगत्‌में सबकी अपेक्षा अस्थिर प्रकृतिके हुआ करते हैं। किन्तु कृष्णवर्ण और काफ़िर जातिवाले मनुष्य शान्त-स्वभावसे पराधीनताके लिये विख्यात हैं, दास-वृत्तिमें ये लोग फ़ौरन ही तैयार हो जाते हैं।

जिस मनुष्यका गौरवर्ण जितना अधिक होगा, उसके अहं-कार, चंचलता, झगड़े, क्रोध और परिवर्त्तनशीलताके भाव उतने ही अधिक होंगे। किन्तु, जिस मनुष्यका रंग जितना काला होगा, उतना ही वह दृढ़प्रतिज्ञ, और सीधे सादे भावका होगा। सुन्दरी स्त्रियां कुछ लोगोंसे प्रशंसा और उच्च पद पाती रहती हैं; पर काला मनुष्य उस प्रशंसा की अपेक्षा सार-पदार्थ, जीव-जन्तु और प्रकृतिके प्रति अनुरक्त रहता है। इसके बन्धु-बान्धवोंकी संख्या कम होनेपर भी यह स्वयमही सच्चे बन्धुत्व-



## विरुद्धताका नमूना।

१—पहली ठोड़ी चञ्चलमति मनुष्यकी है। यह नियमकी पाबन्दीका विरोधी होता है। गोलमाल इसको प्रिय है। यह ठोड़ी उदण्ड-मान स्वभावकी भी परिचायक है। २—दूसरी सत्, सिद्धान्त किन्तु दुःखी लोगोंकी है।



## पौरुषप्रियता।

१—पहली ठोड़ी इन्द्रियविलासी और अति-प्रिय लोगोंकी है। २—दूसरी दृढ़ संकल्प और दुःखी लोगोंकी है। ३—तीसरी वाला मनका भाव छिपानेमें चतुर होता है।



## भाव सामंजस्यका नमूना!

१—पहली ठोड़ीवाला सदा, किन्तु विश्वास साफ नहीं होता। इसके स्वभावमें दूसरोंकी समालोचना करनेकी शक्ति होती है २—दूसरी ठोड़ी स्त्रियोंकी भांति कोमलता और ममता दिखलाती है। ३—तीसरी चतुर, और

कामको नहीं कर बैठते ! इनकी वाचालता प्रकृतिके विरुद्ध होती है, ये धीरे धीरे थोड़ी बातें करते हैं; पर ये बातें दार्शनिक और काल्पनिक मालूम होती हैं। इन लोगोंकी प्रकृति नम्र और मधुर, मिज़ाज ठण्डा, चरित्र सच्चा, स्वभाव बड़ा कोमल और शान्तिप्रिय होता है। मृदंग मुखवाले लोगोंकी तरह इनके सुन्दर चेहरे, आंख व मुखसे यद्यपि कोई बुद्धिका भाव नहीं झलकता है, तथापि इनकी उत्तर देनेकी शक्ति बड़ी प्रबल हुआ करती है।

ब्लेकफोर्ड महाशयाका विश्वास है, कि वर्ण (रंग) के साथ शारीरिक और मानसिक कितने ही गुणोंका सम्बन्ध है। रक्त-हीन, क्षुद्र नेत्र और श्वेत रंगवाले मनुष्य जगत्में सबकी अपेक्षा अस्थिर प्रकृतिके हुआ करते हैं। किन्तु कृष्णवर्ण और काफ़िर जातिवाले मनुष्य शान्त-स्वभावसे पराधीनताके लिये विख्यात हैं, दास-वृत्तिमें ये लोग फ़ौरन ही तैयार हो जाते हैं।

जिस मनुष्यका गौरवर्ण जितना अधिक होगा, उसके अहं-कार, चंचलता, झगड़े, क्रोध और परिवर्त्तनशीलताके भाव उतने ही अधिक होंगे। किन्तु, जिस मनुष्यका रंग जितना काला होगा, उतना ही वह दृढ़प्रतिज्ञ, और सीधे सादे भावका होगा। सुन्दरी स्त्रियां कुछ लोगोंसे प्रशंसा और उच्च पद पाती रहती हैं; पर काला मनुष्य उस प्रशंसा की अपेक्षा सार-पदार्थ, जीव-जन्तु और प्रकृतिके प्रति अनुरक्त रहता है। इसके बन्धु-बान्धवोंकी संख्या कम होनेपर भी यह स्वयमही सच्चे बन्धुत्व-

का पात्र है। इस प्रकारके व्यक्ति शुरूसे ही भक्त होते हैं, और उनके कार्यमें स्वभावतः ही एक श्रृङ्खला रहती है,—ऐसा वैसा भाव इन लोगोंमें नहीं देखा जाता। सुन्दर व्यक्ति विचित्रता और परिवर्त्तनका बड़ा प्रेमी होता है, एक ही समयमें यह विभिन्न प्रकारके बहुतसे काम सुचारू रूपसे सम्पन्न कर सकता है। किन्तु, काला व्यक्ति बहुतसा परिवर्त्तन पसन्द नहीं करता, और न विचित्रता-प्रिय ही होता है, हां मनोनीत विषयमें अपनी सारी शक्ति लगा देता है।

### उत्कृष्ट मस्तिष्कके लक्षण ।

जिस अङ्गका व्यवहार जितना अधिक होता है, वह उतना ही पुष्ट होता है। इसलिये जिनके मस्तिष्क और स्नायु-मण्डल अधिक पुष्ट दिखाई दें, वे लोग बुद्धिमान और चिन्ताशील हुआ करते हैं। उनकी उद्भावन-शक्ति तीव्र होती है और नये नये विषयोंका आविष्कार करना इनके मस्तिष्कका पहिला काम रहता है। इस प्रकारके लोगोंका मस्तक बृहत् विशेषतः कपाल या कानके ऊपरका भाग चौड़ा होता है; ठोढ़ी और कंधेका पिछला भाग अपरिसर होता है ; और अस्थि व मांसपेशी भी इनकी कुछ मोटी व कोमल होती हैं। एक बातसे इनका अंग-प्रत्यङ्ग कृश मालूम होता है, कि इनका मस्तिष्क मोटा होनेपर भी शरीर पुष्ट नहीं होता। इसके सिवाय इन लोगोंके शरीरका चमड़ा विवर्ण, मुखमण्डल तिकोना, चेहरा और शरीरकी गठन कोमल और चाल तेज़ होती है। इस प्रकारके लोग आत्मनिर्भर

शील हुआ करते हैं। दूसरेके अन्नसे अपना निर्वाह करना ये लोग अच्छा नहीं समझते।

इस प्रकारके चेहरे वाले लोग मशहूर पण्डित व दार्शनिक ही हों,—यह कोई ख़ास बात नहीं है। पर, इतना अवश्य है, कि ये लोग 'दिमाग़वाले' कहलाते हैं। हिसाब नवीस, ख़ज़ांची, वक्ता, लेखक, प्राइवेट सेक्रेटरी आदि होकर बुद्धिके काम ये लोग ही किया करते हैं। इसके अतिरिक्त आढ़तके काममें अव्वल नम्बर, वकीलोंमें प्रधान, परामर्शदाताओंमें श्रेष्ठ और डाक्टरीमें वैज्ञानिक-डाक्टर ये लोग ही होते हैं। परन्तु इस श्रेणीके लोगोंमें कोई अच्छा विचारपति नहीं देखा जाता।

*काम वाले लोगोंके लक्षण*

काम वाले लोगोंका चेहरा और तरहका होता है :—

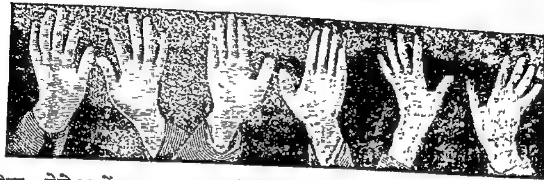
इनके शरीरकी हड्डियां मोटी और मांसपेशी अधिकतर पुष्ट होती हैं। मुंह इनका तिकोना न होनेपर भी देखनेसे तिकोना ही मालूम होता है। इनके शरीर पर काफ़ी तौर पर मांस नहीं होता और कन्धा इनका चौड़ा होता है। कन्धेके नीचेका भाग फैला हुआ सा होता है। बहुतसे विघ्नोंका सामना करके प्रत्येक कार्यको सहज बनाना इनका ख़ास काम है। व्यवसायमें इनकी बुद्धि बहुत पहुंचती है; इसीलिये ये उत्तम व्यवसायी हो सकते हैं। खेती, कारीगरी, आमदनी, रफ़्तनी और निर्माण कार्य्यमें ये लोग बड़े दक्ष हुआ करते हैं। सर्वोत्तम अस्त्र-चिकित्सक, इंजिनियर, नवीन अविष्कारक भी ये लोग ही होते हैं। मोटरगाड़ी-

मनुष्य विशेष शक्तिशाली नहीं होता, कुछ २ मैली पोशाक वाला व्यक्ति परिश्रमी और मुन्तज़िम ( Systematic ) होता है। कामके ज़रियेसे ही इन लोगोंके 'पक्के कच्चे' होनेकी बात मालूम होती है। जूतोंका मर मर शब्द, भड़कीली चटकीली पोशाक, अद्भुत नेक्टाई, गुलूबन्द और शरीर परका वेस्टकोट आदि चीज़ें फालतू और छबीले मनुष्योंकी प्रकृतिके लक्षण हैं। तेज़ लिखना और शीघ्र जवाब देना, शिक्षा वा होशियारीके परिचायक हैं। तोतेकी तरह टेढ़ी नाक और विशेषतः ऊंचे हाड़ ( Bridge ) वाली नाक उत्साह और शक्तिका चिह्न है; किन्तु स्वास्थ्यहीनता, और दुर्बलताका लक्षण भी है। कोमल हाथवाला मनुष्य दुर्बल प्रकृतिका हुआ करता है। पूर्वोक्त सारे गुण एक ही मनुष्यमें होने असम्भव हैं। इसके सिवाय, चिन्होंके कई प्रकारके रूपों (Combinations) में भी प्रायः फ़र्क़ देखा जाता है। हाथ कुछ कोमल होनेसे मनुष्य मध्यम श्रेणीका नीरोग कहा जाता है; किन्तु नासिका ऊंची और उन्नत हो, तो उस मनुष्यको यथेष्ट शक्तिशाली समझना चाहिये।

इनके सिवाय और भी बहुतसे लक्षण हैं, जिनकी एकबार परीक्षा करना नितान्त आवश्यक है।

## हस्त-रेखा

अब हाथकी रेखाओंपर भी थोड़ी दृष्टि डाल लीजिये। हाथकी रेखाओंके शुभाशुभ लक्षण पुरुषके दाहिने हाथमें और

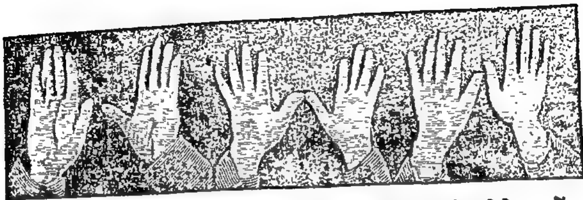


पहला जोड़ा—ऐसे हाथों वाला मनुष्य दूसरोंके द्वारा अपना मतलब गाँठना बहुत पसन्द करता है।

दूसरा जोड़ा—ऐसे हाथ दानशील और फ़िज़ूलख़र्ची लोगोंके होते हैं। इन हाथोंवाला मनुष्य उपार्जन करनेमें होशियार नहीं होता और उसकी दूरदृष्टि (Foresight) भी नहीं होती।

तीसरा जोड़ा—ये हाथ दार्शनिक प्रकृतिके लक्षण हैं। इन हाथोंवाले मनुष्यकी वर्णनशक्ति बहुत प्रबल होती है।

(पृष्ठ ७८)



प्रथम जोड़ा—यह सरल और कर्मशील (active nature) व्यक्तिके हाथ हैं। ऐसे हाथोंवाला मनुष्य दूसरोंका मतलब (plan) लेकर काम करनेमें होशियार होता है।

दूसरा जोड़ा—ऐसे हाथोंवाला मनुष्य चिन्ताशील, समालोचक बुद्धिमान और विख्यात होता है।

तीसरा जोड़ा—ये उत्कृष्ट शिल्पीके हाथ हैं। ऐसा आदमी स्पर्श-शक्तिके लिये मशहूर होता है।

(पृष्ठ ७६)

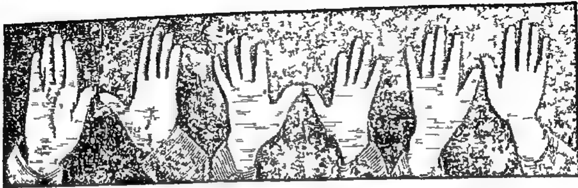
स्त्रीके बायें हाथमें देखे जाते हैं। सामुद्रिक शास्त्रमें लिखा है, कि रेखाओंके शुभाशुभ लक्षणोंकी उत्पत्ति ब्रह्माजीने की है, और उनके देखनेसे सब प्रकारकी दशाओंका ज्ञान होता है।

जिसके हाथमें पहुंचेके पास, मछलीके आकार जैसी रेखा होती है, उसके सब काम सिद्ध होते हैं, और वह धनवान् तथा पुत्रवान् भी होता है। इसके सिवाय वह संसारमें नाना प्रकार के सुख भोग कर बड़ा प्रतिष्ठित बन जाता है। इसमें किसी प्रकारका संशय नहीं है।

जिसके हाथके बीचमें डंडी समेत तराज़ू, चौकोन गांव तथा वज्र—इन तीनों जैसे चिन्ह होते हैं, वह व्यौपारमें बहुतसा धन प्राप्त करता है, और जीवन भर आनन्द व सुखसे दिन बिताता है। ऐसे मनुष्यको किसी प्रकारका दुःख नहीं होता।

जिस पुरुषके हाथमें कमल, धनुषबाण, खड्ग और आठ कोनेके आकार जैसे चिह्न होते हैं, वह धनवान होकर बहुतसे मनुष्योंका पालन पोषण करता है, और सुप्रतिष्ठित होता है। कदाचित स्त्री के हाथमें कमल जैसा चिह्न हो, तो वह अवश्य राजाकी रानी बने और जो पुरुषके हाथमें केवल धनुषबाण जैसा चिह्न हो, तो वह बड़ा भारी योद्धा हो। इसके सिवाय यदि पुरुषके हाथमें आठ कोने वाला चिह्न हो तो जहां तक हो सके, वह राजा बने और अपनी प्रजाका अच्छी तरह पालन करे।

जिसके हाथमें शंख, चक्र, ध्वजा और मछली आदिके चिह्न होते हैं, वह मनुष्य व्यौपार, रोज़गारके काममें बड़ा होशियार



प्रथम जोडा – यह सरल और कर्मशील (active nature) व्यक्तिके हाथ हैं। ऐसे हाथोंवाला मनुष्य दूसरोंका मतलब (plan) लेकर काम करनेमें होशियार होता है।

दूसरा जोडा—ऐसे हाथोंवाला मनुष्य चिन्ताशील, समालोचक बुद्धिमान और विख्यात होता है।

तीसरा जोडा– ये उत्कृष्ट शिल्पीके हाथ हैं। ऐसा आदमी स्पर्श-शक्तिके लिये मशहूर होता है।

(पृष्ठ ७१)

स्त्रीके वाएं हाथमें देखे जाते हैं। सामुद्रिक शास्त्रमें लिखा है, कि रेखाओंके शुभाशुभ लक्षणोंकी उत्पत्ति ब्रह्माजीने की है, और उनके देखनेसे सब प्रकारकी दशाओंका ज्ञान होता है।

जिसके हाथमें पहुंचेके पास, मछलीके आकार जैसी रेखा होती है, उसके सब काम सिद्ध होते हैं, और वह धनवान् तथा पुत्रवान् भी होता है। इसके सिवाय वह संसारमें नाना प्रकार के सुख भोग कर बड़ा प्रतिष्ठित बन जाता है। इसमें किसी प्रकारका संशय नहीं है।

जिसके हाथके बीचमें डंडी समेत तराज़ू, चौकोन गांव तथा यन्त्र—इन तीनों जैसे चिन्ह होते हैं, वह व्योपारमें बहुतसा धन प्राप्त करता है, और जीवन भर आनन्द व सुखसे दिन बिताता है। ऐसे मनुष्यको किसी प्रकारका दुःख नहीं होता।

जिस पुरुषके हाथमें कमल, धनुषबाण, चक्र और आठ कोनेके आकार जैसे चिह्न होते हैं, वह धनवान होकर बहुतसे मनुष्योंका पालन पोषण करता है, और सुप्रतिष्ठित होता है। कदाचित स्त्री के हाथमें कमल जैसा चिह्न हो, तो वह अवश्य राजाकी रानी बने और जो पुरुषके हाथमें केवल धनुषबाण जैसा चिह्न हो, तो वह बड़ा भारी योद्धा हो। इसके सिवाय यदि पुरुषके हाथमें आठ कोने वाला चिह्न हो तो जहां तक हो सके, वह राजा बने और अपनी प्रजाका अच्छी तरह पालन करे।

जिसके हाथमें शंख, चक्र, ध्वजा और मछली आदिके चिह्न होते हैं, वह मनुष्य व्योपार, रोज़गारके काममें बड़ा होशियार

होता है, और बहुतसा धन कमाता है एवम् अपना समस्त जीवन बड़े मानके साथ व्यतीत करता है।

जिसके हाथमें अच्छे त्रिशूल जैसा चिह्न हो तो वह राजा होनेका निशान है। और कदाचित वही चिह्न संदेह—जनक हो तो वह मनुष्य राजाका कारभारी होकर अच्छे २ काम करे। इतना ही नहीं, बल्कि वह अपने माता पिता और गुरुकी शुद्ध हृदयसे सेवा करे, और धर्म तथा पुण्यमें भी उसकी निष्ठा खूब हो। इसके सिवाय धनवान होकर वह यज्ञ करे, दान करे और देव पूजन करे।

जिसके हाथमें देवी, रथ, बाण, चक्र और ध्वजा जैसे चिन्ह हों, तो वह मनुष्य राज्य वैभवका सुख भोगे। और कदाचित इनमेंसे एकाध ही चिन्ह उसके हाथमें हों, तो वह राजाका कारभारी अवश्य हो और समस्त जीवनभर बड़े सुखके साथ रहे।

जिस पुरुषके हाथमें अंकुश, कुंडल अथवा चक्र जैसे तीन चिह्न हों, तो वह चक्रवर्त्ती राजा होनेकी निशानी है। और कदाचित इनमेंसे एकाध ही चिह्न हों, तो वह मनुष्य थोड़ा सा राज-सुख भोगे और दो चिह्न हों तो उससे कुछ अधिक सुख भोग कर धनकी प्राप्ति करे। ऊपर कहे हुए तीनों चिह्न वाला मनुष्य केवल चक्रवर्त्ती राजा ही नहीं होता बल्कि वह परमेश्वरकी इच्छासे सारे जगत्का पालन-पोषण करता है।

जिसके हाथमें पर्वत कंकण, मनुष्यका मुंह अथवा कलश जैसे चिह्न हों, तो वह मनुष्य राजमंत्री होकर कई सुखोंको प्राप्त

करे। जिसके हाथमें सूर्य नारायण, चन्द्रमा, बेल, आँख, आठ कोने, तीन कोने, घर, हाथी अथवा घोड़ा जैसे चिह्न हों, तो वह मनुष्य बहुतसे हाथी घोड़े वाला हो, और महा द्रव्यवान होकर जगतमें प्रख्यात हो जावे।

जिसके हाथके अंगूठेके बीचमें जौ जैसा चिह्न होता है, वह मनुष्य संसारमें विद्वान, धनवान, गुणवान और ज्ञानवान होता है और जब तक जीवित रहता है, नाना प्रकारके सुख भोगता रहता है।

जिस मनुष्यके हाथकी बिचली अंगुलीके मूलमें अथवा अंगूठे के पास वाली अंगुलीके मूलमें वहांकी रेखाके बीचमें जौ जैसा चिह्न हो, तो वह मनुष्य धनवान होकर स्त्री पुत्रादिका सुख आनन्दसे भोगे और संसारमें बड़ी प्रतिष्ठा वाला होकर जीवन पर्यन्त आनन्दके साथ दिन बितावे। इसमें किसी प्रकारका संदेह नहीं है।

जिसके हाथमें अंगूठेके ऊपर आकाश सरीखा चिह्न होता है, वह राज्य-श्रीका चिह्न है। इस चिह्नवाला मनुष्य छत्रपति राजा होता है, अथवा बड़ी सेनाका योद्धा होकर राजसभामें मान पाता है, और ५०-६० वर्ष तक जीवित रह संसारके सारे सुखोंको भोगता है।

अंगूठेके पासवाली अंगुलीके मूलमें उर्द्ध रेखा हो, तो वह मनुष्य राजाका सिपाही होकर सदैव हाथमें तलवार रखता है और राजकाजकी बातें सुनकर उनके करनेका अधिकार पाता है,

तथा जीवन पर्यन्त नाना प्रकारके सुख भोग कर बड़ी प्रतिष्ठाके साथ दिन बिताता है।

जिसके हाथमें, बिचली अंगुलीके मूलके पास उर्द्ध रेखा दीखती हो, तो वह मनुष्य धनवान होकर सदा स्त्री पुत्रादिका सुख आनन्दके साथ भोगता है।

जिसके पहुंचेके पाससे एक रेखा निकल कर अनामिका अंगुलीके मूलसे मिली हुई होती है, वह मनुष्य व्यौपार करके थोड़ा सा धन इकट्ठा करता है, और जीवन भर अच्छी तरहसे अपना निर्वाह करता है। इसके सिवाय जिसके हाथकी अनामिका अंगुलीकी जड़के पास अखण्ड उर्द्ध रेखा हो, तो उस मनुष्यकी १०० वर्षकी अवस्था जानना चाहिये, और वह परदेशमें अधिकतर रहनेवाला होता है।

जिसके हाथकी अनामिका अंगुलीकी जड़में एक मोटी रेखा हो तो वह यज्ञ-कर्त्ता, दो हों तो दातार, तीन हों तो ज्ञानवान, चार हों तो राजसुखका भोगी, पांच हों तो विद्वान्, छः हों तो सभामें मान पानेवाला और सात रेखाऐं हों तो दरिद्रता भोगने वाला होता है। इस प्रकार अनामिकाकी जड़में सब प्राणियोंके सुख दुःख तथा जीवन मरणकी सारी बातें इस रेखासे मालूम हो जाती हैं।

जिसकी कनिष्ठा अंगुलीके मूलमें तीन रेखाऐं मिली हों तो वह मनुष्य अर्थ, धर्म, और काम-इन तीन पदार्थोंको पावे। और यदि इनमेंसे एक रेखा हो तो धनवान, दो हों तो धर्मात्मा, तीन

हों तो दुराचारी, चार हों तो बहुत सी स्त्रियोंके व्याहने वाला और पांच हों तो ज्ञानवान होता है। यही रेखाएं यदि स्त्रीके बायें हाथकी कनिष्ठामें हों तो वह दुराचारिणी होती है—ऐसा अनुमान किया जाता है।

जिसकी अनामिका अंगुलीकी जडमेंसे एक रेखा निकलकर अगूठेके पासवाली अंगुलीसे जा मिली हों तो उस मनुष्यकी आयु १०० वर्षकी होती है; और जो यदि बिचली अंगुलीकी जडके नीचे मिली हो तो ७५ वर्षकी आयु जानना चाहिये। यही रेखा यदि बिचली अगुलीसे एक अंगुलीके अन्तर पर हथेली की तरफ आई हुई हो, तो वह मनुष्य ३६ वर्ष की आयु वाला होता है।

इसके सिवाय जिस मनुष्यकी अनामिकाके पासकी अंगुली के नीचे जौ जैसी एक रेखा हो तो उस मनुष्यकी आयु ३० वर्ष की होती है, और दो जौ जैसी हो तो ६० वर्ष की आयु समझनी चाहिये।

जिसके हाथमें आयुकी रेखा अल्प हो तो उस मनुष्यकी आयु थोडी जानना चाहिये और उसी रेखाके छोटी बडीके प्रमाणसे मनुष्यकी खास आयु समझ लेनी चाहिये। जो यह रेखा काली हो तो जानना चाहिये, कि उस मनुष्यको सुख दुःख बरावर भोगना पड़ेगा।

अंगूठा तथा उसके पासकी अंगुली इन दोनोंके बीचमेंसे दो मोटी रेखाएं निकल कर पहुंचेकी तरफ़ आती हैं, उनमेंसे एक

हथेलीके बीचमें होकर आती है और दूसरी अंगूठेकी तरफ़ आती है। इनमेंसे हथेलीके बीचमें होकर आनेवाली रेखा पहुंचे तक अखण्ड हो, तो जानना चाहिये कि उस मनुष्यका पितृवंश चलेगा; और यदि टूटी हुई हो तो जान लेना चाहिये कि उसका पितृवंश नहीं चलेगा। इसके सिवाय हाथ की तीन मोटी रेखाओंमेंसे बिचली रेखा छोटी हो, तो समझना चाहिये कि उस मनुष्यको पिताका सुख बहुत थोड़ा है; और जो वह मोटी रेखा लाल रङ्गकी हो तो पिताका सुख बहुत जानना चाहिये। इन्हींमेंसे यदि अन्तिम-रेखा छोटी हो तो मा की आयु थोड़ी जानना चाहिये और बड़ी हो, तोअधिक जानना चाहिये। माता-पिताकी इन दोनों रेखाओंके बीचमें त्रिशूल जैसा चिन्ह हो तो जानना चाहिये, कि उस मनुष्यके माता पिताका एक साथ स्वर्गवास होगा।

प्रत्येक मनुष्यके हाथमें माता-पिताकी दो रेखाएं अलग २ होती हैं। माताकी रेखा अंगूठा और उसके पासवाली अंगुलीके बीचसे निकल कर अंगूठेकी तरफ़ पहुंचेसे मिली हुई होती है, और पिताकी रेखा उसी ठिकानेसे निकल कर आयुष्य रेखाके नीचे पहुंचेसे मिली हुई होती है। संसारके प्रत्येक देहधारी प्राणीके ये रेखाएं हुआ करती हैं।

माता-पिताकी रेखाओंके बीचमें और बहुत सी छोटी छोटी रेखाएं हों, तो वह निर्धन होनेका लक्षण है। और इन रेखाओंमें ... बारीक २ बिन्दियाँ जैसी रेखा हों, तो वह दरिद्रताका लक्षण ... चाहिये; और तिकोन, अष्टकोन, चक्र अथवा त्रिशूल

दूसरी अंगूठेकी तरफ़ आती
आनेवाली रेखा पहु'चे तक
स मनुष्यका पितृवंश चलेगा;
चाहिये कि उसका पितृवंश
ी तीन मोटी रेखाओंमेंसे
चाहिये कि उस मनुष्यको
मह मोटी रेखा लाल रङ्गकी
चाहिये। इन्हींमेंसे यदि
थोड़ी जानना चाहिये
माता-पिताकी इन दोनों
तो जानना चाहिये, कि
र्गवास होगा।
दो रेखाएं अलग २

आदिके चिन्ह
सुखी होता है
लकीरें गिनकर
उस मनुष्यको
जानना चाहिये।
जानना चाहिये कि
इसके सिवाय
समझो कि यह मनु
भि नीच कर्मा
आवे तो उस मनु
और आयुवान
रेखाओंका
सिन गुणकार

आदिके चिन्ह हों, तो वह मनुष्य बड़ा प्रतिष्ठित बुद्धिमान् और सुखी होता है। जिनके दोनों हाथकी दसों अंगुलियोंके बीचकी लकीरें गिनकर उनमें ३ का भाग लगानेसे ११ या १२ आवे तो उस मनुष्यको बड़ा धनवान् गुणवान् और सुखी बननेवाला जानना चाहिये; और जिनकी रेखाओंका भजनफल १३ आवे तो जानना चाहिये कि वह मनुष्य दुःखी, रोगी या धनहीन होगा। इसके सिवाय जिसकी लकीरोंका भजनफल १५ आवे तो समझो कि वह मनुष्य चोर होगा और १६ आवे तो इस कर्मसे भि नीच कर्मका, १७ आवे तो पापी अपयशी और१८ आवे तो उस मनुष्यको नाना प्रकारके सुख भोगनेवाला और भाग्यवान् समझना चाहिये। इसके अतिरिक्त इन्हीं रेखाओंका भजनफल यदि १६ आवे तो वह मनुष्य सुप्रति-ष्ठित गुणवान् होकर बड़ा सम्मान पावे, और कदाचित् भजन-फल २० आवे तो जानना चाहिये कि वह मनुष्य बड़ा तपस्वी होगा। इसी प्रकार २१ आवे तो समझना चाहिये, कि वह महा ज्ञानी, महात्मा, सम्मानित और बड़ा तपस्वी होकर संसारमें खूब विख्यात होगा।

ऊपर जिस मातृरेखाका उल्लेख किया गया है, उसे अंग्रेज़ी के आउटलाइन्स आव् पामिस्ट्री ( Outlines of Palmistry ) नामक ग्रन्थमें 'आयु-रेखा' मानी गई है। हम इसका विस्तृत वर्णन नीचे लिखते हैं :—

( १ ) जिसकी यह रेखा विस्तृत और सुदृश्य हो

तो वह व्यक्ति सदैव पीड़ित रहता है, किन्तु दीर्घजीवी होता है।

(२) जिसकी यह रेखा क्षीण, संकीर्ण और काली हो तो वह मनुष्य दुर्बल देह, रोगी और स्वल्पायु होता है।

(३) जिस मनुष्यके यह रेखा ऊपरकी रेखासे मिलकर एक कोना बनाये हुए हो तो वह नीरोग और दीर्घजीवी होता है।

(४) जिसकी इस रेखामें अन्य छोटी २ रेखाएं मिली हुई हों तो वह मनुष्य बाल्यवस्थासे ही अति रोगी होता है।

(५) जिस मनुष्यकी यह रेखा किसी स्थानसे टूटी हुई होती है तो उसे सारा जीवन संकटमें काटना पड़ता है।

कनिष्ठा-अंगुलीके ऊपरसे पहुंचेकी ओर जो बहुत ही बारीक रेखा आई हुई होती है, उसे बुद्धि और ज्ञान रेखा कहते हैं। इसका विस्तृत वर्णन इस प्रकार है :—

(१) जिसकी रेखा स्थूल और सुदृश्य होती है वह सुबुद्धि और देशमान्य होता है।

(२) जिसकी यह रेखा अन्य किसी रेखाके साथ मिलकर कोना बनाए हुए होती है, वह धैर्य्यशाली, बुद्धिमान् और ज्ञानी होता है।

(३) जिसकी यह रेखा टेढ़ी और टूटी हुई होती है, वह -बुद्धि और कटुभाषी होता है।

यह रेखा दक्षिण ओर होती है वह मूर्ख और ओर होती है वह बुद्धिमान होता है।

नीचेसे जो रेखा मध्यमा अंगुलीकी जड़तक फैली होती है उसे सामुद्रिक शास्त्रमें 'आयुरेखा' और अङ्गरेजी में 'कार्य उपार्जन या धन रेखा' कहते हैं।

जो रेखा अंगूठा और तर्जनीके बीचसे निकलकर वाम भागमें गई होती है •उस स्थूल रेखाको 'पितृरेखा' कहते हैं। माता-पिताकी रेखाएं परस्पर नहीं मिली हों, तो वह व्यक्ति अपने पिताका औरस-पुत्र नहीं समझा जाता। 'आयुरेखा' और माता-पिताकी रेखाओंको जो रेखा त्रिकोण बनाए हुए होती है, उसको 'भाग्य या यश-रेखा' कहते हैं।



तो वह व्यक्ति सदैव पीड़ित रहता है, किन्तु दीर्घजीवी होता है।

(२) जिसकी यह रेखा क्षीण, संकीर्ण और काली हो तो वह मनुष्य दुर्बल देह, रोगी और स्वल्पायु होता है।

(३) जिस मनुष्यके यह रेखा ऊपरकी रेखासे मिलकर एक कोना बनाये हुए हो तो वह नीरोग और दीर्घजीवी होता है।

(४) जिसकी इस रेखामें अन्य छोटी २ रेखाएं मिली हुई हों तो वह मनुष्य बाल्यवस्थासे ही अति रोगी होता है।

(५) जिस मनुष्यकी यह रेखा किसी स्थानसे टूटी हुई होती है तो उसे सारा जीवन संकटमें काटना पड़ता है।

कनिष्ठा-अंगुलीके ऊपरसे पहुंचेकी ओर जो बहुत ही बारीक रेखा आई हुई होती है, उसे बुद्धि और ज्ञान रेखा कहते हैं। इसका विस्तृत वर्णन इस प्रकार है :—

(१) जिसकी रेखा स्थूल और सुदृश्य होती है वह सुबुद्धि और देशमान्य होता है।

(२) जिसकी यह रेखा अन्य किसी रेखाके साथ मिलकर कोना बनाए हुए होती है, वह धैर्य्यशाली, बुद्धिमान् और ज्ञानी होता है।

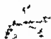
(३) जिसकी यह रेखा टेढ़ी और टूटी हुई होती है, वह चंचल, अस्थिर-बुद्धि और कटुभाषी होता है।

(४) जिसके यह रेखा दक्षिण ओर होती है वह मूर्ख और जिसके पश्चिमकी ओर होती है वह बुद्धिमान होता है।

तक ताड़ी-खूब तैयार हो जाती है। इन पेड़ोंमें नर मादीनकी दो क़िस्में होती हैं, और दोनोंमें ही रस पैदा होता है। पर एक ही समयमें मादीन-पेड़, नर पेड़की अपेक्षा प्रायः डेढ़ गुणा रस देता है; और इस रसमें नर-पेड़के रसकी अपेक्षा अधिक चीनी तैयार हो सकती है। बिहारमें नर-पेड़को "सिश" और मादीन को "फाला" कहते हैं। मादीन पेड़से प्रायः बारहों महीना रस मिलता रहता है; परन्तु शीतकालमें रसका परिमाण बहुत कम हो जाता है। नर-पेड़से लम्बे २ गुच्छोंवाली मोटी डालें निकलती हैं। इन डालोंपर छोटे २ फूल होते हैं। ये सारे फूल नरफूल कहलाते हैं; इसलिये इनमें फल नहीं लगता। मादीन फूल पैदा होते ही यह फूल सूखकर गिर पड़ते हैं। रस निकालनेके लिये इन डालोंके अगले हिस्सोंको तेज़ छुरीसे काटकर एक साथ घड़ेमें लटका दिये जाते हैं; जिससे उन सब डालोंका रस टपक २ कर घड़ेमें इकट्ठा हो जाता है। मादीन-पेड़से भी इसी प्रकार असंख्य-फूलयुक्त डालें निकलती हैं, और फिर इनके सब फूलोंमें फल लग जाते हैं। नर-पेड़की तरह इन डालोंके भी अगले हिस्से काट कर घड़ेमें लटकाए जाते हैं। रसके लिये खजूरके वृक्षकी तरह ताड़ वृक्षकी लकड़ी नहीं काटी जाती; इस लिये रस निकालते समय ताड़ वृक्षको कुछ भी हानि नहीं पहुंचती।

१५-२० वर्षकी उम्रसे ताड़-वृक्ष रस देना आरम्भ कर देता है, और ५०-६० वर्षतक देता रहता है। हर तीसरे साल ताड-





# नवां अध्याय ।

## ताड़के रसकी खांड़ ।

भारतवर्षकी समतल भूमिमें ताड़-वृक्षके समान और कोई वृक्ष नहीं है। यद्यपि नारियल, सुपारी आदिके वृक्ष इस जातिके कहलाते हैं; पर वे नमकीन अथवा तर जगहके सिवाय अन्य स्थानमें उत्पन्न नहीं हो सकते। परन्तु, ताड़-वृक्षमें यह बात नहीं है; ये वृक्ष तो विना यत्नके अपने आप ही उत्पन्न होकर बढ़ते रहते हैं। ताड़का रस बहुत दिनोंसे चीनीके वास्ते प्रसिद्ध है। मद्रासके दक्षिण-प्रदेश और उत्तरीय ब्रह्मामें इस रसको औटा कर गुड़ तैयार किया जाता है। पर, यह गुड़ विक्रीके लिये और देशोंमें नहीं पहुंचता; क्योंकि वहांके निवासी ही इसे ख़रीद लेते हैं। विहारमें ताड़के वृक्ष बहुतायतसे पाये जाते हैं। पर, बड़े ही दुःखका विषय है, कि वहांके निवासी इसके गुण नहीं जानते; केवल इससे "ताड़ी" नामक नशीली चीज़ बना लेते हैं। इस रससे अच्छी चीनी तैयार होनेका हाल वे लोग बिल्कुल नहीं जानते।

चैत्र माससे ताड़ वृक्षमें फूल लगना शुरू होता है, और तभी से ताड़ीका समय आरम्भ होता है। भाद्र और आश्विन मास

घड़ेके भीतर चूना पोत देते हैं, जिससे रस नहीं पचता। विहार में चूनेकी उपयोगिताकी परीक्षा की गई थी, उसमें यह विशेष उपयोगी पाया गया है। परन्तु विहार जैसे देशमें इस कामके लिये फर्मालीन ( Formalin') विशेष उपयोगी है। व्यवहारमें लानेके पहले घड़ेको अच्छी तरह धुएं में ( Smoking ) गरम कर लेना चाहिये ; और फिर उसमें दो सि० सि० (C. C.) * परिमाणमें फर्मालीन देकर रस इकट्ठा करना चाहिये। ऐसा करनेसे रस-खूब ताज़ा रहता है ; और बिलकुल नहीं पचता। प्रत्येक बार व्यवहारमें लानेके पहले घड़ेको अच्छी तरहसे धुएंमें गरम कर लेना चाहिये। चूनेसे पोते हुए घड़ोंके रसकी अपेक्षा फर्मालीन लगाये हुए बर्तनोंका रस विशेष स्वच्छ रहता है ; और उससे प्रचुर परिमाणमें शुद्ध और साफ़ चीनी तैयार हो सकती है।

इस समय ताड़-वृक्षकी कोई नियमित खेती नहीं होती। ये पेड़ अपने आप ही उत्पन्न होते रहते हैं। साधारणतः बहुतसे स्थानोंमें इसके घने पेड़ देखनेमें आते हैं; किन्तु किसानोंके तरी-के पर उनको कोई नहीं बोता। यदि चीनीके वास्ते इन पेड़ोंकी क़दर होने लगे, तो हम आशा करते हैं, कि लोग इनकी नियमित खेती करके बड़ा लाभ उठा सकते हैं। कृषि-रसायनके प्रसिद्ध विद्वान् मि० एनेट साहब कहते हैं,† "कि जहां ताड़ और खजूरोंके

* एक तरहका घनफलका परिमाण।

† Memories Chemical Section ; Vol. 11. No. 6

वृक्षको "जिरेन" देना पड़ता है। यदि ऐसा न किया जाय, तो पेड़ अत्यन्त दुर्बल हो जाते हैं; और अन्तमें उनके बिलकुल सुख जानेकी सम्भावना हो जाती है। रस दिनमें दो वार निकाला जाता है—एक वार सवेरेके समय और दूसरी वार तीसरे पहरको। सवेरेका रस-खूब स्वच्छ, ठण्डा और सुगन्ध-पूर्ण होता है। किन्तु, ज्यों २ दिन चढ़ता जाता है, त्यों २ दिनके उत्तापसे रस पचने ( Ferment ) लग जाता है। एक तरुण पेड़से ५-६ मास तक प्रति दिन प्रातःकाल ६—७ सेर रस मिलता रहता है। संध्या समयका रस साधारणतः चीनी वनानेके लिये सर्वथा अनुपयोगी है; क्योंकि सारे दिनके उत्तापसे रसको पचने ( Fermentation ) न देना एक प्रकारसे असंभव है। इस लिये, उस रससे "ताड़ी" बनाना ही श्रेयस्कर है।

ताड़के रसमें प्रति सैकड़ा १२ भाग चीनी (Saccharose) रहती है; (Glucso) बिलकुल नहीं रहता। इसके अतिरिक्त इस रसमें हरित पत्र (Chlorophyll) नामक सब्ज़ पदार्थ बिलकुल न रहनेसे यह स्वच्छ चीनी बनानेके वास्ते और भी विशेष उपयोगी होता है। इसलिये यदि प्रातःकालके रससे चीनी तैयार की जाय, तो प्रति दिन एक पेड़से ३ पाव या सेर भर चीनी तैयार हो सकती है; और ५-६ महीनेमें प्रायः ३॥) मन चीनी तैयार हो जाती है। इसके सिवाय, तीसरे पहरका रस हमेशा "ताड़ी" बनानेके काममें आता है। किन्तु रसको ताज़ा रखना और पचने न देना बड़ा कठिन मामला है। मद्रासके रहनेवाले

# दसवां अध्याय।

## मिट्टीके उपयोग द्वारा अनेक रोगोंकी चिकित्सा।




चीन समयमें नाना प्रकारकी मिट्टी औषध बनाने के काममें लाई जाती थी और वैद्यगण इसका बड़ा आदर करते थे; परन्तु अब वह ज़माना नहीं रहा। पहले साधारणतः लोग इसे बड़े कामकी चीज़ समझते थे और इसके गुणोंसे भली भांति परिचित थे, वह बातअब नहीं रही। फिर भी, बहुतसे देशोंमे इसका अब भी वैसा ही उपयोग किया जाता है।

इस समय अधिकांश औषधियां जो उद्भिद् और खनिज पदार्थोंसे तैयार की जाती हैं, वे प्राचीनकालमें विविध प्रकारकी मिट्टीसे बनाई जाती थी। प्लिनी, स्ट्राबो तथा यूनानी व रोमन आदि लेखकोंके लेखोंसे ज्ञात होता है, कि इटली, यूनान और इनके पास वाले द्वीपोंसे कई प्रकारकी औषध-गुण-विशिष्ट मिट्टी संग्रहकी जाती थी। जिस मिट्टीमें लोहेका भाग अधिक रहता था, वही मिट्टी विशेष कर संग्रह करके काममें लाई जाती थी। प्राचीन समयके प्रसिद्ध चिकित्सक डायोस्कोराइडिस, हिप्पोक्रेटीस और गेलेन, पेरेट्रिया वा यूरियासे जली हुई

पेड़ोंकी अधिक पैदावारी हो, वहां एक कारखाना विशेष लाभके साथ बारहों महीना चल सकता है; क्योंकि खजूरोंका समय शीतकालमें होता है और उस समय ताड़का रस बन्द रहता है।"



अङ्ग भी मिट्टीसे शुद्ध किये जाते हैं। योगी जन सारे शरीर पर मिट्टी लगाये रहते हैं। नेटालके लोग फोड़े-फुन्सियों पर मिट्टी का प्रयोग करते हैं। मुर्दोंको मिट्टीके भीतर गाड़नेसे वे हवा खराब नहीं कर सकते। मिट्टीकी इस महिमासे हम विचार कर सकते हैं, कि मिट्टीमें कितने ही विशेष और उत्तम गुणोंका होना सम्भव है।

जैसे लुईकोनीने पानीके सम्बन्धमें बहुत विचार करके कितने ही उत्तमोत्तम लेख लिखे हैं, वैसे ही जुस्ट नामके एक जर्मनने मिट्टीके सम्बन्धमें बहुत कुछ लिखा है। वह तो अपने विचार यहा तक प्रकट करता है, कि मिट्टीके उपचारसे असाध्य रोग भी मिट सकते हैं। उसका कहना है, कि एक वार उसके पासके गावमें एक मनुष्यको सांपने काट खाया था, बहुतसे आदमियोंने समझ लिया कि वह मर गया ; परन्तु इस गांवके किसी व्यक्तिने उन लोगोंसे कहा कि इस विषयमें जुस्टकी सम्मति ली जाय तो अच्छा होगा। निदान ऐसा ही किया गया। जुस्टने उस मनुष्य को मिट्टीमें गड़वा दिया। थोड़ी देर पीछे देखा गया तो ज्ञात हुआ कि उस मनुष्यको होश आ गया। पाठकोंको यह घटना असत्य सी मालूम होगी ; परन्तु जुस्टके झूंठी बात लिखनेका कोई कारण नहीं है। मिट्टीमें गड़वा देनेसे बहुत गरमीका होना तो एक प्रत्यक्ष बात है ; परन्तु उस सांपके काटे पर मिट्टीके अदृश्य अंशोंका क्या प्रभाव पड़ा ? इसके जाननेका नहीं है। तब भी इतना तो जान पड़ता

कर औषधियाँ बनाते थे और उनकी वे औषध ऐसी गुणकार
होती थीं कि हज़ारों रोगी उनसे आरोग्य हो जाते थे।

मिट्टीमें एक प्रकारकी सुहावनी गन्ध, मीठापन और चिरप
रापन होता है, इसीसे बालकोंकी रुचि मिट्टी खानेको होती है
इसके सिवाय रक्तहीनता और हिस्टीरिया रोगमें तथा गर्भवत
स्त्रियोंकी रुचिका विकार भी मिट्टी खानेका एक कारण है। थोड
थोड़ी मिट्टी खानेसे कुछ हानि नहीं होती बल्कि ऐसी मि
औषधका काम देती है; पर विशेष मिट्टी खाते रहनेसे प्रा
बच्चे दुर्बल व रोगी हो जाते हैं। मिट्टीका उपयोग कई रोगों
बड़ा लाभकारी होता है। मैं विचार करता हूं, कि यदि को
अनुभवी डाक्टर मिट्टीके उपयोगसे ही सारे रोग मिटानेकी चे
करे, तो निःसन्देह उसे पूर्ण सफलता प्राप्त हो सकती है। हम
देशके नेता श्रीमान् गांधीजी महोदयने, वैद्यक-विद्यामें वि
जानकारी न रखते हुए भी मिट्टीके उपयोगकी कितनी ही अ
भव सिद्ध बातें अपनी गुजराती पुस्तकमें लिखी हैं।

आप लिखते हैं,—"कितनी ही बातोंमें पानीके इलाजसे
मिट्टीके इलाज चमत्कारिक देखे गये हैं। हमारे शरीरका ब
सा भाग मिट्टीका बना है; इस लिये यदि हमारे शरीर पर मि
का विशेष प्रभाव पड़े, तो इसमें कोई आश्चर्यकी बात नहीं
मिट्टीको सब लोग पवित्र मानते हैं; दुर्गन्ध दूर करनेके लि
ज़मीनको मिट्टीसे लीपते हैं; सड़ी हुई जगह मिट्टीसे पूर
जाती है; हाथोंको मिट्टीसे साफ़ करते हैं; यहां तक कि

नेसे अतिसार तक मिट जाता है। पेडू और सिर पर मिट्टीके बांधनेसे सख्त बुखार भी दो एक घण्टेमें कम पड़ जाता है। फोड़े, फुंसी, खुजली, दाद आदि पर मिट्टी बांधनेसे प्रायः बहुत लाभ होता है। फोड़ोंसे यदि पीव निकलने लगी हो तो मिट्टीके उपयोगसे कम हो जाती है। जले स्थानपर मिट्टी बांधनेसे जलन कम हो जाती है और सूजन नहीं चढ़ती। अर्शवालेको मिट्टीका बांधना बड़ा गुणकारी है। खुजलीवाली बादीपर मिट्टी गुणकारी है। दुखते हुए जोड़ों पर मिट्टी लगानेसे तुरन्त लाभ होता है। इस प्रकार मिट्टीके बहुतसे प्रयोग करने पर मुझे ज्ञान पड़ा है, कि घरू इलाजके तौरपर मिट्टी अनमोल वस्तु है। पर, सब प्रकारकी मिट्टीका एकसा गुण नहीं होता। सुर्ख मिट्टी विशेष गुणकारी ज्ञान पड़ती है। मिट्टीको सदा अच्छी जगहसे खोदकर लाना चाहिये। मिट्टीमें यदि गोबर अधिक हो तो उसे काममें न लेना चाहिये। अधिक चिकनी मिट्टीकी अपेक्षा थोड़ी चिकनी और रेतीली मिट्टी अच्छी होती है। मिट्टीमें किसी प्रकारका कूड़ा-कर्कट आदि नहीं होना चाहिये। मिट्टीको बारीक चलनीमें छान कर सदा ठंडे पानीमें भिगो रखना चाहिये। आटेको गूंदनेसे वह जितना कड़ा रहता है, उतनी ही कड़ी मिट्टी भी रहनी चाहिये। मिट्टीको बिना इसतिरी किये हुए साफ और बारीक कपड़ेमें बांधकर जिस जगह ... हो ... के समान उसका उपयोग करना ... जानेके पहले ही उसे हटा लेना

चूस लेनेका गुण है। इतना होने पर भी जुस्ट लिखता है, कि किसीको यह न समझ लेना चाहिये कि सांपके काटे हुए सभी मिट्टीसे जी उठते हैं; परन्तु किसी विशेष अवसर पर मिट्टीका उपयोग करना आवश्यक है। बिच्छू और ततैयाके काटे पर मिट्टीका उपयोग विशेष गुणकारी प्रतीत होगा। इनके डङ्क मारने पर मैंने स्वयम् परीक्षा करके देखा है, कि इस इलाजसे तुरन्त आराम हुआ है। डङ्क मारनेकी जगह पर मिट्टीको ठण्डे पानीमें मल कर गाढ़ी २ पुलटिस बांधनी चाहिये और उस पर पट्टी भी बांध देनी चाहिये।

आगे चल कर आप लिखते हैं,—"मैंने नीचे लिखी हुई दशा में मिट्टीके उपचारका स्वयम् अनुभव किया है। दस्तवालेके पेड़ू पर मिट्टीकी पुलटिस बांधनेसे दो तीन दिनमें आराम हो गया। सिर-दर्दवालोंके सिर पर मिट्टीकी पुलटिससे तत्काल लाभ हुआ। इसी प्रकार आंखों पर मिट्टीकी पुलटिस बांधनेसे आंखोंका दर्द मिट जाता है। चोट लग कर सूजन आ गई हो, अथवा न भी आई हो तो मिट्टीकी पुलटिससे दोनों तरहके दर्द मिट जाते हैं। कई वर्ष पहले मैं जब फ्रूटसाल्ट खाता था तभी अच्छा रह सकता था। सन् १९०४ में मिट्टीकी उपयोगिता पर मेरा ध्यान गया और तभीसे मुझे फ्रूटसाल्ट आदि की किसी दिन आवश्यकता न हुई। जिसे बद्धकोष्ट रहता है, उसे पेड़ू पर मिट्टीकी पुलटिस बांधनेसे बड़ा लाभ होता है। पेटमें दर्द होता हो तो मिट्टी बांधनेसे हलका हो जाता है। मिट्टीके बांध-

उनमें एकको छातीपर मिट्टीकी पुलटिस बांधी गई जिससे उसको आराम जान पड़ा। ज्वर वाले रोगी को उपवास कराना अच्छा होता है। उपवासके दिनोंमें उसे लुइकोनीके कमसे कम दो बाथ (स्नान) सदा लिवाने चाहिये। रोगीसे यदि बाथ न लिये जा सकें, तो उसके पेडूपर मिट्टी बांधनी चाहिये और यदि उसका सिर दुखता हो अथवा गरम हो तो उसपर भी मिट्टीकी पट्टी बांधनी चाहिये। ऐसी दशामें रोगी को ढका हुआ पर खुली हवामें रखना चाहिये। इनके सिवाय कब्ज़, संग्रहणी, दस्त, अर्श आदि रोगोंकी चिकित्सा आरम्भ करनेके पहले रोगीको ३६ घंटेका उपवास करा कर इसके बीचमें या इसके पश्चात् सोते समय उसके पेडू पर मिट्टीकी पट्टी बांधनी चाहिये।

छूतके रोगों की चिकित्साके विषयमें आपने लिखा है:—"शीतला एक छूतदार बीमारी है। जिन्हें शीतला निकली हो, उनके लिये भिगोई हुई चद्दरका उपचार एक चमत्कारी दवा है। इनके व्रण पर मरहम लगाने की आवश्यकता नहीं है, यदि उन पर दो एक जगह मिट्टी की पुलटिस बांधनेका मौक़ा हो तो बांध देनी चाहिये-इससे शीघ्र ही आराम होगा। इसी प्रकार प्लेगकी बीमारीमें भी गांठकी जगह मिट्टीकी भारी पुलटिस बांधनी चाहिये। इसके रोगीको यदि 'वेट—शीट—पेक'* में रखनेका

* 'वेट-शीट-पेक' बाथ लेनेका कहते हैं। इसकी तरकीब यह है, कि खुली हवामें एक इतना बड़ा तख़्ता या मेज रखनी चाहिये कि जिसपर मनुष्य चित्त सो सके। इसपर हवाके परिमाणके अनुसार चार या न्यूनाधिक कम्बल लटकाते हुए बिछा देने चाहिये। उसपर भीगी हुई दो साफ़ और मोटी चद्दर बिछा कर लिटानेको

चाहिये । साधारणतः २—३ घंटेतक एक पुलटिस काम देती है । काममें आई हुई मिट्टी फिर काममें न लानी चाहिये । हां, काममें आये हुए कपड़ेमें यदि पीव या खून न लगा हो, तो वह फिर काममें लाया जा सकता है । पेडू पर मिट्टी रक्खी हो तब उसपर एक गर्म कपड़ा रखकर पट्टी बांध देनी चाहिये। प्रत्येक मनुष्य यदि एक डिब्बेमें मिट्टी भरकर रख छोड़े, तो आवश्यकताके समय उसे इधर उधर भटकते नहीं फिरना पड़ेगा । जब आवश्यकता हो तभी वह उसे काममें ला सकता है । बिच्छूके डंकपर जितनी जल्दी मिट्टी रक्खी जा सके उतना ही अच्छा है ।

ज्वरकी चिकित्साके विषयमें महात्मा गांधीजीने लिखा है ;—"प्रायः सब प्रकारके ज्वरोंमें एक ही इलाज काम कर सकता है । सादे बुखारसे लेकर न्युमोनिक प्लेग तकमें मुझे एक ही इलाजका अनुभव हुआ एवम् उसके परिणाम ठीक निकले। सन् १९०४ में अफ्रीकामें हमलोगोंमें भयंकर महामारी फैली थी उसमें २३ मनुष्य रोगग्रस्त होकर २४ घंटेमें २१ मर गये, बाकी दो रोगी अस्पतालमें भेज दिये गये । अन्तमें इनमेंसे भी एक बच पाया । इसपर मिट्टीकी पुलटिसका इलाज किया गया इससे यह नहीं कहा जा सकता कि इस रोगीको मिट्टीसे ही लाभ पहुंचा, परन्तु यह कहा जा सकता है, कि मिट्टीसे उसको किसी प्रकारकी हानि नहीं पहुंची । एकबार दो रोगियों फेफड़ोंमें सूजन आकर उन्हें ज्वर आ गया, वे बेहोश हो गये

कैंचीसे काट डालना चाहिये। उस समय इस बातकी खूब सावधानी रखनी चाहिये कि चमड़ी न उखड़ने पावे। इसके बाद तुरन्त साफ़ मिट्टीकी पुलटिस जले हुये सब स्थानों पर बांध कर ऊपरसे पट्टी बांध देनी चाहिये। इससे जलन बिलकुल मिट कर जला हुआ मनुष्य बहुत कम कष्ट भोगेगा। यदि कपड़ा चिपक रहा हो तो उस पर भी मिट्टीकी पुलटिसकी पट्टी बांधने में कुछ हानि नहीं है। पट्टीको सूखते ही फिर पलट देना चाहिये। उस समय ठंडे पानीसे डरनेका कुछ भी भय नहीं है। जलनेसे यदि केवल चमड़ी ही सुर्ख हुई हो तो उस पर मिट्टी की पट्टी बांधनेके समान एक भी उत्तम इलाज नहीं है। उससे तुरन्त जलन बन्द हो जाती है।

सांप—बिच्छू आदिके काटनेपर आपने लिखा है,—"सर्प-दंशके विषयमें मेरा अनुभव नहीं है, परन्तु मिट्टीके अन्यान्य प्रयोग करनेसे मिट्टीकी चिकित्सा पर मेरा अचल विश्वास है। जहांपर दंश लगा हो उस जगहको छेदकर लाल बुकनी भरने या चूसनेके पीछे उस जगह मिट्टीकी आध इञ्च मोटी, लम्बी और पोली पुलटिस बांध देनी चाहिये। जैसे—यदि हाथमें डंक लगा हो तो सारे हाथको पुलटिससे लपेट दो प्रत्येक मनुष्यको चाहिये कि वह टीनके किसी वर्त्तन या डिब्बेमें मिट्टी को भर रक्खे। मिट्टी पीस छान कर रक्खी रहनी चाहिये। उसे बाहर धूपमें इस तरह रखना चाहिये, कि उसमें पानी न जाने पावे। फटे हुये कपड़ोंकी पट्टी भी तैयार करके

समय न रहा हो, तो उसके सिरपर मिट्टीकी बारीक पुलटिस रखनी चाहिये। हैज़ेकी बीमारीमें रोगीके गोले चढ़ जाते हैं और जांघोंमें गांठें पड़ जाती हैं। ऐसे समय पेटपर मिट्टीकी पुलटिस का बांधना उपयोगी हो सकता है। उठती हुई पेचिश सबसे कम भयंकर रोग है। इसमें यदि रोगीको खानेको न देकर उसके पेडूपर मिट्टीकी पुलटिस बराबर बांधी जाय तो रोग बिलकुल मिट जाता है।

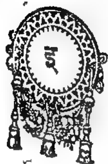
अकस्मात् जलनेपर आपने लिखा है—"आगके बुझते ही देखना चाहिये कि कहीं जला तो नहीं है। यदि जला हो तो वहां पर कपड़ेका चिपक जाना सम्भव है। उस कपड़ेको नहीं उखाड़ कर उसे वहीं रहने देना चाहिये और बाक़ी का हिस्सा

---

ओर कम्बलके नीचे एक तकिया रख देना चाहिये। इसके बाद रोगीको कमरमें एक छोटा सा कपड़ा पहना कर चद्दरके बीचमें सीधा सुला देना चाहिये। फिर उसके दोनों हाथोंको बगलमें रख कर चद्दर और कम्बलोंको एकके पीछे एक उसके शरीरपर लपेट देना चाहिये और पैरों परके हिस्सेको भी पैरोंपर लपेटना चाहिये। धूप हो तो भिगोया हुआ रूमाल बीमारके मुख और मस्तक पर लपेट देना चाहिये, पर नाक सदा खुली रहनी चाहिये। इससे रोगीको एकबार थरथरी मालूम होगी, पर पीछे बहुत आराम जान पड़ेगा और शरीरको सुहाने योग्य गरमी आ जायगी। ऐसी दशामें रोगी ५ से लेकर ६० मिनट तक अथवा अधिक देरतक रह सकता है। अकसर इतनी गरमी होती है, कि पसीना आने लगता है। ऐसी दशामें कई बार रोगीको आता है। भीगी हुई चद्दरसे निकलते ही रोगीको ठंडे पानीसे नहलानेकी आवश्यकता है। लगभग अनेक रोगोंकी यह उत्तम चिकित्सा है। खुजली, दाद, छोटी माता, शीतला, मामूली फोड़े, ज्वर आदि रोगों पर यह चद्दर-बन्धन बड़ा ही गुणकारी है। भयंकर शीतला भी इससे मिट जाती है। इस कार्यमें त्वचाका मैल चद्दरमें आ जाता है इसलिये एकबार काममें आई हुई चद्दरको खौलते हुए पानीमें धोए बिना काममें न लाना चाहिये।

# ग्यारहवां अध्याय।

## रोगीके पथ्यादि गरम रखनेका सहज उपाय।




स बातको डाक्टरों और वैद्योंने माना है कि रोगीके लिये पथ्यादि वस्तुएं सदा गरम रहनी चाहियें ताकि जब आवश्यकता हो, रोगीको वे गरम रूपमें ही दी जायं। इस लिये दुध, सागूदाना और अन्य प्रकारके पथ्यको कुछ गरम रखनेकी विशेष आवश्यकता होती है। कई लोग कितनेही उपायोंसे इन चीज़ोंको गरम रखनेका प्रयास करते हैं। कोई तो कोयले वा लकड़ीकी आँचपर इन चीज़ोंको गरम रखते हैं, कोई केरोसिन तेलके चूल्हेपर गरम होनेको रख देते हैं, कोई तापरोधक "थर्मास् फ्लास्क" नामकी बोतलमें भर देते हैं, और कोई अन्यान्य उपायोंको काममें लाते हैं। पर व्यवहार करनेसे मालूम होगा कि उन उपायोंके किसी भी सामानका मूल्य वा दैनिक खर्च कम नहीं है। जब दैनिक खर्च कम नहीं है, तो वे सर्व साधारणका ठीक २ काम भी नहीं चला सकते, और न ग़रीबोंको उनमें कुछ लाभ ही हो सकता है। इस लिये वे उपाय सबको एकसा फल देनेवाले नहीं कहे जा सकते। ऐसे उपाय की

रख छोड़ना चाहिये। यह तैयारी सर्प-दंशके लिये ही नहीं, अनेक अकस्मात् तकलीफ़ोंके लिये भी काम देगी। बिच्छू आदिके डंक मारनेपर यह सहज चिकित्सा है। जहां पर डंक लगा हो उस जगहको अनीदार चाकूसे छेद कर खून निकाल डालना चाहिये फिर डंकको चूस कर थूक देना चाहिये। वेदना आगे न बढने देनेके लिये डंकके ऊपर की ओर एक बंध बांध कर ऊपर से मिट्टीकी बड़ी भारी पुलटिस बांध देनी चाहिये। मिट्टीकी पुलटिससे एकदम वेदनाका बंद हो जाना सम्भव है। कितनी ही पुस्तकोंमें लिखा है, कि सिरका और पानी समभाग मिला कर और उसमें कपड़ेका टुकड़ा भिगो कर उसे डंक मारे हुये स्थानपर रखना चाहिये। डंक मारे हुये स्थानके पासका भाग नमकके पानीसे धोते रहना चाहिये। यह भाग पानीमें डूबा रखने योग्य हो तो पानीमें डुबाए रहना चाहिये। परन्तु इन सब उपायोंसे मिट्टी की पुलटिस अधिक गुणकारी है। इस बातका अनुभव उसे ही होगा जिसे अभाग्यवश बिच्छूने काटा होगा। इस बातको स्मरण रखना चाहिये, कि पुलटिस जहां तक हो सके, बड़ी बनाई जावे। उसके लिये दो सेर मिट्टी भी अधिक नहीं है। कल्पना करो कि अंगुलीमें बिच्छूने काटा है। ऐसी दशामें कुहनी तक मिट्टीका बांधना अधिक नहीं है। एक लम्बे बर्तनमें मिट्टी को मल कर उसमें हाथ डुबो दिया जाय तो वेदना तुरन्त कम पड़ जायगी। कान-खिजूरा, ततैया आदिके डंक पर भी यह इलाज उत्तम है।"

आवश्यकतानुसार समय २ पर लेम्पमें तेल भरदेना चाहिये। इससे जितनी देर चाहें उतनी देर पथ्योंको हलके उत्तापसे गरम रख सकते हैं। हाँ, यदि चिमनी समेत लेम्प छोटे आकारका हो, तो प्रयोजनानुसार २–१ ईंटोंके सहारे उसको यथोपयुक्त ऊँचे स्थानमें रखना चाहिये, और यदि वह टीनकी अपेक्षा बड़ा हो, तो और थोड़ीसी ईंटे नीचे रखकर टीनको ऊँचा करना चाहिये। अभिप्राय यह है कि टीनका ऊपरी भाग, लेम्पकी (नीचेवाली) चिमनीसे चार अंगुल ऊँचा अवश्य होना चाहिये। इस बातका भी पूरा ध्यान रखना चाहिये कि टीनके फटे मुंहसे लेम्पकी रोशनीका प्रकाश आधा इंच ऊँचा निकलता रहे, तभी पथ्यादिमें यथेष्ट गरमी पहुंच सकती है। परन्तु फटे मुंहमें या लेम्पको जलानेमें यह दोष होना ठीक नहीं है कि रोशनीसे धुआँ इकट्ठा होने लगे। इस बातका भी पूरा लक्ष्य रखना आवश्यक है।

इस सुलभ तापन-यंत्रके व्यवहारसे पथ्यादि पदार्थोंका जलीय अंश थोड़ा २जलता रहता है और पथ्यादि पदार्थोंके जल जानेकी आशंका नहीं रहती, वरन् आवश्यकतानुसार वे चीजें यथेष्ट गरम रहती हैं। इस यन्त्रका ताप इतना हलका रखा जाता है कि उसको रोगीकी शय्याके कुछ पास भी रख सकते हैं। इससे रोगीको किसी प्रकारकी असुविधा नहीं होती। यदि रोगीको या रोगीके स्थानमें बहुतही हलके तापकी आवश्यकता हो, तो ऐसे अवसर पर इस यंत्रका वहां रखना और भी अच्छा होगा।

चीज़ें तो थोड़े मूल्यमें सब जगह मिल सकें तभी सर्वसाधारणको लाभ पहुँच सकता है।

परीक्षा करके देखा गया है कि नीचे लिखी चीज़ें इस कामके लिये बहुत सुभीते की हैं, और इनकी सहायतासे सहज ही में मनवांछित फल मिल सकता है। इस कामके लिये तीन उपाय हैं, जैसे-( १ ) लम्बी चिमनी या छोटे क़दवाला लेम्प, अथवा साधारण दीवालगीरी; ( २ ) मुंह कटा हुआ एक टीन। जिन टीनोंमें केरोसिन तेल आता है उसीका मुँह काट लेना चाहिये ( ३ ) ईंट या मिट्टीके मज़बूत ढ़ेले। ये आवश्यकतानुसार ले लेने चाहियें। टीनके डब्बेमें एक छोटासा छेद भी कर देना चाहिये, ताकि उसमें से वायु आती जाती रहे, और धुआं न होने पावे।

पहले लेम्पको किसी सुविधाजनक स्थानमें रखकर आवश्यकतानुसार उसमें वायु आने जानेका मार्ग रखना चाहिये। फिर उसके चारों तरफ़ चार ईंटें वा मिट्टीके ढेले रखना चाहिये। लेम्प की बत्ती और रोशनीका ऊँचा रहना ठीक है। इसके बाद टीनको लेम्पके पास रखकर देखना चाहिये कि उसके ऊपरका भाग लेम्पकी चिमनीसे चार अंगुल ऊँचा है या-नहीं। यदि आवश्यकतानुसार ऊँचा हो तब तो प्रकाशके ऊपर टीनको औंधा रख देना चाहिये और उसका कटा मुंह ऊपर रखना चाहिये। बस, यह सुलभ-तापन-यंत्र बन गया और ठीक व्यवहारके उपयुक्त हो गया। अब इस टीनके ऊपर पथ्यादि वाले प्याले, कटोरी, गिलास आदि रख देना चाहिए; और

एक आनेसे अधिक खर्च नहीं होगा। क्योंकि तेलके सिवा, और चीज़ों का तो इसमें प्रतिदिन ख़र्च होता ही नहीं। और तेल -) का प्रतिदिनके लिये पर्याप्त है। इस हिसाबसे मालूम होता है कि पूर्वोक्त स्टोम आदिकी तुलनामें इसका ख़र्च बहुतही थोड़ा है, और इसकी सब चीज़ें सहजहीमें सब जगह मिल सकती हैं। अतएव, छोटे बड़े सब गृहस्थ इस कामको अपने घर पर आसानी के साथ कर सकते हैं। इसमें टीनकी चिमनी ( डिब्बी ) का भी व्यवहार होता है; पर उसमें धुआं अधिक होता है, जिससे इच्छानुसार फल नहीं मिल सकता। इन बातोंसे चिमनीकी अपेक्षा लेम्प हीको काममें लाना अच्छा है।



इस यंत्रसे केवल रोगीके ही पथ्यादि गरम नहीं रखे जाते, बल्कि परिमित परिमाणमें रोज़मर्राके खाद्य पदार्थ भी आवश्यकता पड़ने पर गरम रक्खे जा सकते हैं। इस यंत्रको चाहे जिस स्थानमें रख सकते हैं। वायुमें रखनेसे भी एकाएक इसमें बाधा नहीं पड़ती। मामूली हवामें इसका व्यवहार बराबर हो सकता है। परन्तु प्रचंड वेगकी हवासे इसको बचाना पड़ता है। इस समय इसके वायु आने जानेके मार्ग संकीर्ण कर देना चाहिये, जिससे अधिक वायु भीतर न घुसे, और प्रकाश न बुझने पावे।

यदि शीघ्रतासे पथ्यादि गरम करके रोगीको देनेकी आवश्यकता पड़े, तो लेम्पका प्रकाश कुछ तेज़ कर देना चाहिये। पर इतना तेज़ नही करना चाहिये कि जिससे वे पदार्थ जलने लगें। इस प्रकार तेज़ प्रकाश कर देनेसे पथ्यादि शीघ्र गरम हो जावें, तब प्रकाशका परिमाण घटा देना चाहिये। यदि पथ्यादि पदार्थोंका जलीय अंश धीरे २ कम होने लगे तो जानना चाहिये कि प्रकाशके तेजका परिमाण ठीक है, और यदि जलीय अंश एकदम जलकर पदार्थ कम होने लगें तो तेज़ बहुत अधिक जानना चाहिये। ऐसा ताप ठीक नहीं होता; क्योंकि इससे जलीय अंश शीघ्र जलकर अन्तमें असली पदार्थके जल जानेकी संभावना रहती है, और ऐसा जला हुआ पदार्थ रोगीको देना ठीक नहीं है, इससे रोगीकी जठराग्नि और पाचन क्रियाको हानि पहुँचती है। इसलिये इन बातोंका पूरा २ ध्यान रखना चाहिये।

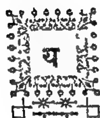
अब इसके ख़र्चकी तरफ़ दृष्टि डालिये। प्रतिदिन इसमें

आश्विन, कार्तिक और अगहन महीनोंमें अच्छा ताज़ा घास मिलता है। किसी २ स्थानमें ज्येष्ठ मासके अंत तक अच्छा घास रहता है। घासके पकनेका समय अगहन महीना है और इसी महीनेमे उसको काटना चाहिये। किसान लोग प्रायः इसी महीनेमें घासको काटकर खुले स्थानमें उसको जमा देते हैं, जिसे गंजी लगाना कहा जाता है। पर खुले स्थानमें जमाया हुआ घास बहुत सावधानी रखने पर भी आधेसे अधिक बिगड़ जाता है, सड़ जाता है, और ऐसा हो जाता है, जिसे पशु सूंघते तक नहीं। ऐसा घास यदि ज़बर्दस्तीसे पशुओंके सामने डाल दिया जाय और वे भूखसे विह्वल होकर थोड़ा बहुत खा लें, तो उनका जीवन बुरी तरहसे समाप्त हो जाता है। इन सब विपदाओंसे बचनेके लिये घासको ऐसे स्थानमें रखना चाहिये, जहां वह बहुत दिनों तक ताज़ा बना रहे और उसके पौष्टिक गुण नहीं जाने पावें। यह काम कैसे संभव हो सकता है? इसके लिये एक उपाय निकाला गया है और वह परीक्षित भी हो चुका है। उपाय यह है :—

अपने मकानके पास ही जमीनमें आवश्यकतानुसार गहरा, और गोल खड्डा खोदना चाहिये, जिसके जितनी मवेशियां हों और उनके लिये जितना घास सालभरके वास्ते दरकार हो उसके परिमाणका खड्डा खोदना ठीक होता है। खड्डा खुद जाये, तब संगृहीत घासको खूब साफ [illegible] चाहिये, भरनेके पहले घासको [illegible] एक लाज़िमी बात है। [illegible] कूड़ा

# बारहवां अध्याय।

## घास ताज़ा रखनेका उपाय



ह बात सबको मालूम है कि आहार विहार पर ही प्राणी मात्रके स्वास्थ्यका दारोमदार है। अच्छे भोजनसे शरीर पुष्ट होता है और बुरेसे रोगी। यही बात पशुओंके शरीरकी भी है। पशुओंका यथोचित पालन करनेके लिये पहले ताज़ा घासका बन्दोबस्त करना बड़ा ज़रूरी है। जो समय पर घासका संग्रह करके उसकी पूरी २ रक्षा करता है, वह पशुओंको हर तरहसे आराममें रख सकता है। ताज़ा घास गौओं और अन्य पशुओंके लिये जितना स्वास्थ्यकर है, उतनी और कोई चीज़ नहीं-यह बात परीक्षासे सिद्ध हो चुकी है। परन्तु, घासको ताज़ा रखनेके लिये लोग विशेष ध्यान नहीं देते, इससे पशु अकालमें ही काल-कवलित हो जाते हैं, और लोगोंको हानि उठानी पड़ती है।

आजकल और २ चीज़ोंके साथ घासका भी अकाल ही रहता है। किसी २ ज़िलेमें तो शीतकालसे लगा कर वर्षाकाल तक घास मिलना बड़ा कठिन होजाता है। ऐसे समयमें पहलेका संचय किया हुआ घास बड़ा काम देता है। हमारे देशमें

डालनेके पहले घासके ऊपर अर्थात् खड्डेके मुंहपर चटाइयाँ बिछा देनी चाहियें, जिससे मिट्टी घासके ऊपरी हिस्से को बिगाड़ न सके। पर चटाइयोंका बिछाना सर्वसाधारणके लिये संभव नहीं हो सकता। इसलिये यदि आवश्यकता समझी जाय, तो ताजा घास बिछा देना ठीक होगा।

इस प्रकार घास रखकर देखा गया है कि, बहुत दिनोंतक वह अपनी असली अवस्थामें बना रहता है। और जिस प्रकार खाइयोंकी दीवारोंके पासका अनाज बहुत कुछ बिगड़ जाता है, वैसा यह नहीं बिगड़ता। हाँ किसी हालतमें बिगड़ता है, पर दीवारोंके पासका बहुत थोड़ा। और वह भी नीचेके हिस्सेकी पूरी २ रक्षा करता है। अलबत्ता घासका रंग कुछ फीका पड़ जाता है, पर इससे हानि होनेकी कोई संभावना नहीं है। गाय, घोड़े आदि पशु इसे बड़ी रुचिके साथ खाते हैं और ये ताज़ा घासकी तरह ही स्वाद लगता है। ताज़ा घासके गुणों और इसके गुणोंमें किसी प्रकारका अंतर नहीं होता। जैसे गुण घासमें कटते समय और पकी अवस्थामें होते हैं, वैसेके वैसे ही बने रहते हैं।

जब खड्डेमें से घास निकालना हो, तो खड्डेका मुंह कुछ खोलकर घास निकाल लेना चाहिये, और फिर उसे ज्यों का त्यों बंद कर देना चाहिये, पर रोज रोज घास निकालनेका काम जारी रखना ठीक नहीं। इससे घासके बिगड़ जानेकी संभावना रहती है।

ट रहजाय, तो उससे घास थोड़े दिनोंमें ही सड़ जाता है।
कड़वी हो, तो उसके टुकड़े कर लेना ठीक होगा, जिससे
ड्ढेमें ठीक तौरपर दबकर बैठ जावें। अगर ऐसा न किया
गा, तो वे गड्ढेमें दबेंगे नहीं और निकालते समय ज़रूरतसे
दा हिस्सा निकल आवेगा और हवाके भीतर जानेकी गुंजा-
। हो जावेगी जिससे घास बदबूदार हो जानेका भय रहता है।
खड्डेमें जब घास भरा जाय, तो खूब ठांस २-कर भरा
य। घास खड्डेके मुंहके बराबर ही रहे, क्योंकि खड्डेके
हसे कुछ ऊंचा रहजाय तो उसके सड़ जानेकी
शंका रहती है। इस प्रकार घास जब खड्डेमें भरदिया
य, तब खड्डेके मुंहपर दो तीन फुट ऊंची मिट्टी डालकर
छ मिट्टी उसपर लेप देना चाहिये। मिट्टी डालतेसमय इस
तका ख़याल रहे कि, वह दो तीन फुट ऊंची चबूतरेकी
तरह न हो जाय, बल्कि ढालू रखनेका पूरा ध्यान रखना
चाहिये, जिससे वर्षाका जल उसपरसे सहजहीमें ढलक
जाय। इसके सिवा, यह भी ध्यान रखनेकी बात है कि, वर्षाका
जल खड्डेके चारों ओर इकट्ठा न होने पावे, इसके लिये खड्डेके
चारों ओर एक मामूली नाली बना देना चाहिये, जिसके द्वारा
जल सहजहीमें बहकर दूर चला जाय, क्योंकि खड्डेके आसपास
यदि वर्षाका जल इकट्ठा रहे, तो वह धीरे धीरे ज़मीनमें भिदकर
[illegible] छप्पर भी

डालनेके पहले घासके ऊपर अर्थात् खड्डेके मुंहपर चटाइयाँ बिछ देनी चाहियें, जिससे मिट्टी घासके ऊपरी हिस्से को बिगाड़ न सके। पर चटाइयोंका बिछाना सर्वसाधारणके लिये संभव नहीं हो सकता। इसलिये यदि आवश्यकता समझी जाय, तो ताजा घास बिछा देना ठीक होगा।

इस प्रकार घास रखकर देखा गया है कि, बहुत दिनोंतक वह अपनी असली अवस्थामें बना रहता है। और जिस प्रकार खाइयोंकी दीवारोंके पासका अनाज बहुत कुछ बिगड़ जाता है वैसा यह नहीं बिगड़ता। हाँ किसी हालतमें बिगड़ता है पर दीवारोंके पासका बहुत थोड़ा। और वह भी नीचेके हिस्सेकी पूरी २ रक्षा करता है। अलबत्ता घासका रंग कुछ फीका पड़ जाता है, पर इससे हानि होनेकी कोई संभावना नहीं है। गाय, घोड़े आदि पशु इसे बड़ी रुचिके साथ खाते हैं और ये ताज़ा घासकी तरह ही स्वाद लगता है। ताज़ा घासके गुणों और इसके गुणोंमें किसी प्रकारका अंतर नहीं होता। जैसे गुण इस घासमें कटते समय और पकी अवस्थामें होते हैं, वैसेके वैसे ही बने रहते हैं।

जब खड्डेमें से घास निकालना हो, तो खड्डेका मुंह कुछ खोलकर घास निकाल लेना चाहिये, और फिर उसे ज्यों का त्यों बंद कर देना चाहिये, पर रोज़ रोज़ घास निकालनेका काम जारी रखना ठीक नहीं। इससे घासके बिगड़ जानेकी संभावना रहती है।

अब पाठकोंके विचारनेकी बात है कि, इस प्रकार घासकी
रक्षा करनेसे कितना लाभ होता है; और अकालमें यह घास
कितने अभावकी पूर्ति कर सकता है। इसकी रक्षाका भी
कितना सहज उपाय है। हाँ खड्डा खोदते समय परिश्रम अवश्य
उठाना पड़ेगा; पर विना परिश्रमके संसारका कौनसा काम हो
जाता है? गंजी लगानेमें भी तो बहुतसा परिश्रम और खर्च
करना पड़ता है, और तब भी घास बिगड़ जाता है। इससे
तो यह उपाय बहुत सहज है। इस प्रकारका रक्षित घास
अकालमें हज़ारों पशुओंकी जान बचाता है। मकानोंमें भी घास
रक्षाके लिये भरा जा सकता है, पर वे मकान खास तौरपर इसी
कामके लिये बने होने चाहियें। उनमें किसी स्थानसे ज़रा भी
हवा न पहुंचे यह, ध्यान रखनेकी पहली बात है। गड्ढा हो
चाहे मकान, उसको आचारकी बोतलोंकी तरह गोल बनाना
चाहिये, इसमें हवाका बहुत बचाव रहता है। गड्ढेकी दीवारें
और पेंदा ईंटोंसे चिना जाय और उसपर चूना या गोबर लेप
दिया जाय, तो सबसे अच्छी बात है।
ताज़ा होना चाहियें। थ [illegible] थोड़ा
तो वह सारे [illegible] डालेगा
समय पर काट लिया [illegible] कुछ
भसेंतक धूपमें न [illegible]
जुआर, बाजरा, गेहूं, [illegible]
बनता है।

रहता है। इसके सिवा, सब प्रकारकी भूसी, झाड़ी वैरके पर्त्ते ( पाला ), बबूलकी फलियाँ ( पापड़े ) आदि चीज़ें भी अच्छा चारा होती हैं। इनकी रक्षा भी ज़रूर करनी चाहिए।

पशु हमारे देशका धन है। किसानी और किसानोंका बहुत कुछ दारोमदार पशुओंपर है। पशु, किसी न किसी तरहसे सबके काम आते हैं। इसलिये उनकी रक्षा करनेवाली वस्तुकी रक्षा करना बहुत आवश्यक है।



# तेरहवां अध्याय।

## कार्बन अर्थात् अंगारा।

अति प्राचीनकालसे लोग अंगारेका व्यवहार जानते हैं। वायु-हीन स्थानमें जलाई हुई लकड़ीके जो अंगारे होते हैं, वही असली अंगारे हैं।

अंगारे दो श्रेणीमें विभक्त हैं;—एक, दाना विशिष्ट और दूसरा दानाहीन। दाना विशिष्ट-अंगारेकी श्रेणीमें हीरा और ग्रेफाइटका वर्णन है; और दानाहीन श्रेणीमें कोक्, कार्बन—गैस, काजल, काष्ठाङ्गार और जन्तु-अंगार इत्यादि हैं।

हीरा—यद्यपि सन् १६६४ ईस्वीमें आक्सिजनकी भाफ़से हीरा, दग्ध किया जाता था; तौभी सन् १७७७ ई० तक इसे बहुतसे लोग पत्थरही मानते रहे। हीरा विशुद्ध अंगारा है, इसको आक्सिजनकी भाफ़में बिजलीके उत्तापसे विकृत इसमेंसे जलाये हुए साफ़ कोयलेकी भाफ़की तरह भाफ़ [illegible] होती है। यह महामूल्य [illegible] एसियाके नामक प्रदेशके विष्णुपुर [illegible] पाया गया था [illegible] बाद वोर्णिओ द्वीपमें [illegible] सन् १८. [illegible] ब्रेजिलके अन्तर्गत [illegible] नमें हीरे

निकली ; और वहांसे प्रतिवर्ष दश पन्द्रह पौंड हीरे विलायतमें विक्रीके लिये जाने लगे। इसके बाद, आस्ट्रेलिया, मेक्सिको, और केप आफ् गुड् होप् नामक स्थानोंमें हीरेकी खानें पाई गईं। ख़ास करके बालुकामय ज़मीनमें हीरा पाया जाता है। कभी कभी यह पत्थर विशेषके आवरणसे ढका रहता है। इस आवरणको अलग करके हीरा तोला जाता है; और उसके बाद पालिस करके अलंकारके काममें लाया जाता है। हीरेको, हीरेके छोटेसे टुकड़ेसेही साफ़ किया जाता है। हीरेके समान कठिन पदार्थ और नहीं है। इसका आपेक्षिक गुरुत्व ३·४से ३·६ तक है। इसके द्वारा बिजली एवं उत्ताप संचालित नही हो सकते।

हीरेके मूल्यकी सीमा नहीं है ; यह रत्तीके हिसाबसे बिकना है। और, इस तोलको अंग्रेज़ीमें केरट (Carat) कहते हैं। एक केरटका वज़न ३·१६ ग्रेन होता है। जो हीरा वज़नमें जितना केरट होगा, उसका मूल्य उतनाही अधिक होगा।

अबतक पृथ्वीपर जिस जिस स्थानमें जितने हीरे हैं, उनमें पारस्याधिपतिका हीरा सबसे बड़ा है। यह हीरा मुग़ल साम्राज्यका रत्न-विशेष था। देखनेसे यह हंसनीके अंडेकी तरह मालूम होता है ; और इसका वज़न ६०० केरट है। यह रत्न सन् १५५० ईस्वीमें गोलकुंडा प्रदेशमें मिला था। रूस-सम्राटके पास जो हीरा है, उसका वज़न १५६ केरट है; और कबूतरके छोटे अंडेकी तरह उसका आकार है। यह रत्न पहले भारतवर्षके किसी देवताका नेत्र था; पर कुछ फरासी सैनिक इसे चुरा ले गये। इनके

बाद बहुतसे हाथोंको पवित्र करता हुआ अखीरमें यह, महारानी केथराइनके हाथमें आया। महारानीने इसे, ६०००० पौंड नक़द मूल्य देकर और ४००० पौंड प्रतिवर्ष देते रहनेकी प्रतिज्ञा करके ख़रीदा। फ्रान्स देशके राज-मंदिरमें जो हीरा है, वह भारतवर्षसे गया है। इसका वज़न १३६ केरट है। इसे पिट् साहबने १२६००० पाउण्डमें बेचा था। इनके अतिरिक्त, एक भारतका रत्न कोहेनूर हीरा है। इसका वज़न १८६ केरट था। किन्तु फिर इसे, पलसे तोलनेके लिये वज़नमें ८० केरट कम कर दिया गया। कोहेनूर हीरा इस समय भारतेश्वर महोदयके मुकुटमें शोभा पाता है।

व्यवहार—हीरा ख़ास तौर पर अलंकारोंके लिये ही काममें लाया जाता है। घड़ी और विलायतमें छोटी तराज़ू आदिके काममें भी इसका व्यवहार करते हैं। इसके अतिरिक्त, कांच काटनेकी क़लम भी हीरे से ही तैयार की जाती है। दूरबीन बनानेमें भी हीरेकी बहुत कुछ आवश्यकता पड़ती है।

ग्रेफाइट—इसका दूसरा नाम प्लाम्बेगो है। स्वाभाविक अवस्थामें यह प्रचुर परिमाणमें पैदा [illegible] विशेष खानें कामबालएिड देशके अन्तर्गत बरर्ड [illegible] हैं।

लोहेके [illegible] गलानेसे ग्रे [illegible]

हो सकती [illegible] कृष्ण [illegible] है।

इसका [illegible] २'६ से [illegible]

उत्ताप [illegible]

हाथमें लेकर अंगुलीसे घिसी जाय, तो साबुनकी तरह चिकनाहट मालूम होती है।

ग्रेफ़ाइटका व्यवहार—ग्रेफ़ाइटसे काग़ज़पर लिखनेकी पेन्सिलें तैयार की जाती हैं। राणी एलिजबेथके राजत्वकालमें बरडेल-की खानमें पेन्सिलें तैयार करनेकी आज्ञा दी गई थी। बारूदके दाने पर जो चमकीली पालिस देखी जाती है, वह ग्रेफ़ाइटसे तैयार की जाती है। लोहेकी चीज़ोंको, हिफ़ाज़तके लिये ग्रेफ़ाइटके चूर्णसे ढक दी जाती हैं। कभी कभी किसी दरारको बंद करनेके लिये भी ग्रेफ़ाइटका प्रलेप किया जाता है। इसके सिवाय, किसी धातुको गलाकर उसकी ढाली बनानेके लिये भी ग्रेफ़ाइटका कीचड़के साथ व्यवहार किया जाता है।

कोक्—पत्थरके कोयलेको जलाने पर जो अंश बाक़ी रहता है, उसे कोक कहते हैं।

कार्बन गैस—जिस समय रास्तेकी गैस तैयार करनेके लिये पत्थरके कोयले लोहेके बर्तनमें रखकर गरम किये जाते हैं, उस समय जो भाफ़के बाहर निकल जानेपर छोटी छोटी चिन-गारियां क्रमशः लोह-यंत्रके ऊपर इकट्ठी हो जाती हैं; उसे कार्बन गैस कहते हैं।

कार्बन-गैसका व्यवहार—यह गैस इलेक्ट्रिक्—लाइट्, बुन्सेन्स और बाइक्रोमेट् आफ् पोटास बेटरीमें काम आती है।

काजल—काजल दो प्रकारका होता है,—(१) बड़ी चिमनीमें जो इकट्ठा होता है, उसे अंग्रेज़ीमें सूट् कहते हैं। इसमें मिट्टीका

बाद बहुतसे हाथोंको पवित्र करता हुआ अख़ीरमें यह, महारानी केथाराइनके हाथमें आया। महारानीने इसे, ९०००० पौंड नक़द मूल्य देकर और ४००० पौंड प्रतिवर्ष देते रहनेकी प्रतिज्ञा करके ख़रीदा। फ्रान्स देशके राज-मंदिरमें जो हीरा है, वह भारतवर्षसे गया है। इसका वज़न १३६ केरट है। इसे पिट् साहबने १२६००० पाउण्डमें वेचा था। इनके अतिरिक्त, एक भारतका रत्न कोहेनूर हीरा है। इसका वज़न १८६ केरट था। किन्तु फिर इसे, पलसे तोलनेके लिये वज़नमें ८० केरट कम कर दिया गया। कोहेनूर हीरा इस समय भारतेश्वर महोदयके मुकुटमें शोभा पाता है।

व्यवहार—हीरा ख़ास तौर पर अलंकारोंके लिये ही काममें लाया जाता है। घड़ी और विलायतमें छोटी तराज़ू आदिके काममें भी इसका व्यवहार करते हैं। इसके अतिरिक्त, काच काटनेकी क़लम भी हीरे से ही तैयार की जाती है। दूरबीन बनानेमें भी हीरेकी बहुत कुछ आवश्यकता पड़ती है।

ग्रेफाइट—इसका दूसरा नाम प्लान्वेगो है। स्वाभाविक अवस्थामें यह प्रचुर परिमाणमें पैदा होती है। इसकी विशेष खानें कामबालण्ड देशके अन्तर्गत बरडेल नामक स्थानमें हैं।

लोहेके साथ कोयला गलानेसे ग्रेफाइट, कृत्रिम रूपसे तैयार हो सकती है। यह देखनेमें कृष्ण-वर्ण मालूम होती है; और इसका अपेक्षिक गुरुत्व १·९ से २·३ तक है। इसके द्वारा उत्ताप और बिजली आदि संचालित हो सकते हैं। ग्रेफाइटको

" ६५ " सल्फ़र डाइअक्साइड् "

" - ५५ " सल्फ्यूरेटेड हाइड्रोज़न "

कोयलेकी भाफ़ आदि शोषण करनेके लिये, अस्पतालकी वायु शुद्ध करनेके उद्देश्यसे एक बड़ी भारी टोकरीमें कोयले भरकर उसे घरमें लटका दी जाती है।

उद्भिजका रंग साफ़ करनेके लिये कोयला विशेष उपयोगी वस्तु है। परन्तु इस कामके लिये साधारण तौरपर जान्तवाङ्गार भी काममें लाये जाते हैं।

व्यवहार—लकड़ीके कोयलेकी अपेक्षा जान्तवाङ्गार ज़्यादा काममें लिया जाता है। जल साफ़ करनेके यंत्र ( filter ) में कोयलेका प्रयोग, जलकी दुर्गन्ध और ख़राब रंगतको फ़ौरनही दूर कर देता है। शक्करके रसका मैल साफ़ करनेके लिये जान्तवाङ्गार हमेशा काममें आता है।

परीक्षा—एक काचकी बोतलमें गुड़का जल लेकर, उसके साथ कुछ जान्तवाङ्गार मिलानेके बाद उसे कुछ देरतक ख़ूब आलोडित कीजिये; और फिर फ़िल्टरमें डालिये। इसके बाद, फिल्टरसे निकलनेवाले जलको काचके किसी साफ़ बर्तनमें इकट्ठा करके, गुड़के दूसरे पानीसे मिलाइये, आपको बहुत फ़र्क़ मालूम होगा।

अंगारे और आक्सिजनका योग,—आक्सिजनके योगसे अंगारा, दो यौगिक उत्पादन करता है। ( १ ) कार्बोनिक एक्साइड्, ( २ ) कार्बोनिक–एनहाइड्राइड्। इस आख़िरी यौगिकके

सार होता है। (२) दूसरी क़िस्मके काजलका नाम लैम्प-ब्लैक है; यह साधारण तेल अथवा टार्वीनका तेल जलानेसे पैदा होता है। विशेषकर यह जूतोंपर रंगत करनेके काममें लाया जाता है; और रंगके साथ मिलाकर भी इसे काममें लाते हैं।

कोयला—यह लकड़ी अथवा किसी चीज़के जले हुए अंगारे होते हैं। किसी बंद स्थानमें लकड़ी, हड्डी अथवा शरीरका कोई भी अंश जलानेसे यह, तैयार होते हैं।

कोयलेका व्यवहार—इनका रंगकाला और साफ़ होता है। ये गन्ध अथवा आस्वादन विहीन हैं। इनसे दूषित वायु शुद्ध होती है, और रंगत आदि करनेके काममें भी ये लाये जाते हैं।

कोयलेकी परीक्षा—एक कांचके नलमें एमोनिया भाफ़ भरके उसमें एक इंच गरम कोयले भरिये, और फिर उस नलको पारा भरे हुए बर्तनके ऊपर रखिये। आपको मालूम होगा कि बर्तनके भीतर पारा जल्दी जल्दी उछल रहा है। अर्थात्, कोयले जितना एमोनियाको शोप लेंगे, उतनाही नलमें खाली स्थान हो जावेगा, और पारा उसमें उतनाही

„ ६५ „ सल्फ़र डाइअक्साइड् „

„ - ५५ „ सल्फ्यूरेटेड हाइड्रोजन „

कोयलेकी भाफ़ आदि शोषण करनेके लिये, अस्पतालकी वायु शुद्ध करनेके उद्देश्यसे एक बड़ी भारी टोकरीमें कोयले भरकर उसे घरमें लटका दी जाती है।

उद्भिजका रंग साफ़ करनेके लिये कोयला विशेष उपयोगी वस्तु है। परन्तु इस कामके लिये साधारण तौरपर जान्तवाङ्गार भी काममें लाये जाते हैं।

व्यवहार—लकड़ीके कोयलेकी अपेक्षा जान्तवाङ्गार ज़्यादा काममें लिया जाता है। जल साफ़ करनेके यंत्र ( filter ) में कोयलेका प्रयोग, जलकी दुर्गन्ध और ख़राब रंगतको फ़ौरनही दूर कर देता है। शक्करके रसका मैल साफ़ करनेके लिये जान्त-वाङ्गार हमेशा काममें आता है।

परीक्षा—एक काचकी बोतलमें गुड़का जल लेकर, उसके साथ कुछ जान्तवाङ्गार मिलानेके बाद उसे कुछ देरतक ख़ूब आलोड़ित कीजिये; और फिर फ़िल्टरमें डालिये। इसके बाद, फिल्टरसे निकलनेवाले जलको काचके किसी साफ़ बर्तनमें इकट्ठा करके, गुड़के दूसरे पानीसे मिलाइये, आपको बहुत फ़र्क़ मालूम होगा।

अंगारे और आक्सिजनका योग,—आक्सिजनके योगसे अंगारा, दो यौगिक उत्पादन करता है। ( १ ) कार्बोनिक एक्-साइड्, ( २ ) कार्बोनिक–एनहाइड्राइड्। इस आख़िरी यौगिकके

सार होता है। (२) दूसरी क़िस्मके काजलका नाम लैम्प-ब्लेक है ; यह साधारण तेल अथवा टार्वीनका तेल जलानेसे पैदा होता है। विशेषकर यह जूतोंपर रंगत करनेके काममें लाया जाता है ; और रंगके साथ मिलाकर भी इसे काममें लाते हैं।

कोयला—यह लकड़ी अथवा किसी चीज़के जले हुए अंगारे होते हैं। किसी बंद स्थानमें लकड़ी, हड्डी अथवा शरीरका कोई भी अंश जलानेसे यह, तैयार होते हैं।

कोयलेका व्यवहार—इनका रंगकाला और साफ़ होता है। ये गन्ध अथवा आस्वादन विहीन हैं। इनसे दूषित वायु शुद्ध होती है, और रंगत आदि करनेके काममें भी ये लाये जाते हैं।

कोयलेकी परीक्षा—एक काचके नलमें एमोनिया भाफ़ भरके उसमें एक इंच गरम कोयले भरिये, और फिर उस नलको पारा भरे हुए वर्तनके ऊपर रखिये। आपको मालूम होगा कि वर्तनके भीतर पारा जल्दी जल्दी उछल रहा है। अर्थात्, कोयले जितना एमोनियाको शोष लेंगे, उतनाही नलमें खाली स्थान हो जावेगा, और पारा उसमें उतनाही प्रवेश करेगा।

इस तरहकी परीक्षासे स्थिर हो चुका है कि, भिन्न भिन्न प्रकारकी भाफ़, भिन्न भिन्न परिमाणमें शोषित हो सकती है। जैसे ;—एक प्रस्थ कोयला ९० प्रस्थ एमोनियाको शोषण करता है, तो और भी नीचे लिखे अनुसार शोषण कर सकते हैं ;—

एक प्रस्थ कोयला ८५ प्रस्थ हाइड्रोक्लोरिक एसिड्को शोषण करता है।

„ ६५ „ सल्फ़र डाइअक्साइड् „
„ ५५ „ सल्फ्यूरेटेड हाइड्रोज़न „

कोयलेकी भाफ़ आदि शोषण करनेके लिये, अस्पतालकी वायु शुद्ध करनेके उद्देश्यसे एक बड़ी भारी टोकरीमें कोयले भरकर उसे घरमें लटका दी जाती है।

उद्भिजका रंग साफ़ करनेके लिये कोयला विशेष उपयोगी वस्तु है। परन्तु इस कामके लिये साधारण तौरपर जान्तवाङ्गार भी काममें लाये जाते हैं।

व्यवहार—लकड़ीके कोयलेकी अपेक्षा जान्तवाङ्गार ज़्यादा काममें लिया जाता है। जल साफ़ करनेके यंत्र ( filter ) में कोयलेका प्रयोग, जलकी दुर्गन्ध और ख़राब रंगतको फ़ौरनही दूर कर देता है। शक्करके रसका मैल साफ़ करनेके लिये जान्त-वाङ्गार हमेशा काममें आता है।

परीक्षा—एक काचकी बोतलमें गुड़का जल लेकर, उसके साथ कुछ जान्तवाङ्गार मिलानेके बाद उसे कुछ देरतक खूब आलोडित कीजिये; और फिर फ़िल्टरमें डालिये। इसके बाद, फिल्टरसे निकलनेवाले जलको काचके किसी साफ़ बर्तनमें इकट्ठा करके, गुड़के दूसरे पानीसे मिलाइये, आपको बहुत फ़र्क़ मालूम होगा।

अंगारे और आक्सिजनका योग,—आक्सिजनके योगसे अंगारा, दो यौगिक उत्पादन करता है। ( १ ) कार्बोनिक एक्-साइड्, ( २ ) कार्बोनिक–एनहाइड्राइड्। इस आख़िरी यौगिकके

साथ एक अणु जल मिलानेसे यह अम्लके रूपमें व्यवहार होता है।

कार्बोनिक एक्साइड्—सबसे पहले पिष्टली साहबने बंदूकको नलीमें कंकर तपाकर इसे तैयार किया था; किन्तु अभाग्यवश वे इस पदार्थकी दाहाशीलता देखकर इसे हाइड्रोज़न जानने लगे। इसके बाद, सन् १८०३ में क्रूकसैंक और क्लेमेण्ट आदि रसायन-शास्त्रियोंने इस योगका प्रकृत वृतान्त निरूपण कर दिया।

कार्बोनिक एकसाइड्, स्वाभाविक रीतिसे शीतोष्ण और हवासे इकट्ठी होनेवाली भाफ़की अवस्थामें रहती है। जिस जगह कंकड़ जलाकर चूना तैयार किया जाता है, अथवा ईंट आदि जलाई जाती हैं उस स्थानमें कार्बोनिक एक्साइड् पैदा होती है। पत्थरके कोयले अथवा कोक् जलाते समय भट्ठीके ऊपर जो नीले रंगकी रेखा दिखाई देती है, वह इसी जली हुई भाफ़का फल स्वरूप है।

तैयार करनेकी विधि—सल्फ़्यूरिक—एसिड्के द्वारा एकसेलिक् एसिड् विकृत करने पर यह भाफ़ तैयार होती है।

इस परिवर्तनमें एक्सेलिक् एसिड् अपने आप विकृत होने पर वह कार्बोनिक एनहाइड्राइड, कार्बोनिक एकसाइड् और जलमें परिणत हो जाती है। सल्फ़्यूरिक एसिड्, एकसेलिक् एसिड्से केवल एक अणु जल खींच ले, तो उसके सारे अन्यान्य परमाणु पहलेकी तरह नहीं रह सकते।

कार्बोनिक् एनहाइड्राइड्से कार्बोनिक एकसाइड्को शुद्ध

करना हो, तो उसे कास्टिक् पोटासके द्रावणके भीतर रखकर संचालित करना पड़ता है।

इस, शुद्ध-कार्बोनिक एक्साइड्के तैयार करनेकी दूसरी विधि यह है कि, फेरोसायानाइड् आव् पोटासियम्के साथ जल मिलाकर सल्फ्यूरिक एसिड्के संयोगसे रिटर्ट किम्वा फ्लास्केके भीतर रखकर इसे विकृत करना चाहिये।

व्यवस्था—यह भाफ़ वर्ण और गन्ध-हीन है। इसमें बहुतही विषैली वस्तु मिली रहती है। चिरकाल तक यदि इसे नाकसे सूंघी जाया करे, तो इससे निःसंदेह मृत्यु हो जाती है। इसका आपेक्षिक गुरुत्व ०, ९७ है, जो हाइड्रोज़नकी अपेक्षा १४ गुणा भारी है। यह भाफ़ अन्यान्य भाफ़ोंकी तरह तरलावस्थामें अवस्थित रहती है। गरम नलके अन्दर कार्बोनिक एक्साइड् भाफ़को चलानेसे यह, एक अणु कार्बोनिक एनहाइड्राइड् और एक परमाणु अंगारसे विकृत हो जाती है।

इस भाफ़को क्लोरिनके साथ मिलाकर धूपमें रखनेसे इसका फ़सजिन् नामक यौगिक तैयार हो जाता है।

कार्बोनिक एक्साइड् भाफ़, दाह्य शील पदार्थ है। जलाते समय इसमेंसे नीली शिखा निकलती है। और दग्धावशेष भाफ़को कार्बोनिक एनहाइड्राइड कहते हैं।

कार्बोनिक एनहाइड्राइड्—इसका साधारण नाम कार्बोनिक एसिड् है। सन् १७७५ ई० में हीरेको जलाकर लेमयसिय नामक स्थानमें इसे निकाला गया था।

साथ एक अणु जल मिलानेसे यह अम्लके रूपमें व्यवहार होता है।

कार्बोनिक एक्साइड्—सबसे पहले पिष्टली साहबने बंदूकको नलीमें कंकर तपाकर इसे तैयार किया था; किन्तु अभाग्यवश वे इस पदार्थकी दाह्यशीलता देखकर इसे हाइड्रोजन जानने लगे। इसके बाद, सन् १८०३ में क्राकसैंक और क्लेमेण्ट आदि रसायन-शास्त्रियोंने इस योगका प्रकृत वृतान्त निरूपण कर दिया।

कार्बोनिक एकसाइड्, स्वाभाविक रीतिसे शीतोष्ण और हवासे इकट्ठी होनेवाली भाफ़की अवस्थामें रहती है। जिस जगह कंकड़ जलाकर चूना तैयार किया जाता है, अथवा ईंटें आदि जलाई जाती हैं उस स्थानमें कार्बोनिक एक्साइड् पैदा होती है। पत्थरके कोयले अथवा कोक् जलाते समय भट्टीके ऊपर जो नीले रंगकी रेखा दिखाई देती है, वह इसी जली हुई भाफ़का फल स्वरूप है।

तैयार करनेकी विधि—सल्फ्यूरिक—एसिड्के द्वारा एकसेलिक् एसिड् विकृत करने पर यह भाफ़ तैयार होती है।

इस परिवर्तनमें एक्सेलिक् एसिड् अपने आप विकृत होने पर वह कार्बोनिक एनहाइड्राइड, कार्बोनिक एकसाइड् और जलमें परिणत हो जाती है। सल्फ्यूरिक एसिड्, एकसेलिक् एसिड्से केवल एक अणु जल खींच ले, तो उसके सारे अन्यान्य परमाणु पहलेकी तरह नहीं रह सकते।

कार्बोनिक् एनहाइड्राइड्से कार्बोनिक एकसाइड्को शुद्ध

करना हो, तो उसे कास्टिक् पोटासके द्रावणके भीतर रखकर संचालित करना पड़ता है।

इस, शुद्ध-कार्बोनिक एक्साइड्के तैयार करनेकी दूसरी विधि यह है कि, फेरोसायानाइड् आव् पोटासियम्के साथ जल मिलाकर सल्फ्यूरिक एसिड्के संयोगसे रिटर्ट किम्वा फ्लास्केके भीतर रखकर इसे विकृत करना चाहिये।

व्यवस्था—यह भाफ़ वर्ण और गन्ध-हीन है। इसमें बहुतही विषैली वस्तु मिली रहती है। चिरकाल तक यदि इसे नाकसे सूंघी जाया करे, तो इससे निःसंदेह मृत्यु हो जाती है। इसका आपेक्षिक गुरुत्व ०. ९७ है, जो हाइड्रोजनकी अपेक्षा १४ गुणा भारी है। यह भाफ़ अन्यान्य भाफ़ोंकी तरह तरलावस्थामें अवस्थित रहती है। गरम नलके अन्दर कार्बोनिक एक्साइड् भाफ़को चलानेसे यह, एक अणु कार्बोनिक एनहाइड्राइड् और एक परमाणु अंगारसे विकृत हो जाती है।

इस भाफ़को क्लोरिनके साथ मिलाकर धूपमें रखनेसे इसका फ़सजिन् नामक यौगिक तैयार हो जाता है।

कार्बोनिक एक्साइड् भाफ़, दाह्य शील पदार्थ है। जलाते समय इसमेंसे नीली शिखा निकलती है। और दग्धावशेष भाफ़को कार्बोनिक एनहाइड्राइड कहते हैं।

*कार्बोनिक एनहाइड्राइड्—इसका साधारण नाम कार्बोनिक* एसिड् है। सन् १७५५ ई० में हीरेको जलाकर लेभयसिय नामक स्थानमें इसे निकाला गया था।

साथ एक अणु जल मिलानेसे यह अम्लके रूपमें व्यवहार होता है।

कार्बोनिक एक्साइड्—सबसे पहले पिष्टली साहबने बंदूकको नलीमें कंकर तपाकर इसे तैयार किया था; किन्तु अभाग्यवश वे इस पदार्थकी दाह्यशीलता देखकर इसे हाइड्रोज़न जानने लगे। इसके बाद, सन् १८०३ में क्राकसैंक और क्लेमेण्ट आदि रसायन-शास्त्रियोंने इस योगका प्रकृत वृतान्त निरूपण कर दिया।

कार्बोनिक एकसाइड्, स्वाभाविक रीतिसे शीतोष्ण और हवासे इकट्ठी होनेवाली भाफ़की अवस्थामें रहती है। जिस जगह कंकड़ जलाकर चूना तैयार किया जाता है, अथवा ईंट आदि जलाई जाती हैं उस स्थानमें कार्बोनिक एक्साइड् पैदा होती है। पत्थरके कोयले अथवा कोक् जलाते समय भट्टीके ऊपर जो नीले रंगकी रेखा दिखाई देती है, वह इसी जली हुई भाफ़का फल स्वरूप है।

तैयार करनेकी विधि—सल्फ्यूरिक—एसिड्के द्वारा एकसेलिक् एसिड् विकृत करने पर यह भाफ़ तैयार होती है।

इस परिवर्तनमें एक्सेलिक् एसिड् अपने आप विकृत होने पर यह कार्बोनिक एनहाइड्राइड, कार्बोनिक एकसाइड् और जलमें परिणत हो जाती है। सल्फ्यूरिक एसिड्, एकसेलिक् एसिड्से केवल एक अणु जल खींच ले, तो उसके सारे अन्यान्य परमाणु पहलेकी तरह नहीं रह सकते।

कार्बोनिक् एनहाइड्राइड्से कार्बोनिक एकसाइड्को शुद्ध

स्पर्श अथवा वायुकी संचालन क्रियाकी अधिकतासे यह तरलाकार धारण कर लेती हैं।

जलमें गल जानेसे कार्योनिक एनहाइड्राइड्,कार्योनिक एसिड् के नामसे पुकारी जाती है। कार्योनिक एसिड्, डाइवेसिक् है; क्योंकि इसमें दो परमाणु हाइड्रोज़नके हैं। यह दो परमाणु, एक परमाणु डायड् अथवा दूसरा परमाणु मनाड् धातुके द्वारा स्थानच्युत होकर दो श्रेणीका लवण तैयार करते रहते हैं।

इस परिवर्त्तनमें दो परमाणु सोडियम् और दो परमाणु हाइड्रोज़नको स्थानसे हटानेका प्रयोजन है।

एक अणु चूनेकी एक परमाणु केल्सियम् धातु, दो परमाणु हाइड्रोज़नके स्थानपर अधिकार कर लेती है। कार्योनिक एनहाइड्राइड्की भाफ़में दीपक बुझ जाता है; और यह कार्योनिक एक्साइड्की तरह दाह्य नहीं है।

निरूपण प्रणाली—कार्योनिक एनहाइड्राइड्के साथ चूनेका जल मिला देनेसे वह दूधके समान हो जाता है।

अंगारे और हाइड्रोज़नका योग—अंगारेके साथ हाइड्रोज़न भाफ़ मिलानेके संबंधमें रासायनिक सम्मिलनका कोई लक्षण प्रकट नहीं होता; किन्तु अन्य प्रकारसे यह दोनों रूढ़ पदार्थ विविध रूपमें संयुक्त होकर असीम यौगिकोंके निदान स्वरूप हो जाते हैं। इसलिये रसायन-शास्त्रके द्वितीय भागमें इसका नाम अंगारिक-रसायन (Organic Chemistry) रक्खा गया है। यह अंगारिक यौगिक, हाइड्रो-अंगारिक (Hydro Carban)

कार्बोनिक एनहाइड्राइड् खुले तौरपर पृथ्वीकी वायुमें अवस्थित रहती है। इसके यौगिककी संख्या नहीं। छोटे कंकर, मोती, कँकड़ा और उसके अंडेका छिलका, मछलीकी खाल, सीप, शंख आदि पदार्थ इसके यौगिक विशेष हैं। इसके सिवाय, धातु और अधातु पदार्थों में भी यह कई प्रकारसे पाई जाती है। खुली कार्बोनिक एनहाइड्राइड् कई तरहसे पैदा हो सकती है।

तैयार करनेकी विधि,—हाइड्रोज़न तैयार करनेके यंत्र-विशेष में छोटे कंकर अथवा पत्थर रखकर उसे हाइड्रोक्लोरिक् एसिड् द्वारा विकृत करनेसे केल्सियम् क्लोराइड् और कार्बोनिक् एनहाइड्राइड् भाफ़ तैयार हो जाती है।

व्यवस्था—यह वर्णहीन भाफ़ है। इसमें एक प्रकारकी गंध है; किन्तु ज़्यादा तादादमें वायुके साथ मिल जानेके कारण वह गंध कुछ भी मालूम नहीं होती। वायुके साथ पांच भाग कार्बोनिक एनहाइड्राइड् मिल जानेसे उसमें एक प्रकारकी तीव्र गंध पैदा हो जाती है। कार्बोनिक एनहाइड्राइड्को पीनेसे किसी प्रकारका नुक़सान नहीं होता ; किन्तु सूंघनेसे फ़ौरनही मरजानेकी संभावना है।

कार्बोनिक एनहाइड्राइड्का आपेक्षिक गुरुत्व १·५२९ है। यह हाइड्रोज़नकी अपेक्षा २२ गुणा और वायुकी अपेक्षा प्राय डेढ़ गुणा भारी है; इसलिये जलकी तरह सहजहीमें एक पात्रसे दूसरे पात्रमें डाली जा सकती है। कार्बोनिक एनहाइड्राइड् अधिक परिमाणमें गलकर जलमें मिली रहती है। और, ठंडकके

स्पर्श अथवा वायुकी संचालन क्रियाकी अधिकतासे यह तरला-कार धारण कर लेती है।

जलमें गल जानेसे कार्बोनिक एन्हाइड्राइड्,कार्बोनिक एसिड् के नामसे पुकारी जाती है। कार्बोनिक एसिड्, डाइबेसिक् है; क्योंकि इसमें दो परमाणु हाइड्रोज़नके हैं। यह दो परमाणु, एक परमाणु डायड् अथवा दूसरा परमाणु मनाड् धातुके द्वारा स्थान-च्युत होकर दो श्रेणीका लवण तैयार करते रहते हैं।

इस परिवर्त्तनमें दो परमाणु सोडियम् और दो परमाणु हाइ-ड्रोज़नको स्थानसे हटानेका प्रयोजन है।

एक अणु चूनेकी एक परमाणु केल्सियम् धातु, दो परमाणु हाइड्रोज़नके स्थानपर अधिकार कर लेती है। कार्बोनिक एन्हाइ-ड्राइड्की भाफ़में दीपक बुझ जाता है; और यह कार्बोनिक एक्-साइड्की तरह दाह्य नहीं है।

निरूपण प्रणाली—कार्बोनिक एन्हाइड्राइड्के साथ चूनेका जल मिला देनेसे यह दूधके समान हो जाता है।

अंगारे और हाइड्रोज़नका योग—अंगारेके साथ हाइड्रोज़न भाफ़ मिलानेके संबंधमें रासायनिक सम्मिलनका कोई लक्षण प्रकट नहीं होता; किन्तु अन्य प्रकारसे यह दोनों रूढ़ पदार्थ विविध रूपमें संयुक्त होकर असीम यौगिकोंके निदान स्वरूप हो जाते हैं। इसलिये रसायन-शास्त्रके द्वितीय भागमें इसका नाम अंगारिक-रसायन (Organic Chemistry) रखा गया है। यह अंगारिक यौगिक, हाइड्रो-अंगारिक (Hydro Carban)

के नामसे हमेशा पुकारा जाता है। जो हो, अनङ्गारिक (Inorganic) श्रेणीके अन्दर मार्सगैस, ओलिफाइएट-गैस, और एसिटिलिन होनेकी सभी आलोचना करते हैं; इसलिये लौकिक प्रथानुसार इसका यहां संक्षिप्त विवरण लिखा जाता है।

मार्संगैस—यह बहुतसे नामोंसे पुकारी जाती है। जैसे;—मिथेनलाइट (Methane),कार्ब्यूरेटेड हाइड्रोज़न लाइट, (Light Carburetted Hydrogen), फ़ायर डेम्प (Fire damp) इत्यादि। सन् १७७८ ईस्वीमें वोल्टा साहबने इसकी सबसे पहले परीक्षा की थी।

ऊपर कह आये हैं कि, अंगारे और हाइड्रोज़नके योगोंको अंगारिक-पदार्थ कहते हैं। अंगारिक—पदार्थमें प्रायः अंगार, हाइड्रोज़न और आक्सिजन पदार्थ रहते हैं। जब यह सारे पदार्थ भू-वायुमें विकृत हो जाते हैं, तब वायुस्थित आक्सिजन द्वारा वे जल और कार्बोनिक एनहाइड्राइड्की भाफ़में बैठ जाते हैं। किन्तु, यह अंगारिक पदार्थ, भू-वायु रहित स्थानमें शीतलतासे विकृत करनेपर मार्संगैस पैदा करता है। इसलिये जिस जलाशयमें वृक्ष, पल्लवादि समेत कीचड़ भरा रहता है, वहां यह मोतीकी तरह अवस्थित रहता है। कीचड़ भरे जलाशयका कीचड़ आलोडित करनेपर जो भाफ़ बुद बुदके आकारमें निकलती है, उसे मार्संगेस कहते हैं। यह भाफ़ कोयलेकी खानोंमें हमेशा पैदा होती रहती है। पहले इसका विशेष तत्व न जाननेके कारण इससे बहुतसी भीषण घटनायें हुआ करती थीं।

तैयार करनेकी विधि—पांच भाग सोडियम् एसिटेट्के साथ पांच भाग काष्टिक सोडा और साढ़े सात भाग चूना मिलाकर ताम्बेके फ्लास्कमें रखना चाहिये; और फिर उसे गरम करना चाहिये। बस, इसीसे मार्सगैस तैयार हो जायगी, और कार्बोनेट आफ् सोडा पात्रके अन्दर बचा रहेगा।

इस परिवर्त्तनमें चूना विकृत नहीं होता। मार्सगैस बाहरसे आरंभ होनेपर उसे न्यूमेटिक् ट्रेफ़के ऊपर जलसे भरी बोतलमें इकट्ठी करनी पड़ती है।

व्यवस्था—यह भाफ़ वर्ण, गंध, और आस्वाद विहीन है। इसमें कोई विषैली वस्तु नहीं। इसका आपेक्षिक गुरुत्व ०·५५७ है। यह बहुतही बिगड़े हुए जलमें कुछ गलकर रहती है। दीपक की लौ प्रविष्ट करनेपर यह मार्सगैस प्रकाश पूर्वक जलने लगती है। यद्यपि यह दीपककी लौके स्पर्शसे जलने लगजाती है तथापि हाइड्रोज़न आदि भाफ़ें जलनेकी सीमाके अन्दर रह कर इसे पूरे तौरसे नहीं जलातीं। एक भाग मार्सगैसके साथ दो भाग आक्सिजन मिला देनेसे वह, दीपककी लौका स्पर्श होतेही विपरीत शब्द करती हुई जल उठती है। इस प्रकारका भयानक दाहशील मिश्रण वायुके १० भागोंके साथ उत्पन्न होता है। पहले कोयलेकी खानोंमें मार्सगैससे जो भीषण घटना होनेकी बात कही गई है, उसका मुख्य हेतु यही है। क्योंकि खानोंमें उजियाला बिना आना जाना नहीं हो सकता; और उजियालेसे जिस समय मार्सगैस उपयुक्त मिश्रणावस्था पाती थी;

के नामसे हमेशा पुकारा जाता है। जो हो, अनङ्गारिक (Inorganic) श्रेणीके अन्दर मार्सगैस, ओलिफाइएट-गैस, और एसिटिलिन होनेकी सभी आलोचना करते हैं; इसलिये लौकिक प्रथानुसार इसका यहां संक्षिप्त विवरण लिखा जाता है।

मार्सगैस—यह बहुतसे नामोंसे पुकारी जाती है। जैसे;—मिथेनलाइट (Methane),कार्ब्यूरेटेड हाइड्रोज़न लाइट, (Light Carburetted Hydrogen), फ़ायर डेम्प (Fire damp) इत्यादि। सन् १७७८ ईस्वीमें वोल्टा साहबने इसकी सबसे पहले परीक्षा की थी।

ऊपर कह आये हैं कि, अंगारे और हाइड्रोज़नके योगोंको अंगारिक-पदार्थ कहते हैं। अंगारिक–पदार्थमें प्रायः अंगार, हाइड्रोज़न और आक्सिजन पदार्थ रहते हैं। जब यह सारे पदार्थ भू-वायुमें विकृत हो जाते हैं, तब वायुस्थित आक्सिजन द्वारा वे जल और कार्बोनिक एनहाइड्राइड्की भाफ़में बैठ जाते हैं। किन्तु, यह अंगारिक पदार्थ, भू-वायु रहित स्थानमें शीतलतासे विकृत करनेपर मार्सगैस पैदा करता है। इसलिये जिस जलाशयमें वृक्ष, पल्लवादि समेत कीचड़ भरा रहता है, वहां यह मोतीकी तरह अवस्थित रहता है। कीचड़ भरे जलाशयका कीचड़ आलोडित करनेपर जो भाफ़ बुद बुदके आकारमें निकलती है, उसे मार्सगैस कहते हैं। यह भाफ़ कोयलेकी खानोंमें हमेशा पैदा होती रहती है। पहले इसका विशेष तत्व न जाननेके कारण इससे बहुतसी भीषण घटनाएं हुआ करती थी।

होनेके पहले लोगोंको होशियार होनेका बहुत समय मिल जाता है।

ओलिफायेण्ट गैस—सन् १७९५ ई०में ओलन्दाज देशके रसायनज्ञोंने इस गैसका आविष्कार किया।

तैयार करने की विधि-शराब और सल्फ़्यूरिक-एसिड्से यह तैयारकी जाती है। इसका परिवर्त्तन दो अवस्थामें हो सकता है।

शराबके साथ सल्फ़्यूरिक-एसिड् मिलानेसे, उसमेंसे एक अणु जल बाहर निकल जाता है; फिर सल्फ़्यूरिक-एसिड्के साथ शराबका जो यौगिक उत्पन्न होता है, वह उत्तापकी सहायतासे ओलिफायेण्ट गैस और सल्फ़्यूरिक-एसिड्से विकृत हो जाता है। ओलिफायेण्ट गैसको जलसे भरी हुई बोतलमें इकट्ठी कर लेनी चाहिये।

व्यवस्था—यह भाफ़ वर्णहीन है। इसका आपेक्षिक गुरुत्व ०.९७८ है; और यह दीप-शिखाके स्पर्शसे उज्ज्वल दीप्ति धारण करके विकाशपूर्वक जलती रहती है। तीन आयत आक्सिजनके साथ मिलनेसे यह अतिशय दाहशील हो जाती है। और, क्लोरिन्के साथ मिलानेसे इसमेंसे एक प्रकारका तेलके समान यौगिक पदार्थ पैदा होता है।

एसिटिलिन—अंगार और हाइड्रोज़नको बिजलीके द्वारा तपाकर [illegible] न्पन्न होता है।

[illegible] तसे पदार्थोंका मिश्रण

है [illegible] तपाने पर यह तैयार

उसी समय अग्निकाण्ड हो जाता था; और वह किसीकी तद्वीरसे बंद नहीं होता था।

बहुतसी परीक्षाओंके द्वारा डेभी साहबने एक लालटेन बनाई। यह लालटेन कोयलेकी खानोंकी बहुतसी दुर्घटनाएं मिटाने लगी; इससे लोगोंका भय बहुत कुछ दूर हो गया। जिस वैज्ञानिक भित्तिके ऊपर डेभी साहबने लालटेनको निर्म्माण किया है, उसका वर्णन नीचे लिखा जाता है।

पहली परीक्षा—प्लाटिनमूका एक टुकड़ा गरम करके मार्स-गैसमें डुबोनेसे वह खूब गरम होकर सुर्ख़ हो जावेगा; पर भाफ़ जलेगी नहीं। इसलिये इस परीक्षासे जाना गया है, कि बहुतही गरम पदार्थसे यह एकाएक नहीं जल सकती।

दूसरी परीक्षा—दियाके ऊपर एक लोहेका जाल फैला देनेसे वह फ़ौरन् ही बुझ जावेगा; क्योंकि, धातुओंमें उत्ताप हरनेकी शक्ति है।

तीसरी परीक्षा—एक काचके बर्त्तनमें शराब जलाकर उसे जालके ऊपर डालनेसे जो स्पिरिट् नीचे गिरेगा, उसीसे दिया बुझ जावेगा।

डेभीके लालटेनके भीतर एक बत्ती होती है। इसके बाहर नीचेकी तरफ़ काचका आवरण और ऊपरकी तरफ़ तारका जाल होता है। यह दिया मार्सगैसमें रखनेसे कोई दुर्घटना नहीं होती। जब जाल गरम होकर लाल हो जाता है, तब दीपशिखा बाहर निकल कर मार्सगैसको जला सकती है। यह अवस्था

होनेके पहले लोगोंको [illegible]
जाता है।

ओलिफायेण्ट गैस—[illegible]
रसायनज्ञोंने इस गैसका [illegible]

तैयार करने की विधि—[illegible]
तैयारकी जाती है। इसका [illegible]

शराबके साथ [illegible]
अणु जल बाहर निकल जाता है, फिर [illegible]
साथ शराबका जो यौगिक [illegible]
यताले ओलिफायेण्ट गैस और [illegible]
हो जाता है। ओलिफायेण्ट गैसको [illegible]
इकट्ठी कर लेनी चाहिये।

व्यवसा—यह साफ़ वर्णहीन है। इसका [illegible]
०.९७८ है, और यह दीप-शिखासे [illegible]
करके निकासपूर्वक जलती रहती है। तीन [illegible]
साथ मिलनेसे यह अनियम दाहशील हो सकती है। [illegible]
के साथ मिलानेसे इसमेंसे एक [illegible]
पदार्थ पैदा होता है।

एसिटिलिन—अंगार और [illegible]
तपाकर मिलानेसे यह यौगिक [illegible]

कोल गैस—[illegible]
है। पत्थरके कोयलेको [illegible]

होती है। इस प्रकार पत्थरका कोयला विकृत करनेसे जो प
होता है, वह संक्षेपमें प्रायः तीन भागोंमें विभक्त किया गया
जैसे,—कठिन, तरल और भाफ़। रिटर्टमें जो पदार्थ बचता
वह कठिन है; और कोक् नामसे पुकारा जाता है। तरल पदा
में जल, अलकतरा और उसके साथ एमोनिया या उसके यौगि
पाये जाते हैं। भाफ़संबंधी भागको कोल गैस कहते हैं,
बहुतसी भाफ़ोंका मिश्रण विशेष है। कोलगैसमें ओलिफायेल
मार्स, हाइड्रोज़न, कार्बोनिक एक्साइड, सल्फ़्यूरेटेड्, का
निक एन्हाइड्राइड, सायनजिन् और कार्बन डाइसल्फा
आदि भाफ़ें अवस्थित रहती हैं। इन सब भाफ़ोंमें ओलिफाये
गैस और उससे पैदा होनेवाली भाफ़ेंही प्रकाशके लिये विशे
उपयोगी हैं। मार्सगैस, हाइड्रोज़न और कार्बोनिक एक्सा
आदि भाफ़ोंसे ज़िन्दा रहनेका कोई उपाय नहीं है, बाकी भा
फो नाना प्रकारके कौशलसे अलग कर देनेपर कोल गैस क
में आने योग्य हो जाती है। तरल भागसे एमोनिया तैयार हो
है, और अलकतरासे कार्बोनिक एसिड् वा एनिलिन् प्राप्त हो
है। आजकल इसी एनिलिन्से कई तरहके रंग तैयार किये ज
हैं। पर यह विधि विदेशियोंको अच्छी मालूम है।



तो सस्ता मिले वही अमृत! फिर चाहे स्वास्थ्य बने या बिगड़े। खेद!

अभिप्राय यह है कि हमलोगोंने दूध सरीखे अमृत पदार्थको विषवत् बनाकर काममें लाना सीख रक्खा है; और यह आदत हमारी सहज ही में नहीं छूट सकती। इन्हीं सब बातोंसे तंग आकर महात्मा गांधीजीने अपनी पुस्तकमें लिख दिया है कि, दूध, दही और घीका खाना बिलकुल छोड़ देना चाहिये।' परन्तु विचारनेकी बात है कि, इनके बिना संसारकी पोषणताका काम नहीं चल सकता। कोई २ ऐसा भी कहते हैं कि, माँस मछलीके बराबर पोषक और शक्ति-वर्द्धक वस्तु और कोई नहीं है। माना कि मछलीके गुण वैद्यक-ग्रन्थोंमें भी बताये हैं; पर हम दावेके साथ कहते हैं कि, शुद्ध दूधके सामने ये सारी अमानुषिक चीज़ें कोई चीज़ नहीं हैं। जो इस बातको नही माने, वह अनुभव करके देख ले। परन्तु, दूधसे लाभ हमें तभी मिल सकता है, जब हम गो-रक्षाका भी पूरा २ ध्यान रक्खें। गो-रक्षाके बिना हमारी स्वास्थ्योन्नति नहीं हो सकती और न हमारे देशका कल्याण ही हो सकता है।

दूधकी रक्षा।

गोदोहनका काम आमतौर पर हाथसे ही किया जाता है। हाथसे यह काम जितना सुविधाजनक होता है, उतना और तरहसे नहीं होता। सन् १७६२ ई० में, अमेरिकामें एक प्रकारका गोदोहन यंत्र बनाया गया था; परन्तु परीक्षा करने पर उससे

साथ दूध निकालना और कमज़ोर या बीमार होनेपर कसाइ-योंको बेच देना—यह काम हिन्दू कहलानेवाले कसाइयोंके बाबा-ओंका नहीं, तो और किसका है? परमात्मा गौओंके भाग्यसे इन अनर्थकारियोंको सदुबुद्धि प्रदान करें।

इधर, बिना मौत मारनेवाले गूजरों और घोसियोंने दूधको विष बनाकर बेचना आरम्भ कर रक्खा है। बासी दूधपरसे अपने मतलबकी चीज़ (मलाई) बटोरकर उस "नीलेसे पानी" को सस्ते मूल्यमें बेचकर ये लोग धनवान होना चाहते हैं। कम अक़्ल कंजूस ऐसे उन्हें मिल जाते हैं, जो कौड़ियों में इस बासी दूधको लेकर अपने कुनबे भरका स्वास्थ्य बिगाड़ देते हैं। हलवाई महाशयके यहां दूध दही लेने जाइये। आप देखेंगे कि एक मैली—कुचैली कुंडीमें दही जमा हुआ है, ऊपर पानी तैर रहा है और उसमें बीसों मक्खियों, चींटियों और मकोड़ोंका बलि हो रहा है। उसीमेंसे आपको बड़ी ही सफ़ाई दिखाते हुए एक दोनेमें दही रखकर दे दिया जावेगा। यह अपना २ भाग्य है कि, किसीको उस दहीमें मक्खियां आदि कम मिलें, और किसीको ज़्यादा! यही हाल दूधका भी होता है। इधर, घी खानेका शौक़ कीजिये, तो उसमें तेल, चरबी और न जाने क्या २ चीज़ोंकी मिलावट! मालूम होनेपर ब्राह्मणोंका गंगाजीके तटपर होम हो रहा है, यज्ञ हो रहा है, प्रायश्चित्त किये जा रहे हैं और पुरश्चरण हो रहे हैं! बस, बादको वही पहला ढर्रा! सुधार और शुद्धता भाड़में जाय। यहां

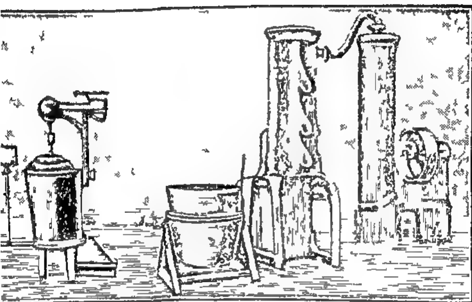
कच्चे दूधका व्यवहार करना अच्छा नहीं होता। परन्तु कोई २ डाक्टरोंका इसमें मतभेद है। कोई कहते हैं कि, औटानेसे दूधके अंश विशेष नष्ट हो जाते हैं; औटा दूध कब्ज़ भी करता है, और कोई कहते हैं, औटाये विना दूधको कदापि व्यवहारमें नहीं लाना चाहिये। जो हो, इतना तो सबको मानना पड़ेगा कि, दूधका व्यवहार अपनी २ प्रकृति और जठराग्निके ऊपर विशेष निर्भर है।

साधारण तौरपर हम दूधका पांच तरहसे व्यवहार करते हैं। (१) दूध, (२) दही, (३) मट्ठा, (४) मक्खन, (५) घी। यदि दूध बहुत देरतक किसी पात्रमें रक्खा रहे, तो उसके ऊपर कुछ तरल-पदार्थ—जिसे मलाई कहते हैं, आपसे आप इकट्ठा हो जाता है। इस मलाईसे मक्खन और घी सहज ही में निकाला जा सकता है। चाहे इस मलाईको यंत्रसे विलोई जाय या लकड़ीकी रुआईसे, पर स्त्रियां सहज हीमें इससे मक्खन निकाल सकती हैं। रुआईकी अपेक्षा किसी दूसरे यंत्रसे मक्खन अधिक और बहुत गाढ़ा निकल सकता है। मक्खन जब निकाल लिया जाय, तब उसे साफ़ बरतनमें तपाकर घी निकालना चाहिये। यह घी, दूधकी सार वस्तु है। इसके व्यवहार और रक्षामें भी विशेष सावधानीकी आवश्यकता है।*

दूध, बहुत देरतक रक्खा रहनेसे बिगड़ जाता है। उस

* दही और मक्खन का वर्णन आगे के निबन्धों में देखिये।

ठीक २ काम नहीं चल सका ; और उसकी अपेक्षा हाथसे ही दूध निकालना सुविधाजनक मालूम हुआ। गोदोहनका काम चाहे हाथसे किया जाय या यंत्रसे—पर बड़ी सावधानी और सफ़ाईके साथ होना चाहिये। कोई २ लोग दूध निकाल चुकते ही उसे पी जाते हैं और कहते हैं कि यह थन-दुहा दूध बड़ा फ़ायदा करता है। निःसंदेह वैद्यकमें भी इसके अनेक गुण लिखे हैं ; पर हमारा कहना है कि, दूधको विना छाने कभी काममें नहीं लाना चाहिये ; क्योंकि दुहते समय बहुत सावधानी रखने और थन धोलेनेपर भी गायके शरीरके बाल, मैल, और मरा मांस आदि दूधके वर्तनमें गिरे विना नहीं रह सकते। अब ख़्याल करना चाहिये कि ऐसा दूध स्वास्थ्यको कितनी हानि पहुंचा सकता है! हां, यदि साफ़ वर्तनका मज़बूत कपड़ेसे मुंह बांधकर उसमें दूध निकाला जाय, तो इन चीज़ोंसे वह बच सकता है और वह थन-दुहा दूध लाभदायक होता है। दूध निकालते समय सबसे पहले यह देखना चाहिये कि, दूध निकालनेका वर्तन भली भांति साफ़ है या नहीं। यदि उसमें कुछ भी मैलापन दीख पड़े, तो उसी समय उसको साफ़ करना और कपड़ेसे ख़ूब पोंछ डालना चाहिये। यदि ऐसा न किया जाय, तो बरतनका मैल सहज ही में दूधके साथ मिलकर दूधको दूषित कर देता है। जब सफ़ाई और सावधानीसे दूध निकाल लिया जाय, तब उसको बिलकुल साफ़ बरतनमें औटानेके लिये चूल्हे पर रखना चाहिये। औटानेसे दूधके सब दोष दूर हो जाते हैं।



गाढ़े दूधको तैयार करनेके सम्पूर्ण यन्त्र।

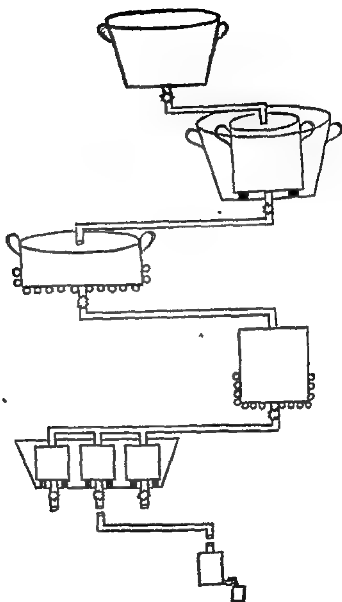
(पृष्ठ १२६)

जाता है और उस गरम रूपमें किसी प्रकारका खट्टा पदार्थ मिलते ही वह तुरन्त जम जाता है।

दूधकी रक्षाके अब तक जितने उपाय निकले हैं, उन सबमें गाढ़े और जमे हुए दूधको तैयार करनेका उपाय ही सबसे अच्छा है। इस उपायको न्यूयार्क शहरके एक निवासीने निकाला था। सन् १८४६ ई० से परीक्षाका काम आरम्भ करके लगातार १०-१२ सालके बाद उन्होंने इस काममें सफलता प्राप्त की थी ; और सन् १८६१ ई० में युद्ध-क्षेत्रके सैनिकोंके लिये जमा हुआ दूध भेजकर उनका बहुत कुछ उपकार किया था। यह जमा हुआ दूध इस तरह तैयार किया जाता है कि, पहले थोड़ी सी चीनीके साथ दूधको औंटाते हैं। जब उसका एक चतुर्थांश वा एक पंचमांश बाक़ी रह जाता है, तब उसे वायु-शून्य टीनके डब्बोंमें बंद कर देते हैं। बस, दूध जमकर तैयार हो जाता है।" आजकल डेनमार्क, आयरलैंड आदि देशोंमें दूध जमानेके बहुतसे कारख़ाने स्थापित हो गये हैं ; परन्तु इस व्यवसायमें स्विट्ज़रलैंड ही सबसे आगे निकला हुआ है। जमा दूध तैयार करनेकी प्रणालीके विषयमें न्यूयार्क—कारनेल विश्व विद्यालयके सदस्य मि० विलार्डने एक अच्छा प्रबन्ध लिखा है। हम उसका साराश पाठकोंके हितार्थ नीचे लिखते हैं :—

मि० विलार्डका कहना है कि कई स्थानोंसे बहुतसा दूध इकट्ठा करके पहले उसे छानना चाहिये और फिर एक बड़े पात्रमें रख देना चाहिये। थोड़ी देरके बाद इस पात्रमेंसे निकाल कर

फिर छानना चाहिये ; और छानकर २० गैलन समा सकनेवाले एक धातु-पात्रमें भर देना चाहिये। फिर यह पात्र, एक गरम जलसे भरे पात्रमें रख कर, अग्निकी सहायतासे उस गरम जलका उत्ताप, फारेन् हिट् थर्मामेटरकी १५० से १७५ डिग्री तक बढ़ाते हुए दूधको गरम करना चाहिये। इसके बाद इस गरम दूधको फिर छानकर चाहे जितने बड़े पात्रमें निकाल लेना चाहिये। जिस पात्रमें यह निकाला जाय, उसका पेंदा तांबेके नलसे जड़ा हुआ होना चाहिये, ताकि नलके द्वारा भाफ़ आकर उत्ताप देती रहे। जब इस पात्रमें दूधका उफनना आरम्भ हो जावे, तब उसमें सर्वोत्तम दानेदार चीनी मिलाना चाहिये। प्रति तीन सेर दूधमें अढ़ाई पाव चीनी मिलाना ठीक होता है। चीनी अच्छी तरह गल जानेके बाद दूधको उस पात्रसे एक वायुशून्य पात्रमें निकाल लेना चाहिये। जमा हुआ दूध तैयार करनेके लिये ये वायुशून्य पात्र खरीदे जाते हैं। इनमें ८०० से १००० मन दूध, एक साथ जमाया जा सकता है। इनके भी पेंदे तांबेके नलसे जकड़े हुए होते हैं। यह पात्र, भाफ़की सहायतासे दूधका जला पदार्थ दूर करके, उसका चतुर्थांश शेष रख देता है। इस कामको करनेमें प्रायः तीन घण्टे लगते हैं। इस प्रकार जब दूध गाढ़ा हो जाय तब उसे ऐसे पात्रोंमें निकाल लेना चाहिये। प्रत्येक पात्रमें आठ २ दस २ मन तक दूध निकाला जा सकता है। पात्रोंमें दूध निकाल लेनेके बाद उन सब पात्रोंको ठंडे जलसे भरे एक बड़े भारी टबमें



दूधको गाढ़ा करना और रक्षाके लायक़ उसके विभाग ब

दूधका सेवन और उससे लाभ।

अब इस बातके बतानेकी ज़रूरत नहीं है कि दूध इस लोकका अमृत है। शारीरिक-शास्त्र, चिकित्सा-शास्त्र, और आरोग्य-शास्त्रका कोई भी ग्रन्थ ऐसा नहीं ; जिसमें इसके गुणोंका गान न किया गया हो। वैद्यक-शास्त्रमें तो इसका बहुत ही स्पष्ट और विस्तृत वर्णन है। काली गाय, सफ़ेद गाय, पीलीगाय, लालगाय, जङ्गलदेशकी गाय, अनूपदेशकी गाय, अन्य प्रकारकी गाय, भैंस, बकरी, भेड़ी, घोड़ी, ऊँटनी, हथनी, स्त्री आदिके दूधका वर्णन वैद्यकमें अच्छी तरह किया गया है और इनके अलग २ गुण बताये हैं। सब गायोंमें काली गायका दूध श्रेष्ठ माना है और धारोष्ण दूधकी ख़ूब तारीफ़ की है। लिखा है कि "गायका धारोष्ण दूध बल बढानेवाला, हलका, ठंडा, अमृतके समान, अग्निदीपक और त्रिदोष नाशक होता है। परन्तु यदि दुहने बाद शीतल हो गया हो, तो बिना गरम किये कभी न पीना चाहिये। * भैंसका धारोष्ण दूध पीना अच्छा नहीं माना है।

दूधसे रोगोंकी चिकित्सा—दुग्ध-चिकित्सा पर आज तक कई पुस्तकें निकल चुकी हैं। सभीमें लेखकों, आविष्कारकों और खोज करनेवालोंने अपने २ अनुभवके अनुसार दूधके गुणोंका वर्णन किया है। [illegible] पहलेसे ही यह बात लिखी है [illegible], जो दूधके सेवनसे

[illegible]प्रकाश।

चाहिये। पात्रमें भरे हुए दूधकी ऊंचाई और टबके जलकी ऊंचाई बराबर होनी चाहिए। ठंडे जलके बीचमें दूधके पात्रोंको रखनेसे दूध हिलता रहेगा, और धीरे २ उसका ताप कम होता जावेगा। इस प्रकार जब दूधका ताप ७० डिग्री रह जावे, तब उसे छोटे २ बरतनोंमें निकाल लेना चाहिए। इन छोटे बरतनोंमें दूधको निकालकर फिर आध २ सेरके छोटे २ टीनके डिब्बे दूधसे भर लेना चाहिये। परन्तु इस क्रियाके समय विशेष सावधानी रखनेकी आवश्यकता है। गाढ़े दूधका ताप और डब्बोंका ताप बराबर करनेके लिये डब्बोंको कुछ गरम कर लेना चाहिये। दूध भरते समय इन डिब्बोंमें बाहरी हवा लगना अच्छा नहीं है। हवासे बचानेके लिये इनको किसी बंद मकानमें रखकर दूध भरनेका काम छेड़ना चाहिये और जल्दी २ इनके मुंह बन्द कर देना चाहिये। इस ढंगसे भरा हुआ दूध बन्द डब्बोंमें बहुत दिनों तक नहीं बिगड़ता, परन्तु डिब्बे खोलनेसे बिगड़ जाता है। व्यवसायी लोग इस दूधको ताज़े दूधके समान उपकारी और गुण-सम्पन्न बताते हैं; पर वास्तवमें यह बात नहीं है। क्योंकि, बार २ छाननेसे दूधका बहुतसा मक्खन, मिठास और असली तत्व पहले ही नष्ट हो जाते हैं। हमारे ख्यालसे ऐसी दशामें यह दूध विशेष उपकारी नहीं हो सकता। हां, चिकित्सकोंका मत है कि, रोगी और बच्चोंको अधिक जल मिला हुआ दूध पिलानेकी अपेक्षा, यह दूध पिलाना श्रेयस्कर है। इससे रोगीकी जठराग्नि प्रदीप्त होती है।

ऐसी दशामें बालक "ऊपरके दूध" से ही पलता और पुष्ट होता है। परन्तु, यही समझ लेना कि—दूध केवल बालकोंके लिये ही है, मूर्खता है। अनुभवसे सिद्ध हुआ है कि जिन लोगोंके भोजनमें दूधका अधिक भाग रहता है, वे बल-सम्पन्न और रोग-रहित होते हैं और उनकी आयु भी अधिक होती है। हम देखते हैं कि ऊंटनी तथा बकरीके दूधका भोजन पाकर रहनेवाले कितने बलिष्ट और नीरोग होते हैं। इससे समझना चाहिये कि दूध प्राणी मात्रके लिये और छोटे-बड़ोंके लिये बहुत ही लाभ-दायक चीज़ है।

यूरिक एसिड ( Uric acid ) एक प्रकारका विषैला तत्त्व होता है। जिन लोगोंके शरीरमें यह अधिक सञ्चित रहता है उसके मूत्रमें बहुत बुरी दुर्गन्ध आती है। इस दुर्गन्धका जन्म-दाता यही यूरिक एसिड है। परन्तु दूध इस विषैले तत्त्वको निर्मूल करनेमें वज्रका काम करता है। एक तो स्वयम् दूधमें यूरिक एसिड नहीं होता, दूसरे इसमें रोगोंको नाश करनेवाले कई उत्तमोत्तम तत्त्वोंका समावेश है, तीसरे यह बहुत ही सह- [illegible] हलकी वस्तु है। इसीलिये दूध पीनेवाले [illegible] न्ध नहीं होती। यदि 'यूरिक एसिड' विष-

[illegible] यह बड़ी भारी भूल है। इस भूलसे सैकड़ों बच्चे अकाल [illegible] है।

[illegible] चाहिये। माताका दूध परखनेकी [illegible] डा सा दूध स्याही पर निचोड़ कर [illegible] और निर्विकार रहा, तब तो चींटी

अच्छा न हो जाय। जीर्णज्वर, मानसिक रोग, उन्माद, शोष, मूर्च्छा, भ्रम, संग्रहणी, पीलिया, दाह, प्यास, हृदयरोग, शूल, उदावर्त्त, गोला, वस्तिरोग, ववासीर, रक्तपित्त, अतिसार, योनि-रोग, परिश्रम, ग्लानि, गर्भस्राव, निर्वलता, मंदाग्नि, थकाई, मद, श्वास, कांस, सुज़ाक, वातपित्त, रक्तविकार आदि रोगोंमें दूध बहुत ही लाभदायक माना है। पाश्चात्य देशोंमें भी आज दूधकी चिकित्सासे कई असाध्य रोगी अच्छे किये जाते हैं। एक विदुषी अङ्गरेज़-महिला श्रीमती 'एला हीलर विलकोक्स' का कहना है कि हृदयसे सम्बन्ध रखनेवाले रोगों (Organic heart trouble) को छोड़कर कोई भी ऐसा शारीरिक रोग नहीं, जो दूधके सेवनसे शर्तिया न मिट जाय। यहां तक कि राजयक्ष्मा और विद्रधि ( Cancer ) जैसे भयंकर रोग भी दूधकी चिकित्सासे दूर हो जाते हैं।"

दूध बहुत ही सुगमताके साथ पचनेवाली और शरीरमें शीघ्र पुष्टि लानेवाली चीज़ है। इसीलिये जिन बालकोंकी पाचन-शक्ति यथेष्ट बलवती नहीं होती, उन्हें दूधका भोजन दिया जाता है। कहना नहीं होगा कि ऐसे कमज़ोर बच्चोंको ऊपरका दूध बहुत फ़ायदा करता है। विशेषकर- जिन माताओंके स्तनोंका दूध ख़राब होता है, * थोड़ा होता है, सूख जाता है—

* कई स्त्रियोंके दूधमें ऐसी ख़राबी होती है कि बच्चा नीरोग पैदा होनेपर भी उसको पीकर रोगी बन जाता है और अन्तमें माताकी गोद खाली कर देता है। जब माताके ऐसे ख़राब दूधसे बालक रोगी होकर दिन दिन सूखने लगता है, तो अन्य प्रकारकी औषधियां और भाड़ा—फूंकी तो की जाती है, पर असली कारण पर

कोई २ लोग दूध और नीबूका संयोग हानिकारक बताते हैं ; पर यह बात बिलकुल अज्ञानसे भरी है। हां इतना अवश्य है कि, दूधमें नीबूका रस इतना अधिक नहीं मिलाना चाहिये जिससे वह फट जाय। बल्कि ५ या ७ बूंद मिला देना काफ़ी होगा। ऐसा दूध स्वादिष्ट भी हो जायगा और रोगी उसको बड़े चावसे पी भी लेगा। यदि नीबूका रस मिला दूध किसीको मुआफ़िक़ नहीं आवे, तो ज़बरदस्ती करनेकी ज़रूरत नहीं है, वैसी हालतमें उसे दूधके बदले थोड़ी २ उत्तम छांछ ( मट्ठा ) पिलाना चाहिये इससे शरीरका संचित मल भी निकल जायगा और बीमारी भी।

दूधकी चिकित्सामें रोगीको दूध हीका भोजन देना ठीक होगा। अन्नादि नहीं। * हम ऊपर कह चुके हैं कि दूधमें शरीरको धारण करने और पुष्ट करनेके सभी आवश्यक तत्त्व मौजूद हैं। ऐसी हालतमें अन्नादिका भोजन न देनेसे कोई हानि होनेकी संभावना नहीं है। इस बातको भी याद रखना चाहिये कि दूसरी खूराकके साथ अधिक परिमाणमें दूधका पीना अच्छा नहीं है। इससे दूधके असली पोषक तत्त्व घट बढ़ जाते हैं और दूधके अतिरिक्त दूसरी खूराकमें यदि नाइट्रोजन और कारबन अधिक होते हैं, तो वे शरीरकी नसोंमें भरकर आवश्यकतासे अधिक भार रूप हो जाते हैं।

* अमेरिकामें दूधके सेवनसे रोगोंको [illegible] एक दूध पिला २ कर ही अच्छा करते हैं [illegible]
निकल जाय अथवा अरुचि पैदा

वाले रोगी भी दूधका दीर्घकाल तक सेवन करते रहें, तो निःसन्देह उनके शरीरसे संचित विष निकल सकता है और गठिया आदि दूसरी बीमारियोंसे भी वे मुक्त हो सकते हैं।

सबसे पहली बात तो यह है कि स्वास्थ्य-रक्षाके जो २ नियम बताये गये हैं, उनका पूरे तौर पर पालन होना चाहिये। इसके बाद दूध-सेवनके नियम, देशकाल पात्र और रोगीकी अवस्थासे भलीभांति परिचित होनेकी आवश्यकता है। रोगीको जब नियमानुसार दूध देनेपर भी दूध उल्टी द्वारा बाहर निकल जाय, तो समझना चाहिये कि उसके पेटमें अम्लतत्त्व ( Acid ) नहीं है। ऐसी हालतमें सबसे पहले रोगीके पेटमें अम्ल तत्त्व उत्पन्न करना होगा। नीबूका रस पी लेने अथवा एकाध नारंगी खा लेनेसे अम्लतत्त्वकी कमी दूर हो जाती है। अम्लतत्त्वके अभावकी यह पहचान है कि, दूधपर रुचि नहीं होती अथवा दूध पेटमें पहुंचकर वायु उत्पन्न करता और 'गुड़ गुड़' बोलता है। ऐसी हालतमें जब तक दूधपर रुचि न हो जाय, नीबूका रस बराबर पीते रहना चाहिये। मगर इस बातका भी ख़याल रहे कि बिना ज़रूरत नीबूका रस पीना अच्छा नहीं होता है।

---

वह दूधमेंसे रेंगकर सही सलामत निकल आवेगी, और यदि दूधमें किसी प्रकारकी खराबी हुई तो चींटी उसीमें मर जायगी। इस परीक्षासे माताका दूध विकार युक्त साबित हो, तो बालकको गाय या बकरीका दूध पिलाना चाहिए और माताकी चिकित्सा किसी अच्छे चिकित्सकसे करानी चाहिये। उस समय बालकको भूलकर भी माताका दूध पिलाना मृत्युको निमन्त्रण देना है।

कोई २ लोग दूध और नीबूका [illegible] बनाते हैं। पर यह बात बिलकुल अज्ञानसे भरी है। [illegible] आवश्यक है कि, दूधमें नीबूका रस इतना अधिक नहीं मिलाना चाहिये जिससे वह फट जाय। बल्कि ५ या ७ बूंद [illegible] काफी होगा। ऐसा दूध स्वादिष्ट भी हो जायगा और रोगी [illegible] बड़े चावसे पी भी लेगा। यदि नीबूका रस मिला दूध रोगीको मुआफ़िक़ नहीं आवे, तो ज़बरदस्ती करनेकी ज़रूरत नहीं है, वैसी हालतमें उसे दूधके बदले थोड़ी २ [illegible] छाछ (मट्ठा) पिलाना चाहिये इससे शरीरका [illegible] निकल जायगा। और बीमारी भी।

दूधकी चिकित्सामें रोगीको दूध [illegible] होगा। अन्नादि नहीं।* हम ऊपर कह चुके हैं कि, दूधमें शरीरको धारण करने और पुष्ट करनेके सभी आवश्यक, [illegible] मौजूद हैं। ऐसी हालतमें अन्नादिका भोजन न देनेसे कोई हानि होनेकी संभावना नहीं है। इस बातको भी याद रखना चाहिये कि दूसरी खूराकके साथ अधिक परिमाणमें दूधका पीना अच्छा नहीं है। इससे दूधके असली पोषक [illegible] नष्ट हो जाते हैं और दूधके अतिरिक्त दूसरी खूराकमें यदि नाइट्रोजन और कारबन अधिक होते हैं, तो वे शरीरकी नसोंमें जाकर आवश्यकतासे अधिक भार रूप हो जाते हैं।

* अमेरिकामें दूधकी सेवनसे रोगोंको मिटानेकी एक प्रथा है। [illegible] दूध पिला २ कर ही अच्छा करते हैं। [illegible] रोगीको दूध न [illegible] निकल जाय अथवा अरुचि पैदा कर दे, तथापि [illegible] दूध [illegible]

दूधकी चिकित्सा आरम्भ करनेके पहले २—३ निराहार उपवास कर लेना ठीक होगा। उपवासके दिनोंमें पानी पीनेकी रोक टोक नहीं है; नित्य जितना पानी पिया जाय, पीलेना चाहिये। पर, यह बात भी भूलनेकी नहीं है कि अपनी शक्तिके अनुसार उपवास करनेमें ही लाभ है, कष्टके साथ करनेमें नहीं। उपवासके बाद, प्रसन्नचित्त और विश्वास पूर्वक दूधका इलाज शुरू करना चाहिये। विश्वास और मनको सदा प्रसन्न रखना, आरोग्यताके लक्षण हैं और रोगको निर्मूल करते हैं। एक अनुभवी डाक्टरका तो यहां तक कहना है कि मन प्रसन्न रखने, हँसने, बोलने और सदा आनन्दित रहनेसे कोई बीमारी पास नहीं आती और जो रोग शरीरमें होते हैं, सब निकल जाते हैं। बात बहुत सच्ची है। क्योंकि, शरीर और आत्माका घनिष्ट सम्बन्ध है।

उपवासके बाद रोगीको थोड़ा २ दूध देना आरम्भ कर पीछे दूधकी मात्रा बढ़ानी चाहिये। एकदम अधिक दूध पिला देना अच्छा नहीं। किस मनुष्यको प्रतिदिन कितना दूध पीना चाहिये, यह बताना ज़रा कठिन होगा, क्योंकि, मनुष्योंकी प्रकृति और बल एक दूसरेके समान नहीं होते। हां यह कह देना सबके लिये लाभदायक होगा कि अपनी २ जठराग्निके अनुसार नीरोगी मनुष्यको अधिक और रोगीको कम दूध देना चाहिये। दूधको पानीकी तरह पीलेना किसी हालतमें अच्छा नहीं होता, उसके घूंटको थोड़ी देर मुंहमें रखकर मुंहकी रालके साथमिलाकर पेटमें

उतारना चाहिये। इस बातको प्रायः सब जानते हैं कि भोजनकी कोई भी चीज़ दाँतों द्वारा चबाकर जितनी भी मुंहकी रालके साथ मिलाई जायगी, उतनी ही वह शरीरके लिए लाभदायक होगी। यही बात दूध पीनेकी है। शुद्ध दूधके साथ शुद्ध राल * का जितना संयोग होगा, उतना ही अच्छा।

दूध-सेवनके दिनोंमें यदि विश्राम करनेकी इच्छा हो, तो इच्छानुसार विश्राम करना चाहिये। विश्रामसे दूधका प्रभाव शरीरमें अच्छा पड़ेगा और शुद्ध रक्त पैदा होकर शरीर बलवान बनेगा। इस प्रकार प्रत्येक मनुष्यको दूधका सेवन तबतक करना चाहिये जब तक कि उसकी सारी बीमारी समूल नष्ट न हो जाय। अभिप्राय यह कि जबतक पेटकी सब गड़बड़ न मिट जाय, शरीरका दुबलापन दूर होकर अंग प्रत्यंग पुष्ट न हो जाय, शरीरमें रक्तके बढ़नेसे मुखपर सुर्खी न आ जाय, शरीरका रंग गोरा, स्वच्छ और तेज युक्त न हो जाय, तबतक दूधका सेवन जारी रखना परम आवश्यक है।

---

* शुद्ध राल तभी हो सकती है, जब दाँतों और मुंहको साफ रक्खा जावे। इस लिये दातुन करके जीभका मैल उतार डालना नित्यका नेम होना चाहिये। अमेरिकावालोंने खराब दाँतोंको सब रोगोंका मूल कारण माना है। इनका कहना है कि यदि बालपनेसे ही दाँतोंकी सफाई पर ध्यान न दिया जाय, तो दाँतोंमें कीड़े लग जाते हैं, कीड़ोंके खाये दाँतोंसे भोजन अच्छी तरह नहीं चबाया जाता, चबाकर नहीं खानेसे ठीक २ पाचन नहीं होता और ठीक २ पाचन नहीं होनेसे मनुष्य सुस्थ नहीं रह सकता। इस प्रकार देशवासियोंके रोग ग्रस्त हो जानेसे देशका

दूधकी चिकित्सा आरम्भ करनेके पहले २–३ निराहार उपवास कर लेना ठीक होगा। उपवासके दिनोंमें पानी पीनेकी रोक टोक नहीं है; नित्य जितना पानी पिया जाय, पीलेना चाहिये। पर, यह बात भी भूलनेकी नहीं है कि अपनी शक्तिके अनुसार उपवास करनेमें ही लाभ है, कष्टके साथ करनेमें नहीं। उपवासके बाद, प्रसन्नचित्त और विश्वास पूर्वक दूधका इलाज शुरू करना चाहिये। विश्वास और मनको सदा प्रसन्न रखना, आरोग्यताके लक्षण हैं और रोगको निर्मूल करते हैं। एक अनुभवी डाक्टरका तो यहां तक कहना है कि मन प्रसन्न रखने, हँसने, बोलने और सदा आनन्दित रहनेसे कोई बीमारी पास नहीं आती और जो रोग शरीरमें होते हैं, सब निकल जाते हैं। बात बहुत सच्ची है। क्योंकि, शरीर और आत्माका घनिष्ठ सम्बन्ध है।

उपवासके बाद रोगीको थोड़ा २ दूध देना आरम्भ कर पीछे दूधकी मात्रा बढ़ानी चाहिये। एकदम अधिक दूध पिला देना अच्छा नहीं। किस मनुष्यको प्रतिदिन कितना दूध पीना चाहिये, यह बताना ज़रा कठिन होगा, क्योंकि, मनुष्योंकी प्रकृति और बल एक दूसरेके समान नहीं होते। हां यह कह देना सबके लिये लाभदायक होगा कि अपनी २ जठराग्निके अनुसार नीरोगी मनुष्यको अधिक और रोगीको कम दूध देना चाहिये। दूधको पानीकी तरह पीलेना किसी हालतमें अच्छा नहीं होता, उसके घूंटको थोड़ी देर मुंहमें रखकर मुंहकी रालके साथमिलाकर पेटमें

उतारना चाहिये। इस बातको प्रायः सब जानते हैं कि भोजनकी कोई भी चीज़ दाँतों द्वारा चबाकर जितनी भी मुंहकी रालके साथ मिलाई जायगी, उतनी ही वह शरीरके लिए लाभदायक होगी। यही बात दूध पीनेकी है। शुद्ध दूधके साथ शुद्ध राल * का जितना संयोग होगा, उतना ही अच्छा।

दूध-सेवनके दिनोंमें यदि विश्राम करनेकी इच्छा हो, तो इच्छानुसार विश्राम करना चाहिये। विश्रामसे दूधका प्रभाव शरीरमें अच्छा पड़ेगा और शुद्ध रक्त पैदा होकर शरीर बलवान बनेगा। इस प्रकार प्रत्येक मनुष्यको दूधका सेवन तबतक करना चाहिये जब तक कि उसकी सारी बीमारी समूल नष्ट न हो जाय। अभिप्राय यह कि जबतक पेटकी सब गड़बड़ न मिट जाय, शरीरका दुबलापन दूर होकर अंग प्रत्यग पुष्ट न हो जाय, शरीरमें रक्तके बढ़नेसे मुखपर सुर्खी न आ जाय, शरीरका रंग गोरा, स्वच्छ और तेज युक्त न हो जाय, तबतक दूधका सेवन जारी रखना परम आवश्यक है।

---

* शुद्ध राल तभी हो सकती है, जब दाँतों और मुंहको साफ रक्खा जावे। इस लिये दातुन करके जीभका मैल उतार डालना नित्यका नेम होना चाहिये। अमेरिकावालोंने खराब दाँतोंको सब रोगोंका मूल कारण माना है। इनका कहना है कि यदि बालपनेसे ही दाँतोंकी सफाई पर ध्यान न दिया जाय, तो दाँतोंमें कीड़े लग जाते हैं, कीड़ोंके खाये दाँतोंसे भोजन अच्छी तरह नहीं चबाया जाता, चबाकर नहीं खानेसे ठीक २ पाचन नहीं होता और ठीक २ पाचन नहीं होनेसे मनुष्य सुस्थ नहीं रह सकता। इस प्रकार देशवासियोंके रोग ग्रस्त हो जानेसे देशका



१० 

रोगको निर्मूल कर पाचन-शक्तिको बढ़ाना दूधका मुख्य काम है; पर यह काम ज़रा समय लेता है। जब दूधके सेवनसे पाचन-शक्ति दुरुस्त और बलवती हो जाती है, तब शरीरका वज़न एकदम बढ़ने लगता है। यहां तक देखा गया है कि ऐसा वज़न आध सेरसे लगाकर ६ सेर तक नित्य बढ़ा है। कई लोग शंका करते हैं कि ऐसा वज़न काम लायक़ होगा या नहीं। शंकामें एक बात विचारनेकी है। वह यह है कि अधिक दूधके सेवनसे शीघ्रताके साथ पुष्ट किये गए शरीरके स्नायु एकदमसे दृढ़ हो जाना संभव नहीं है। पर, धीरे २ बढ़ाया हुआ वज़न बेशक चिरस्थायी होता है, मगर साथ ही इस बातको भी नहीं भूलना चाहिये कि आरोग्य रक्षाके जो २ नियम बताये गये हैं, उनका बराबर पालन होता रहे।

आरम्भमें यदि दूधके सेवनसे फ़ायदा कम मालूम पड़े, तो निराश नहीं होना चाहिये। भला ख़याल करनेकी बात है कि पुरानी बीमारी थोड़े दिनोंमें कैसे चली जायगी! उसके लिये तो कुछ समय चाहिये। रही दूधकी बात, सो दूधका सेवन

---

काम उत्तम रूपसे नहीं होता। प्रजाके अस्वस्थ होनेसे अन्तमें स्टेट और राज्यको हानि पहुंचेगी। अतएव प्रजाको आरोग्य रखने और उसका दारिद्र दूर करनेके लिये व्यवस्था करना स्टेटका कर्तव्य और स्वार्थ है।

इन्हीं सब विचारोंसे अमेरिकामें दांतोंकी रक्षाका पूरा २ ध्यान रक्खा जाता है। स्कूलोंमें विद्यार्थियोंको लिखाने पढ़ानेके साथ इसकी भी शिक्षा दी जाती है। डा० फरसीथने अपने मजदूरी पेशेसे कमाये हुये १ करोड़ २० लाख रुपये अमीरोंके दांतोंकी

यदि श्रद्धा और आग्रहके साथ जारी रक्खा जायगा, तो शरीर चंगा हुए बिना कभी नहीं रह सकता। चाहे शरीर कितना ही दुर्बल हो गया हो—हड्डी हड्डी दीखने लगी हों—आंखें कोठरमें चली गई हों; पर दूधके सेवनमें वह शक्ति है, जो एकबार गये हुए स्वास्थ्य को शर्तिया पीछा लौटा लाती है। अर्थात्, मनुष्य आरोग्य प्राप्त कर सुखी हुए बिना कभी नहीं रहता। आरोग्य-सम्बन्धी ज्ञानका प्रचार करनेवाले मि० मेकफेडनका कहना है कि "शुद्ध मन और आग्रहके साथ दूधका सेवन करनेसे सदा लाभ ही होगा, नुक़सान नहीं।" यह बात सोलहो आने सत्य है।

*उपयोगी सूचनाएँ*

दूधका सेवन करते समय कई बुरे लक्षण दिखाई देते हैं; पर उनसे डरना नहीं चाहिये। किसी २ का पेट दूध पीनेसे तन जाता है; और, एक घूंट दूध पीनेकी भी गुंजायश नहीं जान पड़ती। इसका कारण यह है कि दूधका जलीय भाग पेटमें

---

चिकित्साके लिये दान कर दिये हैं। इस रकमसे बोस्टननगरमें एक उत्कृष्ट चिकित्सालय स्थापित हुआ है, जिसमें दाँतों और मुँहके समस्त रोगोंकी चिकित्सा होती है। प्रतिदिन इसमें और इसके अधीन चिकित्सालयोंमें सैकड़ों रोगियोंकी चिकित्सा की जाती है, विशेषकर बच्चोंका अधिक इलाज होता है और वे सब शहरमें इलाज कराने या दाँतोंको स्वच्छ रखनेके लिये मजबूर किये जाते हैं। इससे उस देशके स्वास्थ्यको बड़ा लाभ पहुंचा है। अमेरिकामें कोई ४५ हजार दाँतोंके डाक्टर हैं। डा० असल्नारका कहना है कि मादक द्रव्य मनुष्यका उतना सर्वनाश

रोगको निर्मूल कर पाचन-शक्तिको बढ़ाना दूधका मुख्य काम है ; पर यह काम ज़रा समय लेता है। जब दूधके सेवन से पाचन-शक्ति दुरुस्त और बलवती हो जाती है, तब शरीरका वज़न एकदम बढ़ने लगता है। यहां तक देखा गया है कि ऐसा वज़न आध सेरसे लगाकर ६ सेर तक नित्य बढ़ा है। कई लोग शंका करते हैं कि ऐसा वज़न काम लायक़ होगा या नहीं। शंकामें एक बात विचारनेकी है। वह यह है कि अधिक दूधके सेवनसे शीघ्रताके साथ पुष्ट किये गए शरीरके स्नायु एकदमसे दृढ़ हो जाना संभव नहीं है। पर, धीरे २ बढ़ाया हुआ वज़न बेशक चिरस्थायी होता है, मगर साथ ही इस बातको भी नहीं भूलना चाहिये कि आरोग्य रक्षाके जो २ नियम बताये गये हैं, उनका बराबर पालन होता रहे।

आरम्भमें यदि दूधके सेवनसे फ़ायदा कम मालूम पड़े, तो निराश नहीं होना चाहिये। भला ख़याल करनेकी बात है कि पुरानी बीमारी थोड़े दिनोंमें कैसे चली जायगी! उसके लिये तो कुछ समय चाहिये। रही दूधकी बात, सो दूधका सेवन

---

काम उत्तम रूपसे नहीं होता। प्रजाके अस्वस्थ हो जानेसे अन्तमें स्टेट और राज्यको हानि पहुंचेगी। अतएव प्रजाको आरोग्य रखने और उसका दारिद्र दूर करनेके लिये व्यवस्था करना स्टेटका कर्त्तव्य और स्वार्थ है।

इन्हीं सब विचारोंसे अमेरिकामें दांतोंकी रक्षाका पूरा २ ध्यान रक्खा जाता है। स्कूलोंमें विद्यार्थियोंको लिखाने पढ़ानेके साथ इसकी भी शिक्षा दी जाती है। डा० फरसीथने अपने मजदूरी पेशेसे कमाये हुये १ करोड़ ७० लाख रुपये बच्चोंके दांतोंकी

पीसकर उसको दो आने या चार आने भर मात्रा, रात्रिको सोते समय कभी २ खा लेनी चाहिये। इससे प्रकृत रीतिसे होने-वाला मलोत्सर्ग अपने आप ही हो जायगा।

यदि किसीको दूधके सेवनसे आरम्भमें दस्त होने लगें, तो अपनी शक्तिके अनुकूल गरम जल, क़ब्ज़ दूर करनेवाले यंत्रसे भीतर पहुंचाकर मोटी आंतोंमें भरा हुआ मल धो डालना चाहिये। इतने पर भी यदि दस्त न रुकें, तो दूधका सेवन, जब तक दस्त बन्द न हो जायँ—बन्द रखना चाहिये।

इस बातका हमेशा ख़याल रहे कि, दूधके तीन चार प्याले एकदम सपाटेके साथ पीना कभी अच्छा नहीं होता। ऐसा करनेसे पेट रबरकी थैलीकी तरह फूल जाता है। इसलिये पहले पीये हुए दूधके जलीय भागको जब पेट अच्छी तरह चूसले तब दूसरी बारका प्याला पीना चाहिये। पीते समय प्रत्येक घूंट मुहमें थोड़ी देर रखकर धीरे २ दांतोंसे चबानी चाहिये और फिर स्वाद लेकर पेटमें उतारनी चाहिये। एक अनुभवी डाक्टरका कहना है कि, दूध पानीकी तरह * पीनेवाली वस्तु नहीं है, इसके घूंटको अन्नका एक ग्रास समझकर दांतोंसे ख़ूब

* अधिकांश लोग पानीको खड़े २ ही सपाटेके साथ पी लेते हैं और मुहकी भीतरका स्पर्श भी नहीं होने देते। यह ढंग अच्छा नहीं है। जहांतक बन पड़े, पानीको भी थोड़ा २ और चूस २ कर पीना चाहिये। जैसे चाय थोड़ी २ चूसकर पी जाती है, वैसे ही ओठोंके द्वारा जलको चूस २ कर पीना बहुत अच्छा होता है। अधिक जलको एक साथ पीलेना कोई बहादुरीका

जाकर कुछ भारीपन लाता है। थोड़ी देरमें जब वह भाग ज्यों २ शरीरके भीतर बहनेवाले रक्तमें मिलने लगेगा, त्यों २ पेटका अफरापन दूर होता जायगा। यदि वास्तवमें क़ब्ज़ ही जान पड़े,तो सबसे उत्तम उपाय यह है कि दूधका परिमाण बढ़ा देना चाहिये। इससे मोटी आंतें धुल जायँगी और थोड़े समयके बाद क़ब्ज़ जाता रहेगा। जो दूधका परिमाण नहीं बढ़ा सकते हों, उन्हें अंजीर या भुने हुए गेहूं खाने चाहियें अथवा काली मुनका खानी चाहिये। इतने पर भी यदि क़ब्ज़ न मिटे, तो दूधके साथ कभी २ थोड़े सनके बीज खा लिये जायँ ; पर दिन भरमें एक चमचेसे अधिक सनके बीज कभी न खाने चाहियें।

यदि क़ब्ज़ दूर करनेके यंत्रसे पानी भीतर पहुंचानेकी ज़रूरत पड़े, तो दो या तीन सेरसे अधिक पानी न लेना चाहिये। जुलाबकी कोई दवा लेनेकी ज़रूरत नहीं। यदि ज़रूरत ही समझी जाय, तो एक भाग सनाय और दो भाग मुलहठी ख़ूब बारीक

---

नहीं करते जितना खराब दांत करते हैं। अन्न रस लगते रहनेसे दांतोंके ऊपरका एनेमिल क्षय हो जाता है। उस क्षय स्थानमें भोजनके छोटे २ टुकड़े फंस जाते हैं और सड़कर एक प्रकारका विष उत्पन्न करते हैं। उसी विषमें जीव उत्पन्न होकर दांतोंकी जड़को खा डालते हैं और भीतर पहुंच जाते हैं, जिससे बहुत दुःख होता है। बस, इसीको कीड़ा लगना ( baried ) कहते हैं। यह विष दांत हीको नहीं किन्तु और भागोंको भी हानि पहुंचाता है। सबसे बड़ी हानि तो यह है कि यह पेटमें पहुंचकर अन्न पचानेकी शक्तिको कमकर देता है, जिससे शरीर रोगी होकर अन्तमें नाशको प्राप्त हो जाता है।

खाकर जीवन विताना चाहिये। जो ऐसा करते हैं, फिर वे कभी बीमार नहीं होते।

अब केवल गायके दूधके दो चार चुटकले सुन लीजिये।

जिस मनुष्यकी आंखोंमें जलन रहती हो, वह यदि कपड़ेकी कई तह गायके दूधमें तर करके आंखोंपर रक्खे और ऊपरसे फिटकरी पीसकर बुरक दे, तो ४–५ रोज़में आंखोंकी जलन कम हो जायगी और ८–१० रोज़में बिलकुल जाती रहेगी।

जिस मनुष्यको हिचकीका रोग हो, उसे गायका दूध औटाकर गरम २ पिलाया जाय, तो हिचकी आराम हो जाती है।

गायके गरम दूधमें पिसी हुई मिश्री और काली मिर्च मिलाकर पीनेसे ज़ुकाममें बहुत लाभ होता है।

गायके दूधमें बादामकी खीर पकाकर ३–४ दिन खानेसे आधासीसी रोग (आधे सिरका दर्द) आराम हो जाता है।

यदि रक्तकी गरमीसे सिरमें दर्द हो, तो गायके दूधमें रुईका मोटा फाहा भिगोकर सिरपर रखने और उसे बराबर दूधसे तर करते रहनेसे सिर दर्दमें बड़ा फ़ायदा होता है, मगर सन्ध्या समय सिरको धोकर गायका मक्खन मलना ज़रूरी है।

यदि किसीको धतूरेका विष चढ़ा हो, तो गायके दूधमें थोड़ी चीनी मिलाकर पीनेसे लाभ होता है।*

---

* ऐसा दूध बल वीर्य पुरुषार्थ और शुद्ध रक्तको बढ़ानेमें भी बड़ा काम देता है। [illegible] दूधमें घी, मधु और मिश्री मिलाकर पीते हैं, इससे [illegible] यौवनका सुख वे आनन्दपूर्वक लूटते हैं। दूधमें

चबाना चाहिये। ऐसा दूध शरीरका इतना पोषण करता है कि उसका वर्णन करना कठिन है।" बात बहुत कुछ सत्य है। पेटमें पहुंचकर जब दूधका जल सूख जाता है, तब वह पेटके रसके साथ मिलकर पनीरके दहीके सदृश हो जाता है। दूधके प्रत्येक परमाणु पेटके रसके साथ अच्छी तरह मिल जायँ इसीलिये उसको थोड़ा २ घूंट २ करके पीनेकी ज़रूरत है। यदि थोड़ा २ करके दूध नहीं पिया जायगा, तो पेटमें पहुंचकर सबका मट्ठ बँध जायगा और पचनेमें बहुत देर लगेगी।

जिन दिनोंमें दूधका सेवन जारी हो उन दिनोंमें दूधके सिवाय खांड, मिठाई, शहद, गुड़, फल, बादाम, किसी तरहका पदार्थ या दूधके साथ मिली कोई दवा आदि कदापि नहीं खानी चाहिए। यदि दूधका सर्वोत्तम लाभ उठाना है, तो इनके सिवा चाय, कहवा, कोको, पान-सुपारी और तम्बाखू आदिको भी पास नहीं फटकने देना चाहिये। इस पथ्यसे दूधका सेवन लाभदायक होगा और बीमारी शीघ्र ही दूर हो जायगी।

इस प्रकार दूधके सेवन करनेसे जब पूरी आरोग्यता प्राप्त हो जावे, तब अच्छे २ मौसमी फल, मेवे और बहुत हलका अन्न

---

हानिके बदले लाभ कुछ नहीं होता, वरन् पेटके पाचनीय स्थानको एकदम इतना बोझ मिल जाता है कि नियमानुसार काम करना उसकी शक्तिके बाहर हो जाता है और अन्तमें उसको मजबूर होकर जवाब देदेना पड़ता है। बस, इसीको जनता बदहज़मी कहते हैं। इस बदहज़मीसे पेट फूल जाता और पाचन क्रियाका काम मन्द हो जाता है। इसलिये स्वास्थ्य-रक्षाके नियमानुसार जलको काममें लाना चाहिये।

खाकर जीवन बिताना चाहिये। जो ऐसा करते हैं, फिर वे कभी बीमार नहीं होते।

अब केवल गायके दूधके दो चार चुटकले सुन लीजिये।

जिस मनुष्यकी आंखोंमें जलन रहती हो, वह यदि कपड़ेकी कई तह गायके दूधमें तर करके आंखोंपर रखे और ऊपरसे फिटकरी पीसकर बुरक दे, तो ४–५ रोज़में आंखोंकी जलन कम हो जायगी और ८–१० रोज़में बिलकुल जाती रहेगी।

जिस मनुष्यको हिचकीका रोग हो, उसे गायका दूध औटाकर गरम २ पिलाया जाय, तो हिचकी आराम हो जाती है।

गायके गरम दूधमें पिसी हुई मिश्री और काली मिर्च मिलाकर पीनेसे ज़ुकाममें बहुत लाभ होता है।

गायके दूधमें बादामकी खीर पकाकर ३–४ दिन खानेसे आधासीसी रोग (आधे सिरका दर्द) आराम हो जाता है।

यदि रक्तकी गरमीसे सिरमें दर्द हो, तो गायके दूधमें रुईका मोटा फाहा भिगोकर सिरपर रखने और उसे बराबर दूधसे तर करते रहनेसे सिर दर्दमें बड़ा फ़ायदा होता है, मगर सन्ध्या समय सिरको धोकर गायका मक्खन मलना ज़रूरी है।

यदि किसीको धतूरेका विष चढ़ा हो, तो गायके दूधमें थोड़ी चीनी मिलाकर पीनेसे लाभ होता है।*

---

* ऐसा दूध बल वीर्य पुरुषार्थ और शुद्ध रक्तको बढ़ानेमें भी बड़ा काम देता है। जिनकी जठराग्नि प्रबल होती है वे दूधमें घी, मधु और मिश्री मिलाकर पीते हैं, इससे उनको बड़ा लाभ होता है और जीवनका सुख वे आनन्दपूर्वक लूटते हैं। दूधमें

चबाना चाहिये। ऐसा दूध शरीरका इतना पोषण करता है कि उसका वर्णन करना कठिन है।" बात बहुत कुछ सत्य है। पेटमें पहुंचकर जब दूधका जल सूख जाता है, तब वह पेटके रसके साथ मिलकर पनीरके दहीके सदृश हो जाता है। दूधके प्रत्येक परमाणु पेटके रसके साथ अच्छी तरह मिल जायँ इसीलिये उसको थोड़ा २ घूंट २ करके पीनेकी ज़रूरत है। यदि थोड़ा २ करके दूध नहीं पिया जायगा, तो पेटमें पहुंचकर सबका मट्ठ बँध जायगा और पचनेमे बहुत देर लगेगी।

जिन दिनोंमें दूधका सेवन जारी हो उन दिनोंमे दूधके सिवाय खांड, मिठाई, शहद, गुड़, फल, बादाम, किसी तरहका पदार्थ या दूधके साथ मिली कोई दवा आदि कदापि नहीं खानी चाहिए। यदि दूधका सर्वोत्तम लाभ उठाना है, तो इनके सिवा चाय, कहवा, कोको, पान-सुपारी और तम्बाकू आदिको भी पास नहीं फटकने देना चाहिये। इस पथ्यसे दूधका सेवन लाभदायक होगा और बीमारी शीघ्र ही दूर हो जायगी।

इस प्रकार दूधके सेवन करनेसे जब पूरी आरोग्यता प्राप्त हो जावे, तब अच्छे २ मौसमी फल, मेवे और बहुत हलका अन्न

---

हानिके बदले लाभ कुछ नहीं होता, वरन् पेटके जलीय स्थानको एकदम इतना बोझ मिल जाता है कि नियमानुसार काम करना उसकी शक्तिके बाहर हो जाता है और अन्तमें उसको मजबूर होकर जवाब देदेना पड़ता है। बस, इसीको अन्नकी बदहज़मी कहते हैं। इस बदहज़मीसे पेट फूल जाता और पाचन क्रियाका काम मन्द हो जाता है। इसलिये स्वास्थ्य-रक्षाके नियमानुसार अन्नको काममें लाना चाहिये।

# पन्द्रहवां अध्याय।

## दही।


धका वर्णन हमारे पाठकोंने पढ़ लिया। अब दूधकी दूसरी अवस्था दहीका वर्णन लिखा जाता है। दूधका जम जाना ही 'दही' कहलाता है—इस बातको हम जानते हैं ; पर देखना यह है कि दूध जमता कैसे है! यदि खजूरका रस, मधु, दूध आदि चीजें अनावृत अवस्थामें रख दी जायँ, तो कुछ घण्टोंमें ये विकृत हो जाती हैं। परीक्षा करनेसे देखा गया है कि एक प्रकारका भाफ़ उठकर इन चीज़ोंको फेन-युक्त कर डालता है। बल्कि, खजूरका रस तो इस प्रकार विकृत हो जानेपर इतना फेन-युक्त हो जाता है कि घड़ेमें उसके समानेकी गुंजायश नहीं रहती। अधिक तो क्या, बस यों समझ लेना चाहिये कि इस प्रकारके परिवर्तनसे वस्तुओंके स्वाद, वर्ण और गन्ध सभी पृथक् हो जाते हैं। उस समय वस्तुका असली रूप नहीं रहता। विज्ञानकी भाषामें कहा जा सकता है कि इस तरहसे उनका एक रासायनिक परिवर्तन

यदि भोजनके साथ भूलसे काचका चूरा खानेमें आजाय, तो गायका दूध पीनेसे बहुत फ़ायदा होता है।

अशुद्ध गन्धकके विषमें, घी मिलाकर गायका दूध पिलानेसे गन्धकका विष उतर जाता है।

गायके दूधमें सोंठ घिसकर गाढ़ा २ लेप करनेसे बहुत ही तेज़ सिरका दर्द भी आराम हो जाता है।

वाजी करण योगोंमें तो दूधको सर्वोत्तम माना है, इसके बिना काम ही नहीं चल सकता। इसके सिवा, दूधमें इतने गुण हैं कि जिनको लेखनी किसी हालतमें नहीं लिख सकती। हम कह चुके हैं कि दूध अमृत है। जिसने इसको जिस तरह आज़माया है, उसी तरह उसको लाभ हुआ है। अनुभवी लोगोंने इससे बड़े २ काम लिये हैं और आज भी जो इसका साधक है, लाभ उठाता ही है।



---

चीनी मिलाना अच्छा है; पर अधिक परिमाणमें कभी नहीं मिलाना चाहिये। बहुतसे लोग दूधको खूब मीठा करनेकी गरज़से उसमें खूब चीनी झोंक देते हैं; पर याद रखना चाहिये कि ऐसा दूध गरिष्ट और मंदाग्नी रोग पैदा करनेवाला होता है और पाचन क्रियाका महा शत्रु है।

पाती। प्रसन्नताकी बात है कि हमारे देशमें भी इस प्रकार वायुशून्य डब्बोंमें भरकर फलोंकी रक्षा करना आरम्भ हुआ है।

कुछ भी हो, हमें तो पचानेवाली वस्तु पर विचार करना है। जो वस्तु हवाके साथ गुप्त रूपसे आकर खजूरके रस और दूध इत्यादिको विकृत कर डालती है, हमारे आधुनिक वैज्ञानिकोंने उसको लेकर बहुतसी गवेषणा की हैं। गवेषणासे जाना गया है कि, हवामें नाना प्रकारके जीवाणु सर्वदा उड़ते रहते हैं।* यहाँ जीवाणुका नाम सुननेसे हमें व्याधिके जीवाणुओंकी बात याद आजाती है। परन्तु अबतक इस श्रेणीके जितने जीवोंका पता मिला है, उनमें व्याधि-उत्पादक जीवाणुकी संख्या बहुत थोड़ी है। मृतप्राणी वा वृक्षादिको पचा डालना, चीनीसे मद उत्पन्न करना, वृक्षोंकी जड़में वायुका नाइट्रोजन संग्रहकर रखना, इतना ही नहीं, बल्कि चुरुटकी तम्बाखूमें सुगन्ध उत्पन्न करना और रंगाईके काममें रंगको फैला डालना आदि बहुतसे काम केवल जीवाणु द्वारा ही सम्पन्न होते हैं—यह बात स्थिर करके ही विज्ञानी शान्त नहीं हुए, बल्कि उन्होंने हज़ारों जातिके जीवा-

---

* उड़नेसे यह अभिप्राय नहीं है कि जैसे तितली, मच्छर आदि उड़ते हैं। बल्कि ये जीवाणु तो इतने बारीक होते हैं कि परीक्षाके बिना उनका अस्तित्व ही क़ायम नहीं हो सकता। ऐसे जीवाणु हवाके साथ मिले रह कर अर्थात् हवामें हवा रूप होकर सर्वदा घूमते रहते हैं और जिस चीज़को खुली देखते हैं उसीमें प्रवेश करके उसे पचा डालते हैं। जिस चीज़में ज़रा भी तरल पदार्थ होगा, उस पर इनका अधिकार अवश्य जम जायेगा।

उपस्थित होता है। वोल चालकी भाषामें हम इस परिवर्तनको "पचजाना" "खमीर पड़ जाना" या "बुसजाना" कहते हैं। अंगरेज़ोंमें यह फ़रमेंटेशन--(Fermentation) कहलाता है और शुद्ध-संस्कृतमें इसको किण्व कहते हैं। जो भाफ़ उठकर चीज़ोंको फेन-युक्त कर डालती है, उसका परिचय ले लिया गया है। साबित हुआ है कि यह भाफ़ अंगारक-भाफ़ (Carbonic Acid Gas) के सिवा और कुछ नहीं है।

अच्छा, अब यह देखना चाहिये कि ताज़ा खजूरका रस और ताज़ा दूध आदि चीज़ोंको खुली अवस्थामें रखनेसे वे क्यों विकार-युक्त हो जाती हैं। कौनसा ऐसा योग है, कौनसी ऐसी शक्ति है, जो इनमें विकार पैदा कर देती है? विचारनेसे मालूम होता है कि बाहरकी किसी वस्तुके योगसे ही यह परिवर्तन होता है। असली बात भी यही है। क्योंकि वायु-शून्य किसी स्वच्छ पात्रमें यदि ये वस्तुएं रख दी जायँ, तो उनमें कोई विकार दिखाई नहीं देगा। ऊपर "फलोंकी रक्षा" और "जीवका जन्म" निबन्धोंमें हमने इस बातको स्पष्ट किया है। हम देखते हैं कि जर्मनीकी गो-शालाओंका गाढ़ा दूध, इंगलैंडकी मछलियाँ और अमेरिकाके बड़े २ बागोंके फलमूल इसी प्रणालीसे डब्बोंमें बन्द होकर हमारे बाज़ारमें आते हैं। इस समय संसारमें एक विचित्र परिवर्त्तन उपस्थित हो जानेके कारण चाहे ये चीज़ें कम आती हों; पर कहनेका तात्पर्य यह है कि उनकी रक्षा इसी रीतिसे की जाती है और इस पद्धतिसे कोई चीज़ बिगड़ने नहीं

पाती। प्रसन्नताकी बात है कि हमारे देशमें भी इस प्रकार वायुशून्य डब्बोंमें भरकर फलोंकी रक्षा करना आरम्भ हुआ है।

कुछ भी हो, हमें तो पचानेवाली वस्तु पर विचार करना है। जो वस्तु हवाके साथ गुप्त रूपसे आकर खजूरके रस और दूध इत्यादिको विकृत कर डालती है, हमारे आधुनिक वैज्ञानिकोंने उसको लेकर बहुतसी गवेषणा की हैं। गवेषणासे जाना गया है कि, हवामें नाना प्रकारके जीवाणु सर्वदा उड़ते रहते हैं।* यहाँ जीवाणुका नाम सुननेसे हमे व्याधिके जीवाणुओंकी बात याद आजाती है। परन्तु अबतक इस श्रेणीके जितने जीवोंका पता मिला है, उनमें व्याधि उत्पादक जीवाणुकी संख्या बहुत थोड़ी है। मृतप्राणी वा वृक्षादिको पचा डालना, चीनीसे मद उत्पन्न करना, वृक्षोंकी जड़में वायुका नाइट्रोजन संग्रहकर रखना, इतना ही नहीं, बल्कि चुरुटकी तम्बाकूमें सुगन्ध उत्पन्न करना और रंगाईके काममें रँगको फैला डालना आदि बहुतसे काम केवल जीवाणु द्वारा ही सम्पन्न होते हैं—यह बात स्थिर करके ही विज्ञानी शान्त नहीं हुए, बल्कि उन्होंने हज़ारों जातिके जीवा-

---

* उड़नेसे यह अभिप्राय नहीं है कि जैसे तितली, मच्छर आदि उड़ते हैं। बल्कि वे जीवाणु तो इतने बारीक होते हैं कि परीक्षाके बिना उनका अस्तित्व ही कायम नहीं हो सकता। ऐसे जीवाणु हवाके साथ मिले रह कर अर्थात् हवामें हवा रूप होकर सर्वदा घूमते रहते हैं और जिस चीजको खुली देखते हैं उसीमें प्रवेश करके उसे पचा डालते हैं। जिस चीज़में ज़रा भी तरल पदार्थ होगा, उस पर इनका अधिकार अवश्य जम जावेगा।

णुओंमेंसे आवश्यकतानुसार एक २ जातिको पहचानकर अलग किया और उनको पालना आरम्भ किया है। व्यवसायके लिये हम रेशमके कीड़े* और लाखके कीड़ोंको पालते हैं। यह तो मोटी बात है; पर आजकल व्यवसायके लिये उपरोक्त जीवाणुओंको भी पाला जाता है। जो जीवाणु मद्य उत्पन्न करते हैं या वृक्षोंकी खूराक जुटाते हैं—उनको पालकर रेशम बनानेके कारख़ाने वा फ़सलके खेतोंमें छोड़ दिया जाता है। इससे आजकल जो फल पाया जाता है, वह बहुत ही आश्चर्यजनक है।

कहनेका तात्पर्य यह है कि दही भी जीवाणु द्वारा ही उत्पन्न होता है। एक श्रेणीके विशेष जीवाणु दूधमें आश्रयलेकर किसी प्रकार का रस निकालते रहते हैं। उस रससे रासायनिक कार्य शुरू होता है। बस, धीरे २ दूध, दही बन जाता है। इस प्रकार जीवाणुही दूध को दही में बदल देते हैं। दही को सुगन्धित और खट्टा मीठा बनाना इन्हीं जीवाणुओंका काम है।

* रेशमके एक प्रकारके कीड़ेका हाल सुन लीजिये।

आसाम में एरंडीको एरी कहते हैं। अतः एरंडीके पत्तों पर पाला जाने वाला यह कीड़ा एरी रेशमका कीड़ा कहलाता है। यह रेशम भड़कीला और ज्यादा ख़ूबसूरत तो नहीं होता, पर होता है बड़ा मज़बूत और टिकाऊ। आसामके किसान अधिकतर इसी रेशमसे बने कपड़े पहनते हैं और उनका अनुभव है कि इसका कपड़ा सूतके कपड़े से भी अधिक टिकाऊ और मज़बूत है।

पूसाके प्रयोगोंसे सिद्ध हो चुका है कि यह कीड़ा भारतके सब प्रान्तोंमें पाला जा सकता है। खेतोंमें रहनेवाले जुलाहे, जोकि खादी आदि बुनते हैं, इस रेशम से कपड़ा बन सकते हैं।

इनको हम "दही के जीवाणु" कह सकते हैं। मक्खन की सुगन्ध और विलायती चीज़ों की गन्धमें भी जीवाणुका कार्य दिखाई देता है। ख़ास २ जीवाणु दूधमें आश्रय लेकर मक्खन आदि उत्पन्न करते हैं। आज कल विलायती ग्वाले दही और मक्खन आदि उत्पन्न करने वाले जीवाणुओंको पहचान कर अलग स्थानमें पालते हैं। और आवश्यकतानुसार उन्हीं को दूधमें डालकर उत्तम दही या मक्खन इत्यादि तैयार करते हैं। हमारे यहां "जामन" देकर दही तैयार करने की प्रथा अब भी जारी है। माना कि "जामन" देना और दूधमें जीवाणु मिलाना दही बनानेके लिये एक ही बात है। पर हम जिसको "जामन" कहते हैं, उसमें दही उत्पन्न करनेवाले

---

बीजः—इनका बीज पूसासे मिल सकता है। कोष न मंगा कर अण्डे मंगाना अच्छा है, कारण कोषके साथ, एक प्रकारकी मक्खी की, जोकि इस कीड़ेकी शत्रु है, आ जाने की सम्भावना रहती है। आसाम से तो हमेशा अण्डे ही मंगाना चाहिये पूसासे चाहे जीवित कोष मंगावे तो कोई हर्ज नहीं।

पालनः—दूसरे कीड़ोंकी तरह यह कीड़ा भी चार अवस्थाओंमें अपना जीवन बिताता है। तितली अण्डे देती है, अण्डों से कीड़े निकलते हैं। ये कीड़े चार पांच बार त्वचा बदलकर, पूर्ण बाढ होनेके बाद कोष बनाते हैं और बादको यह कीड़ा इस कोष में प्यूपा ( Pupa ) के रूपमें परिवर्तित हो जाता है, और प्यूपा से तितली निकलती है। कोषके निकल आने पर तितलियोंका संयोग (mating) होता है। इस के बाद वे अण्डे देने लगती हैं। पहली रातको दिये हुये अंडे ही उत्तम होते हैं और यही बीज के लिये रखना चाहिये। किसी भी दशामें तीन दिन के बाद दिये हुए अंडे न रखे जायं। अण्डे देनेके बाद तितलियां मर जाती हैं।

असली जीवाणुके सिवा और भी कई जीवाणु रहते हैं, जो दही को ख़राब कर डालते हैं। इसीलिये हर समय "जामन"का दही ज़्यादे अच्छा नहीं होता। बात यह है कि दधि-उत्पादक असली जीवाणु जैसा काम करते हैं, उसके साथ २ ही दूसरे अनावश्यक जीवाणु "जामन"के साथ दूधमें पहुंचकर विरुद्ध काम करते हैं और दूधको बिगाड़ने लग जाते हैं। फल यह होता है कि वह दही एक अद्भुत प्रकारकी वस्तु बन जाती है। प्रायः हम देखते हैं कि दही अच्छा नहीं जमा, उसमें लालीसी आगई, पानी अलग होगया, दहीकी फुदकियां अलग हो गई और उसमें बुरी गन्ध आने लग गई। यह क्या है? यह सब उन्हीं अनावश्यक जीवाणुओंकी करतूत समझनी चाहिये।

---

अण्डोंसे ऋतुके अनुसार ७ से १५ दिनमें कीडे निकलने लगते हैं। गरमीके दिनोंमें अण्डोंपर गीला कपडा ढांकना अच्छा है। इससे उष्णताकी अधिकतासे अण्डोंके नष्ट होनेका डर नहीं रहता।

पूसामें एक वर्षमें सात फसल ( Brood ) प्राप्त हुई है ; पर नागपुरमें केवल छः ही प्राप्त होती हैं। पूसाके विद्वानोंका मत है कि प्रति वर्ष नये बीज मंगाकर काम प्रारम्भ करना चाहिये। वे एप्रिल, मई और जून से कीडे पालन न करने को कहते हैं। गरमी के मौसिममें फ़सल बहुत ही खराब आती है और बहुतसे कीडे कोष भी नहीं बना सकते। पूसासे १००० अण्डे मंगाकर जुलाई में काम शुरू करनेसे अगस्तमें ९०० तितलियां निकलेंगी। इन तितलियोंसे लगभग ८०००० अण्डे होंगे। अत. गरमी में पालन न करने से कुछ नुकसान नहीं, कारण औलाद बहुत जल्दी बढती है।

जीवाणु केवल व्याधि उत्पन्न कर एवम् बाहरकी चीज़ों को भले बुरे रूपमें बदलकर ही शान्त नहीं होते। सुस्थ और सबल प्राणी के शरीरमें भी ये, आश्रय लेकर नाना प्रकारके काम दिखाते हैं। मानवशरीर के नवद्वारमें अन्ततः कितने ही द्वार इन जीवाणु के प्रवेश करनेके लिये खुले रहते हैं। हम खूराक के साथ बहुतसे जीवाणु पेटमें पहुंचा लेते हैं। मगर यह जीवाणु यदि व्याधि-जीवाणु नहीं होते हैं, तब तो हमारा विशेष कोई अनिष्ट नहीं कर सकते। क्योंकि हमारे जठर से जो पाक-रस (Gastric juice) निकलता है, उसमें जीवाणुओंको नाश करनेकी शक्ति है। इसलिये पेटमें पहुंचनेके बाद इस रसके संयोगसे वे जीवाणु मर जाते हैं।

---

अब हम कीड़ोंकी चार अवस्थाएं बताते हैं।

| अवस्था | अवधि | |
|---|---|---|
| अण्डावस्था | ७ से १५ दिन | अण्डे और प्यूपा |
| कीड़े की अवस्था | १५ से २२ दिन | की अवस्था में |
| प्यूपा (सुप्तावस्था) | १५ से ३० दिन | |
| तितली | २ से ३ दिन | कीड़े कुछ नहीं |
| कोष | ४० से ८० दिन | खाते। |

ऊपर लिखी अवधि ऋतु और कीड़ों के भोजन पर निर्भर है

**आवश्यक वस्तुयें.**—बहुत कम सामानकी जरूरत होती है। कीड़ोंको किसान घरके किसी हवादार कमरे में रख सकता है। बांसकी डलियां सब जगह कम कीमत में बनवाई जा सकती हैं। बड़े कीड़ों के लिये तीन या चार फीट लम्बी और दो या तीन फीट चौड़ी डलियां अच्छी होती हैं। कोष बनानेके लिये और तितलियां रखने के लिये पहले लिखे ढंगकी टोकनियां आवश्यक हैं। डलियां रखने के लिये एक लकड़ी का मचान तो होना ही चाहिये।

असली जीवाणुके सिवा और भी कई जीवाणु रहते हैं, जो दही को खराब कर डालते हैं। इसीलिये हर समय "जामन"का दही ज़्यादे अच्छा नहीं होता। बात यह है कि दधि-उत्पादक असली जीवाणु जैसा काम करते हैं, उसके साथ २ ही दूसरे अनावश्यक जीवाणु "जामन"के साथ दूधमें पहुंचकर विरुद्ध काम करते हैं और दूधको बिगाड़ने लग जाते हैं। फल यह होता है कि वह दही एक अद्भुत प्रकारकी वस्तु बन जाती है। प्रायः हम देखते हैं कि दही अच्छा नहीं जमा, उसमें लालीसी आगई, पानी अलग होगया, दहीकी फुदकियां अलग हो गईं और उसमें बुरी गन्ध आने लग गई। यह क्या है? यह सब उन्हीं अनावश्यक जीवाणुओंकी करतूत समझनी चाहिये।

---

अण्डोंसे ऋतुके अनुसार ७ से १५ दिनमें कीड़े निकलने लगते हैं। गरमीके दिनोंमें अण्डोंपर गीला कपड़ा ढांकना अच्छा है। इससे उष्णताकी अधिकतासे अण्डोंके नष्ट होनेका डर नहीं रहता।

पूसामें एक वर्षमें सात फसल ( Brood ) प्राप्त हुई है; पर नागपुरमें केवल छः ही प्राप्त होती हैं। पूसाके विद्वानोंका मत है कि प्रति वर्ष नये बीज मंगाकर काम प्रारम्भ करना चाहिये। वे एप्रिल, मई और जून में कीड़े पालन न करने को कहते हैं। गरमी के मौसिममें फ़सल बहुत ही खराब आती है और बहुतसे कीड़े कोष भी नहीं बना सकते। पूसासे १००० अण्डे मंगाकर जुलाई में काम शुरू करनेसे अगस्तमें ९०० तितलियां निकलेंगी। इन तितलियोंसे लगभग ८०००० अण्डे होंगे। अतः गरमी में पालन न करने से कुछ नुकसान नहीं, कारण औलाद बहुत जल्दी बढ़ती है।

जीवाणु केवल व्याधि उत्पन्न कर एवम् बाहरकी चीज़ों को भले बुरे रूपमें बदलकर ही शान्त नहीं होते। सुस्थ और सबल प्राणी के शरीरमें भी ये, आश्रय लेकर नाना प्रकारके काम दिखाते हैं। मानवशरीर के नवद्वारमें अन्ततः कितने ही द्वार इन जीवाणु के प्रवेश करनेके लिये खुले रहते हैं। हम खूराक के साथ बहुतसे जीवाणु पेटमें पहुंचा लेते हैं। मगर यह जीवाणु यदि व्याधि-जीवाणु नहीं होते हैं, तब तो हमारा विशेष कोई अनिष्ट नहीं कर सकते। क्योंकि हमारे जठर से जो पाक-रस (Gastric juice) निकलता है, उसमें जीवाणुओंको नाश करनेकी शक्ति है। इसलिये पेटमें पहुंचनेके बाद इस रसके संयोगसे वे जीवाणु मर जाते हैं।

---

अब हम कीड़ोंकी चार अवस्थाएं बताते हैं।

| | | |
|---|---|---|
| अण्डावस्था | ७ से १५ दिन | अण्डे और प्यूपा |
| कीड़े की अवस्था | १५ से ३२ दिन | की अवस्था में |
| प्यूपा (सुप्तावस्था) | १५ से २० दिन | कीड़े कुछ नहीं |
| तितली | २ से ३ दिन | |
| जोड़ | ४० से ८० दिन | खाते। |

ऊपर लिखी अवधि ऋतु और कीड़ों के भोजन पर निर्भर है

आवश्यक वस्तुयें.—बहुत कम सामानकी जरूरत होती है। कीड़ोंको किसान घरके किसी हवादार कमरे में रख सकता है। बांसकी डलियां सब जगह कम कीमत में बनवाई जा सकती हैं। बड़े कीड़ों के लिये तीन या चार फीट लम्बी और दो या तीन फीट चौड़ी डलिया अच्छी होती हैं। कोष बनानेके लिये और तितलियां रखने के लिये पहले लिखे ढंगकी टोकनियां आवश्यक हैं। डलियां रखने के लिये एक लकड़ी का मचान तो होना ही चाहिये।

असली जीवाणुके सिवा और भी कई जीवाणु रहते हैं, जो दही को खराब कर डालते हैं। इसीलिये हर समय "जामन"का दही ज्यादे अच्छा नहीं होता। बात यह है कि दधि-उत्पादक असली जीवाणु जैसा काम करते हैं, उसके साथ २ ही दूसरे अनावश्यक जीवाणु "जामन"के साथ दूधमें पहुंचकर विरुद्ध काम करते हैं और दूधको बिगाड़ने लग जाते हैं। फल यह होता है कि वह दही एक अद्भुत प्रकारकी वस्तु बन जाती है। प्राय हम देखते हैं कि दही अच्छा नहीं जमा, उसमें लालीसी आगई, पानी अलग होगया, दहीकी फुद्कियां अलग हो गईं और उसमें बुरी गन्ध आने लग गई। यह क्या है? यह सब उन्ही अनावश्यक जीवाणुओंकी करतूत समझनी चाहिये।

---

अण्डोंसे ऋतुके अनुसार ७ से १५ दिनमें कीड़े निकलने लगते हैं। गरमीके दिनोंमें अण्डोंपर गीला कपड़ा ढांकना अच्छा है। इससे उष्णताकी अधिकतासे अण्डोंके नष्ट होनेका डर नहीं रहता।

पूसामें एक वर्षमें सात फसल ( Brood ) प्राप्त हुई है, पर नागपुरमें केवल ५ ही प्राप्त होती हैं। पूसाके विद्वानोंका मत है कि प्रति वर्ष नये बीज मंगाकर काम प्रारम्भ करना चाहिये। वे एप्रिल, मई और जून से कीड़े पालन न करने को कहते हैं। गरमी के मौसिममें फ़सल बहुत ही खराब आती है और बहुतसे कीड़े कोष भी नहीं बना सकते। पूसासे १००० अण्डे मंगाकर जुलाई में काम शुरू करनेसे अगस्तमें ९०० तितलियां निकलेंगी। इन तितलियोंसे लगभग ८०००० अण्डे होंगे। अत गरमी में पालन न करने से कुछ नुकसान नहीं, कारण औलाद बहुत जल्दी बढ़ती है।

जीवाणु केवल व्याधि उत्पन्न कर अथवा खाद्यकी चीजों को भले बुरे रूपमें बदलकर ही शान्त नहीं होते। मनुष्य और स्वच्छ प्राणी के शरीरमें भी ये, आश्रय लेकर नाना प्रकारके काम दिखाते हैं। मानवशरीर के नवद्वारमें अन्ततः कितने ही द्वार इन जीवाणु के प्रवेश करनेके लिये खुले रहते हैं। हम खूराक के साथ बहुतसे जीवाणु पेटमें पहुंचा लेते हैं। मगर यह जीवाणु यदि व्याधि-जीवाणु नहीं होते हैं, तब तो हमारा विशेष कोई अनिष्ट नहीं कर सकते। क्योंकि हमारे जठर से जो पाचक-रस (Gastric juice) निकलता है, उसमें जीवाणुओंको नाश करनेकी शक्ति है। इसलिये पेटमें पहुंचनेके बाद इस रसके संयोगसे ये जीवाणु मर जाते हैं।

---

अब हम कीड़ोंकी चार अवस्थाएं बताते हैं।

| | | |
|---|---|---|
| अण्डावस्था | ७ से १५ दिन | अंडे और प्यूपा की अवस्था में कोई कुछ नहीं खाते। |
| कीडे की अवस्था | १५ से ३५ दिन | |
| प्यूपा (सुप्तावस्था) | १४ से २० दिन | |
| तितली | २ से ३ दिन | |
| कीड़ | ४० से ८० दिन | |

ऊपर लिखी अवधि ऋतु और कीड़ों के मौसम पर निर्भर है।

आवश्यक वस्तुयें —बहुत कम सामानकी जरूरत होती है। [illegible] घरके किसी हवादार कमरे में रख सकता है। बांसकी डलियां [illegible] में बनवाई जा सकती हैं। बड़े कीड़ों के लिये तीन या चार फीट लम्बी और दो या तीन फीट चौडी डलियां अच्छी होती हैं। कीड़ रखनेके लिये और [illegible] रखने के लिये पहले लिखे ढंगकी टोकरियां आवश्यक हैं। डलियां रखने के लिये [illegible] लकड़ी का मचान तो होना ही चाहिये।

यह सिर्फ़ भोजन के साथ पेटमें पहुंचनेवाले जीवाणुओंकी वात है। मगर दूसरे मार्गसे हमारे अंत्र (Intestine) में जो जीवाणु आश्रय लेते हैं, उनको अंत्र-रस (Pancreatic juice) नष्ट नहीं कर सकता। बल्कि इस रसके साथ जो थोड़ा क्षार मिला रहता है, वह, अंत्रस्थ पदार्थों के वंश-विस्तार के उपयुक्त क्षेत्र बना डालता है। फल यह होता है कि अधपकी अंत्रस्थकी चीज़ोंको ये जीवाणु खूब पचाने लग जाते हैं। यह अच्छी वात नहीं। मानाकि पचानेका काम जीवाणुओंका पेसा है कि इससे वे संसार का विशेष उपकार करते हैं, मगर यह काम हमारे शरीरमें चलता रहने से फल शुभ नहीं होता। बात यह है कि ये जीवाणु अपने शरीरसे जो रस निकालते हैं, वह हमारे रक्त के साथ मिलकर नाना

---

भोजन:—कीड़ोंका मुख्य भोजन एरंडी के पत्ते हैं। पर पत्ते न मिल सकें, तो कीड़ोंको जीवित रखने के लिये पपया (एरंडकी लकड़ी) और बेर के पत्ते भी खिलाये जा सकते हैं। लालरंगवाली एरंडी के पत्ते कीड़े नहीं खाते। मालूम नहीं पुसा वालों का अनुभव क्या है। एक एकड़ ज़मीन में अरंड बोनेसे ५० से ७५ मन तक पत्ते निकल आते हैं।

कोष —तितलियों के कोष में से निकल आने पर कोष अलग रख दिये जायं। उत्तम श्रेणीके २५००कोषका वज़न एक सेर होता है। साधारण श्रेणीके कोष एक सेरमें ४००० तक चढते हैं। एक पौंड कोष तैयार होने के लिये ७५ पौंड पत्ते आवश्यक होते हैं। और एक सेर कोष से १० से १२ छटांक तक रेशमका धागा निकलता है। कोष सफेद और खाकी रङ्गके होते हैं। पर रङ्ग का उतना महत्व नहीं, कारण धोने पर रंग निकल जाता है।

कोष धोना:—कोष एक कपड़े में बांध कर पानी में डुबा दो। यदि कोष

प्रकार की पीड़ायें उत्पन्न करता है और उनके लक्षण हमें दीखने लगते हैं।

मानव-शरीर में इन जीवाणुओंका जो काम होता है, उस को लेकर आधुनिक शरीर-विज्ञान-वेत्ताओं ने कई परीक्षायें की हैं। परीक्षाओं से जाना गया है कि मनुष्यकी अवस्था जितनी ही अधिक होगी, उस के अंत्रमें अनिष्टकारी जीवाणुओंकी संख्या उतनीही अधिक बढ़ी हुई होगी। आरोग्य बच्चों के अंत्रमें ये पचाने वाले जीवाणु एक प्रकार से दिखाई नहीं देते, परीक्षा करने से सिर्फ़ दधि-जीवाणुओंका पता पाया जाता है। इसके बाद बच्चा ज्यों २ बड़ा होने लगता है, त्यों २ इन दधि-जीवाणुओंको हटाकर पाचक-जीवाणु धीरे २ अंत्रपर अधिकार जमालेते हैं।

---

पानी पर तैरने लगें, तो ऊपर कुछ वज़न रख दो। फिर इस पानीमें प्रति सेर कोषके लिये एक सेर एरण्डी के पत्ते, डालियां आदि की राख या पाव भर सोडा डाल कर खूब गरम करो। ४५ मिनट तक उबालना अच्छा है। इसके बाद इन कोषोंको निकाल कर चरखे पर कपास की तरह कात लो। गीले कोष कातना अच्छा है, कारण इससे सूत महीन बनता है, पर रंग कुछ मैला हो जाता है। कई लोग कोष सुखा कर रेशम को नोच कर अलग कर लेते हैं और फिर कपास की तरह कातते हैं। ऊन कातने वाले लोग इस रेशम को कात सकते हैं। पूसामें एक नई मशीन कातने के लिये बनाई गई है।

इस प्रकार चरखे या पूसा की मशीन से काते हुये धागे से हमारे देशी जुलाहे कपड़ा बुन सकते हैं।

रंगनाः—यह रेशम चाहे जिस रंग में रंगा जा सकता है नील, लाख, पलास आदि देशी वनस्पतियों का रंग इस रेशम पर बहुत अच्छा चढ़ता है।

फ्रान्सके प्रसिद्ध विज्ञानी मि० मेचनिकफ् (metchnikoff) ने जीवाणुओंके सम्बन्धमें कई गवेषणाएँ करके विशेष प्रतिष्ठा प्राप्त की है। इन्होंने मानवशरीरके प्रधान शत्रु बुढ़ापेका मूल कारण ढूंढ़ते हुए उसमें जीवाणुओंका कार्य निकाला है। इस नवाविष्कारके सहारेपर वे कहते हैं कि वयोवृद्धिके साथ हमारे देहकी पाकनालीमें जो जीवाणु आश्रय लेते हैं, उनकी देहसे विष निकलता रहता है और वही विष हमारे रक्तके साथ मिल करबुढ़ापेके लक्षण दिखाता है। यदि व्याधिका मूल कारण ठीक तौरपर जान लिया जाय, तो उसके प्रतिकारका उपाय निकालना सुसाध्य हो जावे।

जरा उत्पत्तिका यह एक कारण जानकर मेचनिकफ् साहब इसके निवारणका उपाय निकालनेके लिये सचेष्ट हुए। इन्होंने देखा कि, अम्लयुक्त पदार्थमें ये अनिष्टकारी जीवाणु एकाएक नहीं बढ़ते। बच्चोंके अंत्रमें दधि-उत्पादक (Lactic Acid) जीवाणु खूब ज़्यादे होनेके कारण ही बच्चे इन अनिष्टकारी जीवाणुओंके आक्रमणसे बचे रहते हैं। जिस उपायसे स्वयम् प्रकृति बच्चोंकी देहसे अनिष्टकारी जीवाणुओंको ध्वंस कर देती है, ठीक उसी प्रकार वयःप्राप्त व्यक्तिके शरीरमेंके जीवाणु अम्ल संयोगसे ध्वंस किये जायँ—यह संकल्प मेचनिकफ् महाशयने किया। सबके पहले उनके मनमें यह बात आई कि, खूराकके साथ कुछ लेक्टिकएसिड अर्थात् दहीकी खटाई पेटमें पहुँचाई जाय। मगर परीक्षा जब इसकी की गई, तो शुभफल नहीं पाया गया

और पाकयन्त्रमें पहुँचते ही एसिडको विश्लिष्ट होते देखा गया। इसीलिये, जब वह अंत्रमें जाकर पहुंची, तो उसके द्वारा जीवाणुका विनाश नहीं हुआ। इन्हीं कारणोंसे एक व्यवस्था करना आवश्यक हो गया कि अंत्रमें ही किसी तरह दहीकी खटाई उत्पन्न की जाय। इसी समय मेचनिकफ्के मनमें आया कि यदि देहके पाकाशयमें किसी प्रकार दहीके अम्ल-उत्पादक जीवाणुओं ( Lactic Acid Bacteria ) का स्थायी उपनिवेश स्थापित किया जा सके, तो सब झगड़े मिट जावें और तभी ये जीवाणु दहीकी खटाई तैयार करके अनिष्टकर जीवाणुओंको निश्चय ही नष्ट करने लग जावें।

लैक्टिकएसिड्को उत्पन्न करनेवाले साधारण जीवाणु ८५° डिग्रीके अधिक उत्तापसे अच्छे पैदा नहीं होते। हमारी पाक-नालीकी उष्णता प्रायः ९९° डिग्री है। जब ८५°से हमारी पाकनालीकी उष्णता अधिक है, तो उसमें अम्ल-उत्पादक जीवाणु कैसे पैदा हो सकते हैं? इसीलिये, मेचनिकफ्को यह कल्पना छोड़ देनी पड़ी। छोड़ तो दी, पर वे इसमें बिलकुल हताश नहीं हुए। उन्होंने एक और ही काम शुरू किया। दूधके द्वारा जितने प्रकारका अम्ल-स्वादयुक्त खाद्य तैयार हो सकता है, उसे अनेक देशोंसे संग्रह करके वे परीक्षा करने लगे। बहुतसी परीक्षाओंके बाद बलगारिया प्रान्तके एक प्रकारके दही (yogh urt) में उनको मनोवांछित जीवाणुओंका पता मिला। यह जीवाणु भी दहीकी खटाई अर्थात् लैक्टिकएसिडके उत्पा-

दक निकले, किन्तु इस श्रेणीके साधारण जीवाणुओंसे कुछ पृथक् साबित हुए। हमारे पाकयन्त्रके उत्तापको सहकर ये जीवाणु बहुत बढ़ सकते हैं। मेचनिकफ् महाशयने अनुसंधान करते हुए यह भी जाना कि बलगारियाके एक प्रकारके लोग इस दहीको बहुत ही अधिक खाते रहते हैं और इसीसे उनमें प्रायः सब दीर्घजीवी और बलिष्ठ होते हैं।

इसके बाद हमारे देशके दही और इजिप्टके लेबेन–(Leben) को लेकर परीक्षा की गई। इन दोनोंमें भी मेचनिकफ़्ने ताप सहनेवाले जीवाणुओंका पता पाया। हमारे दहीके जीवाणु ६६° डिग्रीसे अधिक उष्णता नहीं सह सकते, पर बलगारियाके दहीके जीवाणुओंको प्रायः १२०° डिग्रीतक उष्णतामें जीवित रहते देखा गया। इससे यह बात भी जान ली गई कि बालकोंके अंत्रोंमें जो स्वास्थ्यकर जीवाणु देखे जाते हैं, वे इसी जातिके अन्तर्गत हैं।

जो हो, इस आविष्कारके बादसे ही दही खानेका मामला सभीकी दृष्टि खींचता है। योरपके बड़े २ शहरोंमें दहीके कारखाने खोले गये हैं और शिक्षित तथा अशिक्षित सभी लोग इसकी उपयोगिताकी बात सुनकर आजकल इसको एक बहुत ही उत्कृष्ट खाद्य मानते हैं। दही मनुष्यको दीर्घायु और बलिष्ठ करता है—यह बात आजकल पूरे विश्वासके साथ चाहे न मानी जाती हो, पर यह तो प्रत्यक्ष देखा जाता है कि पाकयन्त्र सम्बन्धी अनेक पीड़ाओंकी दही एक बहुत ही उत्तम औषध है। जब

मनुष्यकी अवस्था अधिक हो जाती है, तो कई वार वह अकारण ही रोगी हो जाता है। इस समय जो रोग होता है या जो व्याधि उठ खड़ी होती है, उसके प्रतिकारके लिये दहीकी शक्ति बहुत ही आश्चर्यका काम करती है। कई वार विज्ञानियोंने इस शक्तिका आश्चर्यजनक काम अपनी आँखोंसे देखा है। इसके सिवा, रक्तहीनता, पेट फूलना, सुस्ती, सिरदर्द आदि छोटे बड़े नाना प्रकारके रोगोंमें यह बहुत उपकार करता है। पता लगानेसे देखा गया है कि यह सब व्याधियां पाकनलीके उन अनिष्टकर जीवाणु द्वारा उत्पन्न होती हैं। इसलिये यह बात माननी पड़ेगी कि, दहीके स्वास्थ्यकर जीवाणु ही शरीरके शत्रुओंका नाशकर मनुष्यको निष्कण्टक बनाते हैं। इन बातोंसे दही हमारे लिये बहुत ही उत्तम पदार्थ है। दहीमें दूसरा गुण चाहे हो या न हो; पर इसमें जो एक अद्भुत पाचक शक्ति है, केवल उसीके लिये यह वस्तु सब प्रकारके खाद्योंमें प्रधान मानी जा सकती है।

## दहीके विशेष गुण।

यह तो हुई आविष्कारक विज्ञानियोंकी बात। अब हमें दहीके ख़ास २ गुणोंकी तरफ़ भी दृष्टि डाल लेनी चाहिये। उपरोक्त जीवाणुओंकी क्रियाके अनुसार दहीके कितने ही भेद हैं, पर साधारण तौरपर दही पांच प्रकारका होता है। जैसे– मीठा, फीका, कुछ खट्टा, बहुत खट्टा और खट–मिट्ठा। मीठा दही वातपित्तको जीतता, वीर्यको बढ़ाता, शरीरको भारी करता,

मेद और कफ़का नाश करता, रक्तको शोधता, और पचनेपर भी मीठा रहता है। फीका दही दस्तावर, अधिक मूत्र लानेवाला, दाह करनेवाला और त्रिदोषकारक होता है। बहुत खट्टा दही रक्तपित्तके रोगोंको पैदा करता है। इसके खानेसे गलेमें जलन सी होती, दांत खट्टे हो जाते और शरीरके रोंगटे खड़े हो जाते हैं। जो दही अधिक खट्टा नहीं होता वह पित्तरक्त और कफ़को पैदा करता है, पर अग्निको दीपन करनेके लिये यह बडा हितकारी होता है। खट्टा-मिट्ठा दही उपरोक्त दहीसे विशेष गुण नहीं रखता। खट्टे मीठे दहीके जो गुण हैं, वही सम्मिलित गुण इसमें समझने चाहियें।

साधारणतया दही दो प्रकारसे जमाया जाता है। कोई दूधको औटाकर ठंडा होनेपर जमाते हैं, और कहीं कच्चेको ही जमा दिया जाता है। कच्चे दूधका दही अच्छा नहीं होता। इसमें स्वाद और सुगन्ध वैसे नहीं रहते जैसे औटाये दूधके दहीमें रहते हैं। औटाए दूधका दही रुचिकारक, चिकना और बहुत अच्छा होता है। तासीरमें यह ठंडा, हलका, क़ाबिज़ और भूखको चैतन्य करनेवाला माना गया है, पर कभी २ पित्तकारक भी हो जाता है।

दहीका पानी भी कई रोगोंका नाश करता है। इसे बोलचालकी भाषामें "तोड़" कहते हैं। जो दही बहुत अच्छा जम जाता है, उसमें यह पानी नहीं होता, और होता है तो बहुत थोड़ा। यह पानी बड़े कामकी चीज़ है। स्वादमें यह कषैला,

खट्टा, गरम, पित्तनाशक, रुचिकारक, बलबढ़ानेवाला और हलका माना गया है। इसके सेवनसे दस्तकी कब्ज़ी, पीलिया, दमा, तिल्ली, वायुरोग और कफज-बवासीर आदि रोग आराम हो जाते हैं।

दहीकी मलाई भी बहुत फ़ायदेमन्द चीज़ है। यह वीर्यको बढ़ाती, वातका नाश करती, वस्तिको शोधती और पित्तकफको बढ़ाती है। जिनकी अग्नि तेज़ होती है, उनको यह बहुत लाभ दिखाती है। इसमें ज़रा अग्निको नाश करनेकी तासीर है, इसलिये यह मन्दाग्निवालोंको हितकारी नहीं है। यदि मलाईको उतारकर बिना मलाईवाला दही खाया जाय, तो वह दस्तको बांधता है। मलाई दस्तको लाती है। बिना मलाईका दही मलको बांधनेके सिवा, कषैला, वातकर्त्ता, हलका, रुचिकारक और अग्निदीपक होता है। ग्रहणी रोगमें यह बहुत उपकार करता है।

*गायके दहीसे रोगोंका नाश।*

गाय हमारे यहां रत्नोंकी खान है। इसका मूत्रतक ऐसा फ़ायदेमन्द है, जैसा और किसीका नहीं। * गायका दूध सर्वो-

---

* गायका मूत्र कई रोगोंका नाश करता है। यह कटु, उष्णवीर्य और कुछ खारा होता है। इसमें तीक्ष्णगुण मिले हुए हैं, तो भी यह रूखा नहीं है बल्कि स्निग्ध है। अग्निको दीप्त करना और विष वा कीड़ोंका नाश करना इसका पहला काम है। पेटका दर्द, यकृत, प्लीहा, अर्श, गुल्म, कुष्ठ आदि रोगोंमें गोमूत्र जादूकासा काम करता है। यद्यपि कई जीवधारियोंके मूत्र काममें आते हैं

त्तम माना जाता है। जिस प्रकार गायके दूधमें रोगोंको नाश करनेकी शक्ति है, उसी तरह गायके दहीमें भी अन्य प्रकारके दहीसे बहुत गुण मिले हुए हैं।* गायका दही विशेषकरके मीठा, खट्टा, रुचिकारक, पवित्र, अग्निदीपक, हृदयको प्रिय, पुष्टि-कारक और वातनाशक होता है।

आधासीसी ( सिरदर्द ) रोग जो सूर्यके अस्त और उदयके साथ घटता चढ़ता है, इस रोगमें गायका दही बड़ा काम देता है। यदि सूर्योदयके पहले ३-४ रोज़तक गायका दही और भात अपनी प्रकृतिके अनुसार खाया जाय तो आधासीसीमें बहुत फ़ायदा होता है।

यदि किसी मनुष्यको आंवके दस्त होते हों और पेटमें काट चलती हो, तो दही भात खानेसे आराम हो जाता है; परन्तु साथही अगर बुखार और सूजन भी हो, तो भूल कर भी दही नहीं देना चाहिये।

जिन लोगोंके शरीरमें गरमी अधिक रहती है और उस गरमी के कारण प्यास अधिक लगती हो, तो उनको दही का व्यवहार करना चाहिये; इससे उनके शरीरमें शीतलता आ जावेगी और बार २ प्यास लगना बंद हो जावेगा। पर इस बात को भी याद रखना

---

और वैद्यक ग्रन्थोंमें कई प्रकारके मूत्रोंके गुण अलग २ बताये हैं, तथापि गोमूत्र जैसा लाभदायक साबित हुआ है और जितनी तारीफ इसकी वैद्यकमें लिखी है उतनी अन्यान्य मूत्रोंकी नहीं।

* सर्वेषु दधिषु श्रेष्ठं गव्यमेव गुणावहम्,—मदनपाल निघंटु।

चाहिये कि दही अग्निदीपक होनेके कारण एक प्रकारकी गरमी को बढ़ाता है। पेटमें पहुंचकर जो गरमी यह बढ़ाता है, वह प्यास लगानेवाली या दूसरे रोग पैदा करनेवाली नहीं होती।

इसके सिवा, गायके दहीमें और भी कई गुण होते हैं। भैंस बकरी आदिका दही इससे मुक़ाबला नहीं कर सकता। भैंसका दही बहुत चिकना, कफकारक, वातपित्त नाशक, पाकमें मीठा, वृष्य, भारी और रक्तविकार करनेवाला होता है। बकरीका दही उत्तम, ग्राही, हलका, त्रिदोषनाशक और अग्निदीपक होता है। यह श्वास, कास, बवासीर, क्षयरोग और दुर्बलतामें बहुत हितकारी है। इस हिसाबसे बकरीका दही भैंसके दहीसे अधिक गुण रखता है।

### दही खानेके नियम।

दही खानेवालों को सबके पहले तो यह चाहिये कि बाज़ारका दही कभी ख़रीदकर न खायें। बाज़ार के दहीमें जो ख़राबियां होती हैं। वह सभी देखते हैं। इसलिये अपना हित और स्वास्थ्यकी रक्षा करनेवालोंको उत्तम दही काममें लाना चाहिये।

रातमें दही खाना अच्छा नहीं होता। रातमें तो सोते समय दूध पीना चाहिये। यदि दही खानेकी आवश्यकता आ पड़े और जी न माने, तो घी, बूरा, मूंगकीदाल, शहद या आंवलेके साथ खाना चाहिये। खाते समय दहीको गरम कर लेना भी अच्छा होगा। परन्तु रक्त पित्त और कफसम्बन्धी कोई रोग हो, तो दही भूल कर भी नहीं खाना चाहिये।

बूरा मिला हुआ दही श्रेष्ठ होता है। यह प्यास, पित्त, खूनविकार और दाहको नाश करता है। गुड मिला हुआ दही वातनाशक, वृष्य, पुष्टिकारक और पचनेमें भारी होता है। कोई २ दहीमें नमक-मिर्च और जीरा मिलाकर खाते हैं। यह भी पाचक है। यह बातें अपनी २ प्रकृति और इच्छाके अनुसार देखलेनेकी हैं।

अगहन, पौष, माघ और फाल्गुणमें दही खाना उत्तम है। सावन भादोंमें भी यह बहुत लाभ पहुंचाता है। आश्विन, कार्त्तिक, जयेष्ठ, आषाढ़, चैत्र और वैशाख मासमें दही कभी नहीं खाना चाहिये। जैसे अन्यान्य कामोंके नियम हैं, वैसे दही खानेके भी नियम हैं। जो आदमी नियमके विरुद्ध दही खाता है, उसको ज्वर, रक्तविकार, पित्त, विसर्प, कोढ़, पीलिया, भ्रम और भयंकर कामला रोग होजाते हैं। इसलिये नियमका पालन करते हुए दही खाना चाहिये।



# सोलहवां अध्याय

## मक्खन।

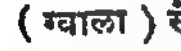




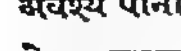
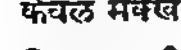


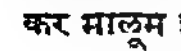










जघ हम घरकी गायों का दूध निकाल कर उसे औटाते और जमाते हैं, तो कभी उसमें मक्खन और मलाई अधिक निकलते हैं और कभी कम। यह देख कर हमें आश्चर्य होता है। हम विचारते हैं कि, कलतो दहीसे मक्खन अधिक निकला था और औटाये दूध पर मलाई भी खूब जमी थी, पर आज ऐसा क्यों न हुआ! गायों को खूराक भी बराबर खिलाई गयी; दूध विधिपूर्वक औटाया और जमाया, फिर क्या कारण है कि किसी दिन मक्खन अधिक निकलता है और किसी दिन कम। इसी प्रकार यदि हम गूजर (ग्वाला) से दूध लेते हों, तो मक्खन या मलाई की ऐसी कमी बेशी देखकर गूजरको बेतरह फटकारते हैं, और वह चाहे सच्चा भी हो तो भी उसकी एक बात नहीं मानते। हमें परम्परागत विश्वासके अनुसार पूरा विश्वास हो जाता है कि, गूजरने दूधमें अवश्य पानी मिलाया है। परन्तु वास्तवमें यह बात नहीं है। केवल मक्खन और मलाईके परिमाणसे दूधके भले बुरे होनेका विचार सही नहीं उतरता। इसका भेद पाठकों को आगे चल कर मालूम होगा।

यदि दूधके कुछ बूंदोंकी दूर्बीनसे परीक्षा की जाय, तो जान पड़ेगा कि दूध जल या तैलकी तरह एक समघन (Homogeneous)वस्तु नहीं है। इसके सर्वांशमें बहुतही छोटी २ कोषाकार की सादी वस्तुएँ इधर उधर डोलती हैं। इन वस्तुओं ने ही दूध को सफेद रंग दे रक्खा है। इन सूक्ष्म वस्तुओंको "घृत-कोष" कहते हैं। इनमेंसे प्रत्येक वस्तु घृतसे पूर्ण है। हम जब दही को बिलो कर मक्खन निकालते हैं, तो दूधके जलीय अंशको छोड़ कर इन्हीं कोषोंको इकट्ठा करते और इन्हीं को तपाकर घी निकालते हैं। इसके सिवा, दूधके व्यवसायी जब पत्थरका कलेजा करके थनदुहे दूधमें पानी मिलाते हैं, तब ये सफ़ेद घृत-कोष बिखर जाते और अपने स्वाभाविक रंग की रक्षा करनेमें असमर्थ हो जाते हैं।

वैज्ञानिक रीतिसे परीक्षा करके देखा गया है कि एक सौ भाग दूधमें कुल साढ़े तीन भाग घृत-कोष रहते हैं। शेष ९६॥ भाग में ९० भाग जल और बाक़ी दूसरी कितनी ही चीज़ें मिली होती हैं। यदि थोड़ेसे दूधको एक पात्रमें रख कर हिलाया जाय, तो घृत-कोष उसके सर्वांशमें फैल जाते हैं; परन्तु उसीको फिर कुछ देरतक अचल दशामें रख दिया जाय, तो कोष एक २ ऊपर उठकर जमने लग जाते हैं। जैसे जलमें तेल मिलाकर उन दोनोंको ख़ूब घोल दिया जाय, तो तेलके छोटे २ कण होकर सारे जलमें परिव्याप्त हो जावेंगे। ठीक इसी प्रकार घृतकोष दूधके सर्वांशमें व्याप्त रहते हैं और किसी प्रकार आलोडित न करनेसे तैल-कणकी

तरह ये दूधके ऊपर आ जमते हैं। इन जमे हुए कोषोंको ही हम अवस्थानुसार कभी मलाई और कभी मक्खन कहते हैं।

अब यह देखना चाहिये कि, यनदुहा दूध होने परभी किसी दूधसे थोड़ा और किसीसे अधिक मक्खन क्यों निकलता है! पाठकोंको मालूम होगा कि सब वस्तुओंका वज़न ठीक समान आयतन (Volume) वाले जलके वज़नकी अपेक्षा लघु होता है, और उनको किसी प्रकार जलमें डुबाई नहीं रखी जातीं। एक लकड़ीको जलमें डुबाकर छोड़दो, उसके नीचेसे धक्का देकर जल उसे ऊपर ले आवेगा। हिसाबसे देखा गया है कि, वस्तु जल में डूबकर जितना जलको हटाती है, उसीके ज़ोरका एक धक्का पाकर वह ऊपर आनेकी चेष्टा करती है। लकड़ी आदिका भार सम-आयतन जलके भारकी अपेक्षा लघु है, इसीसे ये जल पर तैरती रहती हैं और डुबा दी जायँ तो भीतरसे जलका धक्का पाकर ऊपर आ जाती हैं। पर, ये बात गुरु भार वाली वस्तुओंमें नहीं है। धातुके गोले का भार समान आयतन जलके भारकी अपेक्षा गुरु होता है, इस लिये उसके डूबजाने पर जलका धक्का उसको ऊपर लानेमें समर्थ नहीं हो सकता। और इसीसे धातुका गोला ऊपर आनेकी चेष्टा करके भी नहीं आ सकता। इसी प्रकार घृत-कोष, जलीय अंशकी अपेक्षा लघु होनेसे अपने आप दूधके ऊपर आ जाते हैं। इससे अनायास ही अनुमान किया जा सकता है कि घृतकोष अपने जलीय अंशकी अपेक्षा लघु होते हैं।

अब प्रश्न यह हो सकता है कि, घृतकोष यदि अपने जलीय

अंश से लघु है, तो किसी किसी दूध से मक्खन निकालना क्यों असाध्य हो जाता है ? घृत-कोष के अभावको इसका कारण नहीं कहा जा सकता। गौ के विशुद्ध दूधको विलौने से उसमें से प्रायः सैंकड़े पीछे साढ़े तीन भाग घृत-कोष मिलता है। वैज्ञानिक लोग इसका औरही प्रकार से उत्तर देते हैं। वे कहते हैं कि सब दूध के घृत-कोष का आकार सब समय में एकसा नहीं रहता, विशेष २ समय एकही गायके दूध में घृतकोष कभी बड़ा और कभी छोटा हो जाता है। परीक्षा करके देखा गया है कि कोष छोटे होने से वे बड़े कोषकी तरह थोड़े समय में ऊपर आकर नहीं जम सकते। इस लिये छोटे कोष वाले दूध से मक्खन निकालना कठिन हो जाता है। कोष के आयतन के साथ उसके तैरने या नहीं तैरनेका संबंध भली भांति समझ में आजाता है। इसके लिये यहाँ एक गणित की छोटी सी कथा दे देना ठीक होगा।

बात यह है कि किसी गोल वस्तुका व्यास जितना छोटा किया जाय उतनाही उसका पृष्ठ फल (Area of the surface) आयतन ( Volume ) की अपेक्षा बढ़ने लगता है। कल्पना करो कि एक गोले का व्यास चार इंच और दूसरे का दो इंच है। हिसावसे बड़े गोलेका पृष्ठफल प्रायः ५० वर्ग इंच और आयतन ३३॥ घन इंच देखा जाता है ; और ठीक इसी हिसाब से छोटेका पृष्ठफल और आयतन यथाक्रम १२॥ वर्ग इंच वा ४॥ इंच आता है ; इसलिये जान पड़ा कि बड़े गोले का उसके आयतन की अपेक्षा दूने से भी दूसरे

प्रायः तीन गुणा है। इसी प्रकार गोलेका व्यास ज्यों २ छोटा किया जायगा त्यों २ उसका पृष्ठफल आयतन की अपेक्षा और भी बढ़ता जायगा। यह बात हम ऊपर वाले हिसाब से भलीभांति समझ सकते हैं। यही बात दूध के कोषों की है। दूध के छोटे छोटे कोषों के ऊपर आकर तैरने के साथ उनके इस पृष्ठफल का एक विशेष संबंध है। क्योंकि जिस वस्तु का पृष्ठफल उसके आयतन की तुलना में जितना अधिक होता है उतना ही उसमें का जल उसकी चाल रोकने को सुविधा पाता है। यदि एक रांग के पत्रको जल में डाल कर परीक्षा की जाय, तो वह बहुत ही धीरे धीरे नीचे डूबता दीखेगा; परन्तु उसी पत्र को यदि वर्तुलाकार करके जल में डाला जाय तो वह निमेषमात्र में, तले में चलाजायगा। हम पहले ही दिखा चुके हैं कि, दूधके कोष जब छोटे आयतन के होते हैं, तब उनका आयतन जितना कम होता है, उतना कम, पृष्ठफल नहीं होता। इसी लिये रांग-धातु के पत्र को जलके तले में डूबते समय जो बाधा आ पड़ती हैं, ठीक उसी प्रकार की बाधा कोषों को भी ऊपर आने में रोकती है। इसमें किसी प्रकार का सन्देह नही है। छोटे घृत-कोष वाले दूध से मक्खन न निकलने का यही एक कारण है। इसलिये, दूध से मक्खन और मलाई नहीं निकले, तो केवल इसी कारण से उसको अशुद्ध नही गिना जा सकता।

जिस दूधमें बड़े २ घृतकोष रहते हैं, वह मक्खन निकालने

के लिए बड़ा उपयोगी होता है। परन्तु आजकल छोटे कोषंवाले दूधसे भी उपयोगिता दिखाई जाती है। चिकित्सकोंने इस प्रकार के दूध को रोगी का सुपथ्य माना है। इसलिये तुरत समय में छोटे कोषों का दूध न मिलने पर साधारण दूध के बड़े कोषों को तोड़ कर छोटा करने का उपाय निकाला गया है। यहाँ पर हम केवल एक उपाय का थोड़ा सा दिग्दर्शन कराते हैं। इस क्रिया में साधारण दूध को काच की पिचकारी में भर कर फिर उसको पिचकारीके मुंहसे बाहर निकाला जाता है। पिचकारीके मुंहका छेद बहुत छोटा होता है और बड़े ज़ोरके साथ पिचकारी चलाई जाती है। इससे दूध के बड़े २ कोष टूट कर बहुत ही छोटे २ आकार के हो जाते हैं। साधारण दूध के प्रायः १६ हज़ार कोष पास २ इकट्ठे किये जायं, तो उनकी कुल लम्बाई एक इंच होती है; परन्तु पिचकारीके मुंहसे निकले हुए दूधके कोष इतने छोटे होजाते हैं कि, यदि वे २५ हज़ार भी पास २ सजाये जायं, तो भी एक इंच पूरा नहीं होता। परीक्षा करके देखा गया है कि, इसप्रकार के दूध से किसी तरह भी मक्खन नहीं निकाला जा सकता। पृष्ठ-फल की तुलना में इसके छोटे कोषों का आयतन इतना छोटा हो जाता है कि, लघु उपादान [illegible]
अपने जलीय अंश की बाधा को पार कर [illegible]
आ सकता। [illegible] कल अमेरिका और
को, पूर्वोक्त [illegible] कोषों चला
व्यवसाय हो[illegible]

## मक्खनके गुण।

मक्खनको संस्कृत में म्रक्षण, सरज, है यंगवीन, नवनीत नवोद्धृत, मन्थज, दधिसार, कलम्बुट और दधिज कहते हैं। हिन्दी में यह मक्खन—नोनी; बंगला में नुनी माखन, मराठी में लोणी, गुरुमुखीमें मांखण; कनाडीमें बेणो; तैलंगीमें पेन्ना, फ़ारसीमें मसका, अरबीमें ज़ुबद, इंगरेज़ीमें बटर और लैटिनमें बुटिरम (Butyrum) कहलाता है।

सबसे अच्छा मक्खन गाय का होता है। इसमें बहुत गुण होते हैं। गायका मक्खन हितकारी, वृष्य, वर्ण को उत्तम करने वाला, बलदायक, अग्निदीपक, ग्राही, वात, पित्त, रक्तविकार, क्षय, बवासीर, लकवा, और खांसी को नष्ट करता है। बालक और वृद्ध सभीके लिये यह बहुत हितकारी है, जिसमें बालकों के लिये तो यह अमृतके समान है।

भैंसका मक्खन गायके मक्खनसे बहुत थोड़े गुण रखता है। यह बात तथा कफकारक, भारी और देरमें पचनेवाला होता है। वीर्य बढाता है, दाह पित्त तथा परिश्रम को नष्ट करता है और उत्साह वर्द्धक भी है।

दूधसे निकाला हुआ मक्खन नेत्रोंको बहुत हितकारी है। यह रक्त पित्त नाशक, वृष्य, बलदायक, अत्यंत चिकना, मधुर, ग्राही और शीतल होता है। तत्काल का निकाला हुआ मक्खन मधुर, ग्राही, शीतल; हलका और बुद्धिको हितकारी होता है।

के लिए वडा उपयोगी होता है। परन्तु आजकल छोटे कोपवाले दूधसे भी उपयोगिता दिखाई जाती है। चिकित्सकोंने इस प्रकार के दूध को रोगी का सुपथ्य माना है। इसलिये तुरत समय में छोटे कोपों का दूध न मिलने पर साधारण दूध के वड़े कोपों को तोड़ कर छोटा करने का उपाय निकाला गया है। यहाँ पर हम केवल एक उपाय का थोडा सा दिग्दर्शन कराते हैं। इस क्रिया में साधारण दूध को काच की पिचकारी में भर कर फिर उसको पिचकारीके मुंहसे वाहर निकाला जाता है। पिचकारीके मुंहका छेद् वहुत छोटा होता है और वड़े ज़ोरके साथ पिचकारी चलाई जाती है। इससे दूध के वड़े २ कोप टूट कर वहुत ही छोटे २ आकार के हो जाते हैं। साधारण दूध के प्रायः १६ हज़ार कोप पास २ इकट्ठे किये जायं, तो उनकी कुल लम्बाई एक इंच होती है; परन्तु पिचकारीके मुंहसे निकले हुए दूधके कोष इतने छोटे होजाते हैं कि, यदि वे २५ हज़ार भी पास २ सजाये जायं, तौ भी एक इंच पूरा नहीं होता। परीक्षा करके देखा गया है कि, इसप्रकार के दूध से किसी तरह भी मक्खन नहीं निकाला जा सकता। पृष्ठ-फल की तुलना में इसके छोटे कोपों का आयतन इतना छोटा हो जाता है कि, लघु उपादान से वना होनेपर भी वह अपने जलीय अंश की वाधा को पार कर किसी प्रकार ऊपर नहीं आ सकता। आज कल अमेरिका और यूरोप में, साधारण दूध को, पूर्वोक्त रीति से छोटे कोपों वला वनाने का एक छोटा सा व्यवसाय हो गया है।

तरह मक्खन रखने और तपानेके बर्त्तन भी खूब स्वच्छ होने चाहियें।

दूध, दही, मट्ठा, मक्खन और घी में कई गुण हैं। उन सब गुणों का बखान करना कोई मामूली बात नही है। परीक्षा करने से इनके बहुत से गुणों का पता मिल जाता है। तारीफ़ पढ़ लेना और परीक्षा करके तारीफ़ साबित करना दो बातें हैं। दूध, दही, मट्ठा, मक्खन और घी हमारे लिये अमृतके समान हैं। आज तक दूध पर तो कई लेख निकल चुके हैं। फिर भी हमने नवीन विषय को लेकर इनकी बातें इसलिये छेड़ी हैं कि प्रत्येक मनुष्य इन में और भी ज्ञान प्राप्त करें और परीक्षा करके अपनी अनुभव-सिद्धि से लाभ उठावे।



इसीमें यदि छाछका कुछ अंश रह जाय, तो यह खट्टा और कुछ कसैला हो जाता है।

इस बातको खूब याद रखना चाहिये कि जहांतक बन पड़े ताज़ा मक्खन काम में लाया जाय। एक रात रहा मक्खन बासी हो जाता है। ऐसे मक्खन को कभी नहीं खाना चाहिये। क्योंकि बासी मक्खन खारा, चरपरा और खट्टा होजाने से वमन, बवासीर, और कोढ़ पैदा करता है; और कफकारी, भारी तथा मेद्को बढ़ानेवाला बन जाता है। वही मक्खन सबसे श्रेष्ठ है, जो हालही में दहीको बिलोकर निकाला गया हो। ऐसा मक्खन बड़े २ प्रयोगों में अच्छा काम दिखाता है।

मक्खन की उत्तमता दूध—दही की उत्तमता पर निर्भर है। जैसा दूध दही होगा, वैसा ही मक्खन निकलेगा। मक्खन निकालनेमें भी बड़ी चतुराई की ज़रूरत है। किस ढंगसे बिलौने पर मक्खन अधिक निकलेगा, किस समय ठंडा और किस समय गरम पानी देना चाहिये, इन बातोंसे, बिलौने वाला पूरा वाक़िफ़ हो। बिलौने के बर्त्तनकी शुद्धता, अरईकी शुद्धता और स्थान की सफ़ाई पर भी पूरा ध्यान रहना चाहिये।

अरई में बिलौने की रस्सी ऐसी न हो, जिसके रेशे धीरे २ धीरे दहीमें गिरते रहें। आज कल दही बिलौनेकी जो कलें आती हैं, वे बहुत अच्छी होती हैं। ऐसी कलोंसे मक्खन सहजहीमें निकल आता है। यह बात हमने बार बार कही है कि, दूध दहीके बर्त्तन हमेशा साफ़ रहने चाहियें। इसी

खट्टी नारंगीके गुण।

खट्टेके भीतर जो अम्ल रस रहता है, वह हाज़मे को बड़ी सहायता देता है, और इसमें जो मीठा रस होता है; वह सहज ही शरीरमें ठहर कर हज़म नहीं होता। शर्करा या द्रावक कार्बो-हाइड्रेडके सिवा इस रसमें प्रति सैकड़ा एक भाग प्रोटीन साम-ग्रीका रहता है। इसलिये एक प्रकारसे यह रस मुखरोचक, स्वादु और पुष्टिकर है।

रोगमें भी यह रस सुपथ्य है। जब ज्वर होता है, तो रोगी का शरीर दूपित विषाक्त होकर जलने लगता है, और उस विषको निकालनेके लिये शरीरके कोष और यंत्र प्राणपणसे लड़ते रहते हैं। उस समय रोगी दिनमें ४ सेर या ५ सेर जल पी जाता है। इस जलसे उसके ज्वरकी दाह मिटती है और मूत्र या पसीने के द्वारा विष निकालनेमें यह जल बड़ी सहायता देता है। खट्टे के रसमें जो जल होता है, वह निर्मल, साफ़ और जीवाणु रहित जलके समान है। इस रसकी अम्लता तृष्णाको मिटाती है, पीनेमें रुचि उपजाती है, और सुगन्धित होनेके कारण इसको अधिक पीनेमें भी शरीर घृणा नहीं करता। जिस विषकी क्रियासे ज्वरके रोगीका शरीर जलता रहता है, वह विष उसकी जीभ पर ऐसा जम जाता है कि, उस समय उसको जल या भोजन मुंहमें रखना भी नहीं रुचता। ऐसे समय यदि खट्टेका रस रोगीको दिया जाय, तो इसकी खटाई और सुगन्ध, जीभके विषको दूर करके मुंहमें रुचि उपजाती है।

इस बात को सब जानते हैं कि, ज्वरके रोगीका पाचन-रस

# सत्रहवां अध्याय

## खट्टी नारंगीके गुण ।



ना रंगीकी तरह जो खट्टा फल होता है, उसे हम खट्टा वा खट्टी नारंगी कहते हैं। इस फलके पेड़को जब मीठे रसादि पिला दिये जाते हैं, तो वही फल मीठा आने लगता है और मीठी नारंगी कहलाता है।

इस खट्टे फलको हम, खट्टा होनेके कारण कभी नहीं खाते, और खाते हैं, तो कभी २ नमूनेके तौर पर। परन्तु इसके गुणकी तरफ़ देखा जाय, तो यह हमारे लिये बहुत अच्छी चीज़ है। खाद्य के तौर पर यह जितना पुष्टिकर और स्वास्थ्यप्रद है, उतना हम इस के गुणोंको नहीं जानते। अमेरिकाके प्रसिद्ध डाक्टर मि० केलग ने इस फलके बहुतसे गुणोंकी परीक्षा की है, और परीक्षा का फल उन्होंने "गुड हेल्थ" नामक पत्रमें छपवाया है।

यदि एक गिलास मट्ठेके साथ इस खट्टे फलके रसकी तुलना की जाय, तो इसके रसमें मट्ठेकी अपेक्षा प्रति सैकड़ा २५ भाग अधिक सामग्री पुष्टिकर पाई जाती है। एक गिलास खट्टेका रस पौन गिलास साफ़ दूधके समान पुष्टिकर है। जहाँ पर साफ़ दूधका मिलना कठिन हो, वहाँ इस रसको पीकर दूधका अभाव मिटाया जा सकता है।

खट्टेके भीतर जो अम्ल रस रहता है, वह हाज़मे को बड़ी सहायता देता है, और इसमें जो मीठा रस होता है; वह सहज ही शरीरमें ठहर कर हज़म नहीं होता। शर्करा वा द्रावक कार्बोहाइड्रेडके सिवा इस रसमें प्रति सैकड़ा एक भाग प्रोटीन सामग्रीका रहता है। इसलिये एक प्रकारसे यह रस मुखरोचक, स्वादु और पुष्टिकर है।

रोगमें भी यह रस सुपथ्य है। जब ज्वर होता है, तो रोगी का शरीर दूषित विषाक्त होकर जलने लगता है, और उस विषको निकालनेके लिये शरीरके कोष और यंत्र प्राणपणसे लड़ते रहते हैं। उस समय रोगी दिनमें ४ सेर या ५ सेर जल पी जाता है। इस जलसे उसके ज्वरकी दाह मिटती है और मूत्र या पसीने के द्वारा विष निकालनेमें यह जल बड़ी सहायता देता है। खट्टे के रसमें जो जल होता है, वह निर्मल, साफ़ और जीवाणु रहित जलके समान है। इस रसकी अम्लता तृष्णाको मिटाती है, पीनेमें रुचि उपजाती है, और सुगन्धित होनेके कारण इसको अधिक पीनेमें भी शरीर घृणा नहीं करता। जिस विषकी क्रियासे ज्वरके रोगीका शरीर जलता रहता है, वह विष उसकी जीभ पर ऐसा जम जाता है कि, उस समय उसको जल वा भोजन मुंहमें रखना भी नहीं रुचता। ऐसे समय यदि खट्टेका रस रोगीको दिया जाय, तो इसकी खटाई और सुगन्ध, जीभके विषको दूर करके मुंहमें रुचि उपजाती हैं।

इस बात को सब जानते हैं कि, ज्वरके रोगीका पाचन-रस

# सत्रहवां अध्याय

## खट्टी नारंगीके गुण ।


नारंगीकी तरह जो खट्टा फल होता है, उसे हम खट्टा या खट्टी नारंगी कहते हैं। इस फलके पेड़को जब मीठे रसादि पिला दिये जाते हैं, तो वही फल मीठा आने लगता है और मीठी नारंगी कहलाता है।

इस खट्टे फलको हम, खट्टा होनेके कारण कभी नहीं खाते, और खाते हैं, तो कभी २ नमूनेके तौर पर। परन्तु इसके गुणकी तरफ़ देखा जाय, तो यह हमारे लिये बहुत अच्छी चीज़ है। खाद्य के तौर पर यह जितना पुष्टिकर और स्वास्थ्यप्रद है, उतना हम इस के गुणोंको नही जानते। अमेरिकाके प्रसिद्ध डाक्टर मि० केलग ने इस फलके बहुतसे गुणोंकी परीक्षा की है, और परीक्षा का फल उन्होंने "गुड हेल्थ" नामक पत्रमें छपवाया है।

यदि एक गिलास मट्ठे के साथ इस खट्टे फलके रसकी तुलना की जाय, तो इसके रसमें मट्ठे की अपेक्षा प्रति सैकड़ा २५ भाग अधिक सामग्री पुष्टिकर पाई जाती है। एक गिलास खट्टेका रस पौन गिलास साफ़ दूधके समान पुष्टिकर है। जहाँ पर साफ़ दूधका मिलना कठिन हो, वहाँ इस रसको पीकर दूधका अभाव मिटाया जा सकता है।

खट्टेके रसकी खटाई और शर्करा, पाकाशयकी ग्रन्थियोंको उत्तेजित करके पाकरसको झराती (टपकाती) हैं, जिससे परिपाकमें बड़ी सुविधा होती है। इसलिये खट्टे का रस क्षुधा बढ़ाने वाला भी है।

खाली पेटमें यदि एक गिलास खट्टेका रस पी लिया जाय, तो वह चमत्कारी जुलाबका काम करता है। रातको सोनेसे पहले और प्रातःकाल उठकर एक २ गिलास खट्टेका रस पिया जाय, तो कोष्ठकी कठिनता दूर होती है, शरीरमें स्फूर्तिका संचार होता है, हाज़मेकी शक्ति बढ़ती है, भूख लगती है, शरीर पुष्ट होता है और कान्ति बढ़ती है। इसलिये अपनी २ प्रकृतिके अनुसार स्वास्थ्य बढ़ानेके लिये इसका प्रतिदिन सेवन एक बार तो अवश्य करना चाहिये।



और हाजमी शक्ति बहुत कम होजाते हैं। उस समय उसके शरीर में किसी खाद्य पदार्थको ग्रहण करनेकी शक्ति नहीं रहती। ऐसे समय यदि उसको थोड़ासा भी अहार दिया जाय तो, वमन होजाता है। परन्तु खट्टे के रससे ये बातें नहीं होतीं। इस रसमें एलब्यूमेन नहीं होनेके कारण यह पेटमें जाकर पचता नहीं है, और शर्करा वा प्रोटीन जो इसमें थोड़े होते हैं, वे ऐसी द्रव अवस्थामें रहते हैं कि, उनके शरीरमें शोषित होते समय, पाक-क्रिया की सहायताकी आवश्यकता नहीं पड़ती। इन बातोंसे ज्वरमें खट्टेका रस सर्वोत्तम पथ्य है।

जब छोटे २ दुध-मुंहे बच्चे अपनी माताके स्तनोंका दूध पूरी मात्रामें नहीं पाते, या वह दूध उनको नीरोग या पुष्ट नहीं बनाता, तो वे कृश और दुर्बल हो जाते हैं। ऐसी अवस्थामें उनके लिये खट्टेका रस अमृतके समान है। यह रस उनकी बढ़तीमें सहायता देता है। और केवल मनुष्योंके बच्चोंके लिये ही यह रस सुपथ्य नहीं है, बल्कि पशुपक्षियोंके लिये भी यह परम रसायन है।

विज्ञानका मत है कि, मोटे चावलका भात, गेहूंकी रोटी, आलू और मांसमें, उपयुक्त परिमाणके वाइटामिन या संजीवन नहीं होते। इसलिये जो मनुष्य खाली इन्हींको खाता है, उसकी पुष्टिमें बड़ा व्याघात पहुंचता है। परन्तु वह यदि अपने अहारमें खट्टेको भी शामिल कर ले, तो उसका यह अभाव दूर हो जाता है और दिन पर दिन उसकी पुष्टता बढ़ती जाती है।



हृदय अर्थात् रक्तकोष ।

क्रियाकी यह गति सर्वदा अपने आपही होती रहती है! पर, शुद्ध वायुसे इसको अच्छी सहायता मिलती है, और साथ ही रक्त भी सुधरता है। रक्तमें आलब्यूमिन ( Albumin ) नामक एक चीज़ प्रधान होती है, जो नाइट्रोजन, कार्बन, हाइड्रोज़न और आक्सिजन के मेलसे बनती है। यह चीज़ जलके साथ मिल कर रक्त बनाती है। स्वच्छ और शुद्ध भोजनमें जितना अधिक अंश आलब्यूमिन का होगा, उतना ही अधिक और स्वच्छ रक्त बनेगा। विशुद्ध रक्त वह है, जिसका रंग लाल विरमिटीके रंग के समान होता है।

स्थान

शरीर को भीतरी बनावट बड़ी ही अद्भुत प्रकारकी है। सर्वाधार श्रीजगदीश्वर ने इसे बडे ही विचित्र ढंगसे रचा है। इसमें कितनी ही छोटी बड़ी नालियाँ इधर उधर फैली हुई हैं, और वे सब अपने २ काममें तत्पर हैं। इसी प्रकार सिरके पीछेसे एक नल नीचेको गया है, जिसमें नाक और मुंहसे एक २ नाड़ी आकर मिली हैं। यह नल, छातीकी गुफाके पास आकर, बाईं तरफ़की चौथी और पाँचवीं पसलियोंके नीचे वाले भागमें, एक थैली से जुड़ा है; जिसे हृदय ( Heart ) कहते हैं। इसी हृदयके वाम भागमें रुधिरका कोप रहता है। उपरोक्त कथनानुसार रुधिर पाँच दिन-रातमें पक कर इसी स्थानमें पीछा लौट आता है हृदयका आकार थैली अथवा मनुष्यके हाथकी बाँधी हुई मुट्ठी जैसा होता है, और यह एक अद्भुत गुप्त शक्ति द्वारा पकवा

सिकुड़ता और एकबार बढ़ता रहता है। आरोग्यताकी दशामें इसकी एक दिनमें, ८२१९२ बार धड़कन होती है। ठीक लुहारकी धौंकनीकी तरह ये भीतरकी ख़राब वायुको बाहर निकालता और बाहरकी वायुको भीतर ले जाता है। हृदयके इसी कामसे सांस आती जाती है। हृदयका ऊपरी भाग पोला और नीचेका भाग तंग अथवा बिन्दु जैसा होता है, जिसे टोंच (Apex) कहते हैं। यह टोंच पाँचवीं और छठी पसलियोंके बीचमें आई हुई है। जिस समय रक्त हृदयमेंसे मोटी धमनियोंमें जाता है, उस समय हृदयको ज़ोरके साथ दबाव लगाना पड़ता है; इस दबावके धक्केसे यह टोंच हिला करती है। इसलिये यदि पाँचवीं और छठी पसलियोंपर हाथ रक्खा जाय, तो धड़कन मालूम होती है। यह धड़कन सिर्फ़ टोंचका हिलना है; और जब तक यह हिला करती है, तबतक प्राणी जीवित रहता है, इसके बंद होते ही मर जाता है।

प्रवाह

हृदय हमारे शरीरका प्रधान भाग है। इसमें से व्यानवायु (Crculating air)*की उत्तेजनासे शुद्ध रक्त निकलकर शरीरके समस्त छोटे बड़े भागोंमें जाता है। हृदयके दोनों तरफ़ दो भाग होते हैं; एक तो भीतर दाहिनी तरफ़ और दूसरा बाहर बाईं तरफ़। इन प्रत्येक भागोंके दो दो विभाग होते हैं; जिनके अलग २ नाम हैं। बाईं तरफ़के नीचे वाले भागमेंसे एक मोटी धमनी के द्वारा रक्त बाहर निकलता है। उस समय इस धमनीमेंसे

*यह वायु ख़ास तौर पर रक्त ही में रहती है।

यह भूरा रक्त फेफड़ेमें जाता है। वैद्यकमें इन नाड़ियोंको "फेफड़े में जानेवाली धमनियाँ" कहते हैं। ये धमनियाँ मैल वाले भूरे रक्तको लेजानेके सिवा, स्वच्छ लाल रक्तको भी शरीरके अलग २ भागोंमें ले जाया करती हैं। इनके द्वारा फेफड़ेमें आया हुआ भूरा रक्त, श्वासमें आई हुई वायुका आक्सिजन शोष लेता है, और बदलेमें उसको अपने मैले पदार्थ देकर शुद्ध लाल रंगका होजाता है। इसके बाद यह रक्त फेफड़ेकी छोटी २ नलियोंमें फैल कर शुद्ध होता है, और फिर वहाँसे आने वाली बड़ी २ चार नाड़ियों के मार्ग द्वारा हृदयके ऊपरी स्थानमें पीछा लौट जाता है। इसके थोड़ी देर बाद, वहाँसे नीचे के भागमें आकर सारे शरीरमें फिरता है। इस प्रकार ठीक नलके जलकी तरह इसकी गति सर्वदा अपने आप होती रहती है। जैसे नदी-नालेका मैला जल आगे बहकर या किसी गहरे दरियामें गिरकर स्वच्छ हो जाता है, वैसेही यह भी स्थान २ में फिर कर शुद्ध होता रहता है। इसकी विचित्र गतिको कोई रोकने वाला नहीं है।

### रक्त नालियोंकापरिचय

केश नालियाँ (Capilliares)–यह नालियाँ पतले बालकी तरह बहुतही बारीक, और अंदाज़न एक इंच जगहमें समा सकने वाली बारीक वस्तुके दो हज़ारवें भागके समान होती हैं। छोटीसे छोटी धमनियाँ वा शिराओं की दीवारों की अपेक्षा इनकी दीवारें बहुत ही कोमल तहकी बनी होती हैं। इन नालियोंके मार्गसे, शरीरके प्रत्येक तन्तु जालसे निरुपयोगी हुए पदार्थ, उन

दो धमनियां होजाती हैं; उनमेंसे एक तो, रक्त लेकर शरीरके दाहिने भागकी तरफ़ और दूसरी बाएँ भागकी तरफ चली जाती हैं। आगे चलकर उनमेंसे और भी बहुतसी छोटी २ नसें निकलती हैं, जिन्हें केशनालियाँ (Capilliares) कहते हैं। ये नालियाँ शरीरके अलग २ अवयवोंमें घुसकर उनके सारे पदार्थों में फैलजाती हैं। इस प्रकार शरीरके छोटे से भी छोटे प्रत्येक भागमें शुद्ध रक्त पहुँचता है। यह शुद्ध रक्त प्रत्येक भागकी पृथक् २ चलती हुई क्रियाओंको बल देता है; इसलिये क्रियाओंमें लगे हुए अवयव अपनी २ आवश्यकतानुसार सामग्री रक्तसे ले लेते हैं, और बदलेमें उसको क्रियाओंका छाँटा हुआ मैला पदार्थ दे देते हैं। इस पदार्थके आने से रक्तका लाल रंग बदल कर भूरा रंग हो जाता है, और जिन केशनालियोंके मार्गसे वह वहाँ पहुँचता है, उन्हींके द्वारा आगे बढ़ता है। फिर ये सारी केशनालियाँ इकट्ठी होकर छोटी छोटी शिराएँ बन जाती हैं; और जैसे पहले शुद्ध रक्तकी नालियाँ अवयवोंमें घुसती हैं, वैसे ही ये भी उनमेंसे बाहर निकलती हैं।

इसके बाद, ये सारी शिराएँ धीरे २ इकट्ठी होकर हृदय की तरफ़ आती हैं, और जब बिलकुल हृदयके पास आ जाती हैं, तो उन सबकी सिर्फ़ दो मोटी शिराएँ बन जाती हैं। उनमेंसे एक तो, सिरकी तरफ़से और दूसरी, शरीरके अन्यान्य नीचे वाले भागोंकी तरफ़से भूरा रक्त लाकर, हृदयके भीतर वाले दाहिने भागके ऊपरी भागमें खाली होती हैं; और वहाँसे उस तरफ़के नीचेवाले भागमें चली जाती हैं, जहाँसे चार नाड़ियोंके मार्ग द्वारा

यह भूरा रक्त फेफड़ेमें जाता है। वैद्यकमें इन नाड़ियोंको "फेफड़े में जानेवाली धमनियाँ" कहते हैं। ये धमनियाँ मैल वाले भूरे रक्तको लेजानेके सिवा, स्वच्छ लाल रक्तको भी शरीरके अलग २ भागोंमें ले जाया करती हैं। इनके द्वारा फेफड़ेमें आया हुआ भूरा रक्त, श्वासमें आई हुई वायुका आक्सिजन शोप लेता है, और वदलेमें उसको अपने मैले पदार्थ देकर शुद्ध लाल रंगका होजाता है। इसके बाद यह रक्त फेफड़ेकी छोटी २ नलियोंमें फैल कर शुद्ध होता है, और फिर वहाँसे आने वाली बड़ी २ चार नाड़ियों के मार्ग द्वारा हृदयके ऊपरी स्थानमें पीछा लौट जाता है। इसके थोड़ी देर बाद, वहाँसे नीचे के भागमें आकर सारे शरीरमें फिरता है। इस प्रकार ठीक नलके जलकी तरह इसकी गति सर्वदा अपने आप होती रहती है। जैसे नदी-नालेका मैला जल आगे बहकर या किसी गहरे दरियामें गिरकर स्वच्छ हो जाता है, वैसेही यह भी स्थान २ में फिर कर शुद्ध होता रहता है। इसकी विचित्र गतिको कोई रोकने वाला नहीं है।

### रक्त नालियोंकापरिचय

केश नालियाँ (Capilliares)–यह नालियाँ पतले बालकी तरह बहुतही बारीक, और अंदाज़न एक इंच जगहमें समा सकने वाली बारीक वस्तुके दो हज़ारवें भागके समान होती हैं। छोटीसे छोटी धमनियाँ वा शिराओंकी दीवारों की अपेक्षा इनकी दीवारें बहुत ही कोमल तहकी बनी होती हैं। इन नालियोंके मार्गसे, शरीरके प्रत्येक तन्तु जालसे निरुपयोगी हुए पदार्थ, उन

अवयवोंके पास ले जाये जाते हैं, जो हमेशा अशुद्ध पदार्थोंको शरीरसे बाहर निकाला करते हैं। इन अवयवों की दीवारें इतनी कोमल और पतली होती हैं, कि उनमें पदार्थोंका रूप ज्योंका त्यों दीखा करता है। इसी प्रकार केशनालियोंकी दीवारोंमें भी पदार्थ प्रत्यक्ष दीखा करते हैं।

धमनियाँ (Arteries)—यह धमनियाँ रबडकी नलियों जैसी होती हैं, और इनकी दीवारें स्नायु-जालसे बनी होती हैं। केशनालियोंकी अपेक्षा यह मोटी होनेके सिवा, इनकी दीवारें भी विशेष मोटी और मज़बूत होती हैं। इतना ही नहीं, बल्कि यह स्थितिस्थापक पदार्थकी बनी होती हैं। इन्हींके मार्गसे रक्त एक स्थानसे दूसरे स्थानमें जाता है। इनमें, स्नायु (Muscle) का तह होनेके कारण सिकुड़नेकी शक्ति होती है, इसलिये ये एक जगह सिकुड़कर रक्तको आगे ढकेलती हैं; और वहांसे सिकुडकर फिर आगे आगे ढकेलती हैं। इसी प्रकार रक्त धीरे २ धमनियोंमें आगे ढकेला जाता है। ऊपर कहा जा चुका है, कि रक्त हृदयसे निकलकर मोटी नलियोंमें होता हुआ छोटी २ नलियोंमें जाता है, और पीछा लौटते समय छोटी नलियोंमेंसे बड़ी नलियोंमें आता है। इसके इस आने जानेसे शिराओंके भीतर की दीवारों पर जितना दबाव पड़ता है, उतना धमनियोंकी दीवारों पर नहीं पडता। क्योंकि, शिराओंकी अपेक्षा ये [illegible] और स्थिति स्थापक पदार्थों की बनी होती हैं, कि [illegible] विशेष दबावसे इनको हानि नहीं पहुँचती।

शिराएँ (Veins)—धमनियोंकी अपेक्षा इनकी बनावटमें एक विशेष प्रकारकी चतुराई है। इनकी दीवारें केशनालियोंकी दीवारोंसे बहुत ही मज़बूत और मोटी होती हैं। परन्तु, उनमें स्नायु अथवा स्थिति स्थापक पदार्थका तह नहीं होता। इसलिये, धमनियाँ और इनकी बनावटमें जो अन्तर रक्खा गया है, वह निःसन्देह एक अद्भुत चतुराईका नमूना है। शिराओंके मार्गसे रक्त हमेशा हृदयकी तरफ़ जाता रहता है। पर, उसके पीछा न लौट सकनेके लिये इन नसोंकी भीतरी दीवारोंसे छोटी २ थैलियाँ लगी रहती हैं। यह थैलियाँ (Valves) पतली चमड़ीकी बनी होती हैं, और शिराओंकी दीवारों के साथ स्नायु-तारसे बँधी होती है। इनके मुंह हृदयके तरफ़ही अर्थात् जिधरको रक्त जाता है उधर ही होते हैं। इसलिये यदि रक्त पीछा लौटे तो उन थैलियोंमें भर जाता है, और रक्त भर जानेसे वे थैलियाँ फूलकर मार्ग बंद कर देती हैं।

इनकी अपेक्षा धमनियाँ विशेष मज़बूत होती हैं। इसका कारण यह है, कि धमनियोंमें रक्तका वेग अधिक होनेके कारण उनके फटजानेका डर रहता है; और जितनी हानि उनके फटजानेसे होती है, उतनी इनके (शिराओं) फटनेसे नहीं होती। इसलिये इनकी अपेक्षा धमनियाँ ऐसी मज़बूत होती हैं, कि उनको चाहे जहाँ निर्भय स्थानमें रख दी जाती हैं। किसी २ भागमें तो इन्हें अस्थियोंमेंसे मार्ग दिया गया है। इसी प्रकार अंगुलियोंमें भी, टूट जानेके भयसे अस्थियोंके खड्डे होते हैं, और उनमें धमनियाँ

बिठाई गई हैं; जिससे अंगुलियोंको सहज ही में कुछ हानि नहीं पहुँचती ।

रक्तका कार्य्य

रक्त हमारे शरीरके प्रत्येक भागोंकी कमीको हमेशा पूरी करता रहता है । जैसे, हृदयके धड़कने, फेफड़ोंके सिकुड़ने, उठने-बैठने और चलने-फिरने आदिसे जो हमारे शरीरका निरन्तर क्षय होता रहता है, उसे पवित्र भोजन और शुद्ध रक्त ही पूरा करते हैं । रक्त ही की सहायतासे यकृत् आदि सारे यंत्र अपना २ काम करते रहते हैं । शरीरकी अग्नि जो शरीरको सदैव जलाया करती है, उसमें रक्त ही अधिक जला करता है । पर, जितना जल कर नष्ट होता है, उससे कुछ अधिक थोड़े ही समयमें बन जाता है । इसी प्रकार भीतरी अग्निके जलनेसे शरीरमें जो २ अभाव होते हैं, उन सबकी पूर्ति रक्तही किया करता है, इस लिये शरीरको कुछ भी कष्ट मालूम नहीं होता । यदि रक्त न हो, तो हमारा शरीर एक ही दिनमें जलकर नष्ट हो जाय ।

शरीरके सारे रक्तका आक्सिजन (Oxy-gen) हमेशा जलकर कारबन (Carbon) बनता रहता है । फिर वह कारबन कभी नहीं जलता; और न उससे गरमी ही उत्पन्न होती है । इसलिये रक्तमें यदि आक्सिजनका मेल न होवे, तो वह सारा जलकर नष्ट हो जाय; और साथ ही साथ मनुष्यका जीवन भी समाप्त हो जाय । दीर्घ-श्वास ( Deep breath ) लेते समय फेफड़ों (Lungs) के द्वारा जो वायु हम बाहरसे खींचते हैं, उसके साथ

आक्सिजन फेफड़ेमें घूमकर रक्तमें मिल जाता है; जिससे वह रक्त शरीरकी सब नसोंमें दौड़ता है। किन्तु, मार्गमें उसका सब आक्सिजन जल कर कारबन बन जाता है; इसलिये फेफड़ेमें वापिस लौटते समय उसमें बिलकुल भी आक्सिजन नहीं रहता। पर, सांस निकालते समय फेफड़े, रक्तका कारबन बाहर निकाल देते हैं। इस प्रकार रक्त अपने कर्त्तव्योंका पालन करता हुआ त्वचाको रंगत देता है, बालोंको उपजाता है, हृदयकी गति वा नेत्रोंकी ज्योतिको बढ़ाता है, और शरीरके सारे अशुद्ध रसों को शोष कर उसे नीरोग रखता है। वास्तवमें रक्त, प्राणी मात्र का जीवन है।



# उन्नीसवां अध्याय



## ज्योतिर्विज्ञानमें फोटोग्राफी



आजकल यंत्रके व्यवहारसे कितने ही कठिन काम सहज हो गये हैं। कृषि, शिल्प, वाणिज्य व्यवसाय और युद्ध आदिमें अब यंत्रोंसे ही अधिक सहायता ली जाती है। विज्ञान भी यंत्रोंका कई प्रकारसे ऋणी है। दुर्बीन, सूक्ष्मदर्शक और स्पेक्ट्रोस्कोप आदि यंत्रोंने विज्ञानके गूढ़ार्थों की जो मीमांसा की है, वह वास्तवमें अकथनीय है। प्रायः डेढ़ सौ वर्ष पहले मि० हार्शल साहबने जब अपने हाथोंसे बनाये दुर्बीनके द्वारा यूरेनस ग्रहका आविष्कार किया था, तब ज्योतिषशास्त्र जैसी विद्याके लिये यंत्र-व्यवहारकी उपयोगिता देखकर विज्ञानी विस्मित हो गये थे। परन्तु अब विस्मित होनेका कोई कारण नहीं रहा। जिस दिन फ्रांसके ज्योतिषी मि० लेवेरियर और अंग्रेज विज्ञानी मि० आडम्सने, केवल गणितकी सहायतासे नेपच्युन ग्रहका आविष्कार किया था, उसी दिनसे आजतक केवल गणितके हिसाबसे ज्योतिषका कोई आविष्कार नही हुआ। अब आविष्कर्त्ता लोग यंत्रको ही गवेषणाका प्रधान अवलम्बन समझने लग गये हैं।

कई प्रकारके ज्योतिष-यंत्रोंमें आजकल फोटोग्राफीके कैमरे का बड़ा ही आदर है। इस छोटेसे यंत्रसे गत ३० वर्षों में ज्योतिषके जो २ आविष्कार हुए हैं, यहां हम उन्हींका संक्षिप्त वर्णन पाठकोंको सुनावेंगे। पहले फोटोग्राफीका यंत्र केवल चित्र उतारनेके काममें आता था, और उस समय किसीको कल्पना भी नहीं हुई थी कि, यह यंत्र विज्ञानियोंके हाथमें पड़कर कभी गुप्त नक्षत्रोंका परिचय दे सकेगा। पर, अब ये सारी बातें इन यंत्रोंसे सहज हो गई हैं।

मनुष्योंकी आंखें खूब सुन्दर होने पर भी विधाताने उनको सर्वाङ्गसुन्दर नहीं बनाई। क्योंकि, बहुत दूरके नक्षत्रोंका क्षीण प्रकाश वे नहीं देख सकतीं। परन्तु चित्र उतारनेके काचमें यह दोष नहीं है। इस काचपर यदि रसायनिक प्रलेप कर दिया जाय, तो प्रकाश इसपर बहुत देरतक पड़ते रहनेसे इसके ऊपर दीखने वाले नक्षत्रोंका चित्र आपसे आप अंकित हो जावेगा। इस बात को सब जानते हैं कि, किसी भी स्पष्ट वस्तुकी तरफ़ बराबर देखते रहनेसे मनुष्योंकी आंखोंमें चकाचौंध आ जाती है और फिर उस वस्तुको आंखोंसे नहीं देखा जाता। पर, ये बात फोटोग्राफ़ीके काचमें नहीं है। यह काच कभी नहीं थकता। इसको लगातार रातमें, एक क्षण नक्षत्रकी तरफ़ रक्खा जाय, तो नक्षत्रका सब वर्णन इसके ऊपरके चित्रमें साफ़ २ अंकित हो जावेगा। आज पचास वर्ष हुए, आकाशके अनुसंधानमें वैज्ञानिकोंने फोटोग्राफ़के यंत्रकी सब उपयोगिता समझ ली थी,

और कुछ दिनोंके बाद ही वे इस यंत्रसे नक्षत्रोंके चित्र खींचने लग गये थे। परिणाम यह हुआ कि केवल चित्रके देखनेसे नाना भांतिके नक्षत्रोंका पता लग गया। थोड़े ही दिनोंमें जो धूमकेतु, निहारिका और छोटाग्रह (Asteroids) आदि नक्षत्रोंका पता लग गया, उनकी संख्या कम नहीं है।

१८६० ई० में, स्पेनमें जो पूर्णग्रास सूर्यग्रहण हुआ था, उसका पता लगानेके लिये पहले फोटोग्राफ़ यंत्रका व्यवहार किया गया था। पूर्णग्रहणमें जब सूर्यमंडल, चन्द्रमासे सारा ढक गया, तब चन्द्रमाके काले बिम्बके चारों ओरसे लाल शिखाके रूपमें एक प्रकारका प्रकाश बाहर निकलने लगा। इसको देखकर विज्ञानियोंने अनुमान किया कि, यह प्रकाश चन्द्रमण्डलसे निकला है; पर वे अपना अनुमान किसी प्रमाणसे पुष्ट नहीं कर सके; परन्तु प्रयत्न उनका बराबर जारी रहा। इसी समय दो ज्योतिषियोंने स्पेनके इस सूर्यग्रहणका चित्र खींचकर विषयकी मीमांसा करनेका बहुत आयोजन किया। इन्होंने यथा समय चित्र खींचकर परीक्षा द्वारा देखा कि, खाली आंखोंसे दीखनेवाली शिखाओंके सिवा, और भी कितनी ही क्षीण शिखाओंका स्पष्ट चित्र, चित्रमें अंकित हो गया है। इससे प्रत्यक्ष मालूम होता है कि, फोटोग्राफ़ी केमरे की दृष्टि-शक्ति मनुष्योंकी दृष्टि-शक्तिसे कितनी तेज़ है। वैज्ञानिकोंने यह बात स्पष्ट कर दिखाई है। और केवल इस चित्र की परीक्षा करके उन्होंने यह भी जान लिया कि लाल, शिखाएं चन्द्रमासे नहीं; सूर्यसे ही निकलती हैं। इसके बाद बहुतसे पूर्णग्रास

सूर्यग्रहण हुए, और प्रत्येक ग्रहणकी सैकड़ों तस्वीरें उतार गईं। इन सब चित्रोंकी परीक्षासे सूर्यके आकाशमंडल औ उसकी प्राकृतिक अवस्थाके सम्बन्धमें, जो नये २ तत्व आविष्कृ हुए, उनका अन्य उपायसे आविष्कार करना किसी प्रका संभव नहीं था।

सौर तत्वके आविष्कारमें फोटोग्राफ़ी की जितनी सहायत मिली है, उतनी ग्रह-तत्त्वके निरूपणमें नहीं मिली। हां फोटोग्राफी के चित्रमें इतनी कमी अवश्य रह जाती है कि, पासके ग्रहजातीय नक्षत्रोंके ऊपरका दिखाव उसमें अच्छी तरह अंकित नहीं होता। इसके लिये अच्छी दूरबीनसे ग्रहबिम्बका पता लगाकर साधारण-तौरपर उनका चित्र खींचने की रीति आज भी प्रचलित है। परन्तु क्रमशः फोटोग्राफ़ीकी जो उन्नति हो रही है, उससे आशा की जाती है कि, ग्रहोंका साफ़ चित्र खींचने का उपाय भी शीघ्र ही निकल आयगा।

जिस दिन ज्योतिषकी खोजमें फोटोग्राफ़ीका व्यवहार आरंभ हुआ, उसी दिन ज्योतिषीलोग समझ गये थे कि, नक्षत्रोंकी खोज में इससे एक प्रधान सहायता मिलेगी। यह अब उनका अनुमान बिलकुल सत्य हो गया है। इसके पहले ज्योतिषियोंके पास कोई अच्छा नाक्षत्रिक मानचित्र नहीं था और खाली आंखोंसे, आकाश में प्रायः छः हज़ार नक्षत्र दिखाई देते थे। इन नक्षत्रोंका मुक़ाम स्थिर करके उसे मानचित्र में ज्योंका त्यों दिखलाना सहज काम नहीं था; और इसीलिये हाथके अंकित किये हुए प्राचीन मान-

चित्रमें बहुत सी भूलें रह जाती थीं। परन्तु अब फोटोग्राफ़ीकी सहायतासे आकाशका चित्र अंकित करना बहुत सहज हो गया है। फ्रांसके दो ज्योतिषियों ने नक्षत्र-खचित सारे आकाशका चित्र बनाना आरंभ किया है; और उनको, कई देशोंके ज्योतिषी सहायता भी दे रहे हैं। आशा है, कार्य समाप्त होने पर मान-चित्र एक अपूर्व सामग्री हो जावेगी।

इसके सिवा, परिवर्तनशील नक्षत्रों ( Variable Stars ) के आविष्कारमें फोटोग्राफ़ीकी बहुत सहायता पाई गई है। इस श्रेणीके नक्षत्रोंकी ज्योति सब समयमें एकसी नहीं रहती। एक एक निर्दिष्ट समयकी समाप्तिमें इनकी उज्ज्वलता साफ़ कम हो जाती है। फोटोग्राफ़ीके प्रचलित होनेके पहले ज्योतिषकी खोजमें, ज्योतिषी लोग केवल थोड़ेसे परिवर्तनशील ताराओंसे ही परिचित थे। पर, अब एकही नक्षत्र-पुंजके कई समयके चित्रकी तुलना करके सैकड़ों नक्षत्र परिवर्तनशील देखे जाते हैं। अमेरिकाके हार्वर्ड विश्वविद्यालयके जगद्विख्यात ज्योतिषी मि० पिकारिंग साहबने थोड़े ही दिनोंमें, सौसे अधिक अपरिवर्तन-शील नक्षत्रोंका आविष्कार किया है।

नूतन नक्षत्रोंका आकस्मिक आविर्भाव और तिरोभाव आज कल ज्योतिष की एक सुलभ घटना समझी जाती है। प्राचीन ज्योतिषियोंने केवल दो नक्षत्रोंमें आकस्मिक प्रकाशको प्रत्यक्ष किया था। परन्तु नक्षत्र मण्डलीके छाया चित्र लेनेकी पद्धति प्रचलित होनेके बादसे अब कोई भी नया नक्षत्र ज्योतिषियोंकी

दृष्टिकी आड़में नहीं रह सकता है । इस रीतिसे ज्योतिषी लोगों ने नक्षत्रोंके कई समयके कितने ही चित्र खींच कर बहुतसे नये नक्षत्रोंका पता लगा लिया है । १८९२ ई० की पहली फ़रवरीको प्रजापति (Aurigo) राशिमें अचानक एक उज्ज्वल नया नक्षत्र देखा गया था । ज्योतिषियोंने सोचा कि, शायद यह नक्षत्र दिनमें ही प्रज्वलित हो उठा है; पर दिसम्बर मासमें उक्त राशि का चित्र खींचा गया, तो खोज करनेसे उसमें भी यह नक्षत्र क्षीणाकारमें दिखाई दिया । इससे कहा गया था कि, जन्मके दो मास बाद यह नूतन नक्षत्र ज्योतिषियोंने ढूंढ़ लिया था। इस घटनाके बादसे ज्योतिषीलोग आकाशके सर्वांशमें दृष्टि रखने लगे हैं । इस लिये नये नक्षत्रोंका छिपा रहना अब किसी प्रकार सम्भव नहीं है ।

कई प्रकारके नक्षत्रोंमें से दो जातिके नक्षत्रोंकी (Double stars) गतिविधि लेकर ज्योतिषी लोग प्रायः आलोचना किया करते हैं । ये नक्षत्र दो अवस्थाओंमें रह कर और कभीर तीन चार एक साथ रह कर अपने साधारण भारकेन्द्र (Centre of gravity) के चारों ओर घूमा करते हैं । प्राचीन ज्योतिषी केवल थोड़ेसे युगल नक्षत्रोंका पता जानते थे ; पर फोटोग्राफीके चित्रकी परीक्षा करने से अब युगल नक्षत्रोंकी संख्या प्रायः दो हज़ार होगई है, और इसी उपायसे इनकी अनेक गतिका परिमाण भी निर्धारित हो गया है । जिन युगल नक्षत्रोंका प्रकाश अत्यन्त निकट होता है, उनकी युग्मता समझ लेना बड़ा

कठिन काम है। जैसे साधारण युगल नक्षत्रकी ओर दृष्टि डालने से हम खाली आंखोंसे उसको अकेले नक्षत्र की तरह देखते हैं, उसी प्रकार बड़ी दूरबीनसे खोज करने पर बहुत पास की जोड़ियोंको एक एक नक्षत्र समझनेका भ्रम हो जाता है। उस समय ऐसा मालूम होता है, मानो दो नक्षत्रोंकी जोड़ी एक ही नक्षत्र है। पर अब फोटोग्राफ़ीके चित्रों द्वारा इस श्रेणीके बहुतसे नक्षत्रोंकी जोड़ीका परिचय पाया गया है। रश्मि-निर्वाचन यन्त्र (spectroscope) से इन नक्षत्रोंकी जो रंगीली रेखायें (spectrum) उत्पन्न होती हैं, उनका चित्र खींचनेसे, फोटोग्राफ़ीके कांचमें दो पूरी रेखायें अलग २ अङ्कित हो जाती हैं। इस लिये मानना पड़ेगा कि नक्षत्रोंको दूर्बीनसे अकेले देखने पर भी, वास्तवमें वे अकेले नहीं हैं। यह बात रंगीली रेखाओंका चित्र देखकर भली भांति समझमें आ जाती है।

निहारिकापुंज (Nebula) से बहुत पुराने ज्योतिषी भी खूब परिचित थे। दो हज़ार वर्ष पहलेके ज्योतिषियोंने ऐन्ड्रोमिडा (Andromeda) और मृगशिरा राशिके दो बड़े निहारिका को अपनी आंखोंसे देख लिया था; और उस समयके पण्डितोंने दूर्बीनसे इनकी जांच भी कर ली थी, पर कोई पण्डित उनकी प्रति मूर्त्ति अङ्कित नहीं कर सका। अब फोटोग्राफ़ीकी सहायतासे इन दोनों निहारिकाओंकी सैकड़ों तस्वीरें अङ्कित हो जाती हैं। इसके सिवा, आकाशके अनेक अंशोंका चित्र से इतने विचित्र आकारके निहारिकाका पता मिलता है

जिनकी संख्या गिननेमे नही आ सकती। जो निहारिकायें बड़ी दूर्बीन से भी नहीं देखी जाती थी, उनका चित्र अब फोटोग्राफ़ी के काच पर सहज ही में आ जाता है।

धूमकेतु की उच्छृंखलता बहुत प्रसिद्ध है, इसलिये कुछ वर्षों पहले ज्योतिषी लोगोको स्वप्नमें भी ख्याल नही हुआ था कि, धूमकेतु सरीखा नक्षत्र फोटोग्राफ़ीके चित्रमें आकर अपना परिचय दे देगा। सबसे पहले सन् १८९२ ई० मे अध्यापक बार्नार्ड ने फोटोग्राफ़ीका चित्र देखकर एक धूमकेतुका आविष्कार किया। पर, दूर्बीनसे इसका पता नहीं मिला, केवल चित्रदेखकर ही उस के आकार-प्रकारकी गति विधि निकाली गयी थी। इस घटनाके बाद सैकड़ों धूमकेतुओंके चित्र उठाये गये और उनकी विचित्रतायें देखी गयीं। सूर्यके पाससे लगाकर उनकी पूंछ आदि किस प्रकार विचित्र रूप धारण करने लग जाती हैं। यह बात एक ही धूमकेतुके अनेक समयके चित्रमें साफ़ दिखाई देती है।

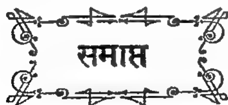
अनन्त नक्षत्र-लोककी बात छोडकर अब इसकी आलोचना करना ठीक होगा कि, हमारे और जगत्की क्षुद्र परिधिके भीतर फोटोग्राफी क्या काम करती है। हम पहले ही कह चुके हैं कि ग्रह-तत्वकी खोजमें फोटोग्राफ़ीने, वैज्ञानिकोंको विशेष सहायता नहीं दी है। पर, उपग्रह तत्वकी आलोचना करनेमें यह बात नहीं चलती। गत थोडे ही वर्षों में जो कितने ही उपग्रहोंका आविष्कार हो गया, उन सबका पता लगाने में ज्योतिषियों ने प्रायः फोटोग्राफ़ी की सहायता ली है।

जैसे हमारी पृथ्वी के चारों तरफ़ केवल एक चन्द्र घूमता है, उसी प्रकार दूरबीन से देखने पर शनिग्रह के चारों तरफ़ आठ चन्द्र घूमते दिखाई देते हैं; इसलिये शनि के उपग्रह की संख्या अब तक आठही स्थिर थी। पर, गत १८६८ ई०में मार्किन ज्योतिषी मि० पिकरिङ्ग साहब ने शनि के पास वाले आकाश के चित्र में अचानक एक नये नक्षत्र का पता लगाया। इस नक्षत्रका बार २ चित्र उठा कर परीक्षा करनेसे, इसके प्रत्येक चित्र में स्पष्ट नक्षत्र दिखाई दिया और वह ऐसा मालूम हुआ, मानो यह धीरे २ अपना स्थान बदल रहा है। इस प्रकार नक्षत्र को निकालकर अध्यापक पिकारिङ्ग और बार्नार्डने उस नये नक्षत्रको शनिका ही एक उपग्रह स्थिर किया। इसके बाद, आज पांच वर्ष हुये, इन्हीं पिकारिङ्ग साहब ने फोटोग्राफ़ीसे परीक्षा करके और एक उपग्रहका पता लगाया है। अब केवल फोटो ग्राफीकी सहायतासे कुछ वर्षों पहलेका आठ उपग्रहों वाला शनि, दश चन्द्रवाला हो गया है।

इस समय ग्रहराज वृहस्पतिके चन्द्रकी संख्या भी फोटो-ग्राफ़ीकी सहायतासे बढ़ी है। गलिलियाके समयसे लगाकर अबतक इस ग्रहके चार चन्द्र माने जाते थे। परन्तु गत १८६२ई० में इसके पञ्चम ग्रहका आविष्कार हो गया था। इस घटनाके बाद, प्रायः दश वर्ष तक, वृहस्पति-परिवारमें कोई नये नक्षत्रका पता नहीं पाया गया। गत १६०४ और १६०५ ई० में पेरिन साहबने वृहस्पतिके नक्षत्रकी परीक्षा करके बता दिया कि, इसमें और भी दो उपग्रहोंका अस्तित्व मौजूद है। हाल ही में

अंगरेज़ ज्योतिषी मि० मेलाट साहबने ग्रीनविच् मानमन्दिरके चित्र खींच कर बृहस्पतिके एक औरउपग्रहका आविष्कार किया। इस लिये कहा जा सकता है कि, केवल एक फोटोग्राफ़ीके द्वारा बृहस्पतिके उपग्रहोंकी संख्या बढ़तेर अब आठ हो गई है।

खुली आंखोंसे प्रकृतिकी तरफ़ देखने पर, उसमें जगदीश्वरकी अपार महिमाका परिचय खूब मिलता है। उसके विषयमें सोच नेसे हमारे आश्चर्यका पारावार नहीं रहता। इधर, ज्योतिषीलोग नक्षत्रोंका स्थल ज्ञान जानकर निश्चित हो बैठे थे। ऐसे समय फोटोग्राफ़ीके केमरेने उनको एक दम हतबुद्धि कर दिया। विज्ञानी लोग चकित हो गये, कि एकाएक फोटोग्राफ़ीके केमरेने कितना अद्भुत काम कर दिखाया है। विज्ञानी लोग ज्योंर गवेषणा करते जाते हैं, त्योंर उनको प्रकृतिके कितने ही रहस्य मिलते जाते हैं। यह ईश्वरका आनन्दमय क्षेत्र है, इसमें अपनी शक्तिको लड़ाकर जो ईश्वरकी अद्भुतलीलाका मर्म ग्रहण नहीं करता, वह आंख रहते भी अन्धा है।





# सभाकी प्रकाशित पुस्तकें।

( जिनकी प्रशंसा प्रायः समस्त पत्रोंने मुक्तकंठसे की है )

## १ जयाजयन्त

मूल लेखक— गुजरातके प्रसिद्ध नाट्यकार पं० नान्हालाल दलपतराम कवि। अनुवादक—प्रतिभाशाली कवि पं० गिरधर-शर्माजी नवरत्न राजगुरु झालावाड़। सुन्दर छपाई, मूल्य १।) अंगरेज़ीके प्रसिद्ध कवि मि० *टेनिसन* के टक्करका यह अद्भुतनाटक गुजरातमें इतना प्रसिद्ध है कि सारी गुजराती जनता इसकी स्वर्गीय भावनाओं पर जी जानसे लट्टू है। कर्मनिष्ठा, आचार-निष्ठा, निःस्वार्थ प्रेम, नैष्ठिक ब्रह्मचर्य और आत्म-लग्नका इसमें ऐसा आदर्श और उच्च भावनाओंसे भरा खाका खींचा गया है कि कविकी अलौकिक काव्य-प्रतिभा, समुज्ज्वल भावपूर्ण कृति, वर्णनशैलीकी पटुता और कल्पना-कौशलके चमत्कार पर दाँतों तले अंगुली दबानी पड़ती है। यदि आपको जीवनका आनन्द लेना है, सद्भावोंका विकास करना है और साहित्यकी उन्नतिमें हाथ बंटाना है, तो इस पुस्तकको ख़रीद कर अवश्य पढ़िये।

२ *सवियाका इतिहास* :—लेखक, हिज़हाईनेस महाराणा सर श्री भवानीसिंहजी बहादुर झालावाड़-नरेश, पृष्ठ ७६, मूल्य ।≈)

३ पार्लमेन्ट :—हिन्दीमें इस विषयकी ऐसी पुस्तक अबतक नहीं छपी। प्रत्येक भारतवासीको पढ़कर ज्ञान प्राप्त करना चाहिये कई पत्रोंने खूब प्रशंसा की है। मूल्य ॥≈) सादीका। सजिल्दका १≈), पृष्ठ संख्या २५६।

४ स्त्री चरित्र संगठन :—यह भी अपने विषयकी अपूर्व ही पुस्तक है। मूल्य ॥) सादीका। सजिल्द ॥≈) पृष्ठ संख्या १११।

५ *शुश्रूषा* :—सुप्रसिद्ध डा० गोपाल रामचन्द्र तांबे एम०ए, बी० एस० सी० एल० एम० एन्ड०एस० सिविल सर्जन नरसिंहगढ़की अपूर्व पुस्तकका अनुवाद, पृष्ठ संख्या २८२, मू० १)

६ *कठिनाईमें विद्याभ्यास* :— अपूर्व पुस्तक है, विद्यार्थियोंके ख़ास कामकी है। २००० प्रतियोंमें थोड़ीसी बची हैं, सजिल्द ॥≈), सादीका ॥), पृष्ठ संख्या १३१।

७ *अर्थशास्त्र* :—अर्थशास्त्रके सिद्धान्त आदि बड़ी ख़ूबीसे इसमें समझाये हैं, अजमेरके राजकुमार कालेजमें यह पुस्तक पढ़ाई जाती है। मूल्य १।)

८ *पंचस्तुति* :—हिन्दू देवोंकी स्तुति मू० ।)

विशेष हाल जाननेको हमारा बड़ा सूची पत्र मंगाइये।

९ *सरस्वती चन्द्र* :-जिस उपन्याससम्राट् को प्रकाशित करनेका विचार करते २ बड़े २ प्रकाशक रह गये और जिसको हिन्दी में देखने के लिये हिन्दी जनता वर्षों से तड़प रही है, उसी बृहत् ग्रन्थ का सम्पादन सभा के द्वारा हो रहा है। पुस्तक प्रेस में दे दी गई है। अनुवादक हैं—जबलपुर के वकील पं० दयाशंकर जी झा बी० ए० एल-एल बी०और झालावाड़ के राजगुरू प्रतिभाशाली कवि पं० गिरधर शर्मा जी नवरत्न। यह पुस्तक भी हिन्दीमें अपूर्व ही होगी और हिन्दी साहित्यके एक बड़े भारी रिक्त अंशकी पूर्ति करेगी।

१० *सुधारणा और प्रगति* :—मराठीकी प्रसिद्ध पुस्तकका संमात्त अनुवाद। अनु० पं० सूरजमल जी जैन। पुस्तक लिखी जा चुकी। शीघ्र ही प्रेसमें जाने वाली है। यह भी हिन्दीमें अपने ढंगकी निराली पुस्तक होगी।

११ *नीति प्रवेश* :—मराठीसे लिखा जा रहा है, शीघ्र ही पूरा होगा। नीति विषयकी हिन्दीमें एक ही पुस्तक होगी!

अभीसे ग्राहक श्रेणीमें नाम लिखानेवालोंको डा० म० माफ़।

पता—श्रीराजपूतानाहिन्दी साहित्य सभा

झालरापाटन शहर।


महावीर प्रसाद पोद्दार द्वारा
मुद्रित
वणिक प्रेस
मिरजापुर स्ट्रीट
कलकत्ता